150 YEARS OF CELEBRATING THE MAHATMA

देवास की सांस्कृतिक परंपरा

जीवनसिंह ठाकुर

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
(संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार का स्वायत्तशासी संस्थान)

देवास की सांस्कृतिक परंपरा

जीवन सिंह ठाकुर

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
नई दिल्ली

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
15ए, सेक्टर-7, द्वारका, नई दिल्ली-110075
द्वारा प्रकाशित

मूल्य : ₹ 180/-

प्रथम संस्करण : 2018

ISBN : 978-81-937829-2-7

© सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
आवरण : जैन मूर्ति-गंधर्वपुरी, जिला देवास (मध्य प्रदेश, भारत)

इस प्रकाशन में प्रस्तुत मत या विचार मात्र लेखक के हैं और वे सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र, नई दिल्ली के विचार या मत को उद्घाटित करें, यह आवश्यक नहीं।

'शहरों की अनकही दास्ताँ' पुस्तक-शृंखला के बारे में

भारत राष्ट्रीयता के साथ स्थानीय संस्कृतियों से संपन्न देश है। विभिन्न क्षेत्रों, नगरों की विशेषताएं इस देश को महत्त्वपूर्ण बनाती हैं। ये मात्र भौगोलिकता तक सीमित नहीं। इनमें रुचियों के विभिन्न पहलू देखे जा सकते हैं, जैसे वहां की वास्तुकला, धर्म, लोकगीत, वेशभूषा, भाषा, प्रकृति, पर्यावरण आदि। कई बार ये आपस में जुड़ते हैं तो कई बार सीमाओं का अतिक्रमण भी करते हैं। स्थानीयता के बावजूद उनमें ऐसे तत्त्व होते हैं जो भारतीयता के सहज आधार बनते हैं। यदि गांव सांस्कृतिक एकरूपता के प्रतीक हैं तो शहर सांस्कृतिक विविधता के प्रतीक। ये एक तरह से हमारी ऐतिहासिक/सांस्कृतिक धरोहर हैं।

संस्कृति मंत्रालय व सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र की संयुक्त अवधारणात्मक फलश्रुति हैं - इस शृंखला के तहत विभिन्न लघु नगरों/नगरों पर प्रकाशित होने वाली पुस्तकें। हमने पाया कि इन लघु नगरों/कस्बों/नगरों की श्रेष्ठ सांस्कृतिक विरासत को पुस्तक-वैचारिकी के रूप में सबके सामने तथ्यपरक ढंग से प्रस्तुत किया जाए ताकि वहां का सांस्कृतिक/शैक्षिक व अन्य विविध वैभव उजागार हो सके। इस माध्यम से न केवल उस लघु नगर/नगर के लोग अपनी सांस्कृतिक आभा से परिचित हो सकेंगे वरन् वे लोग भी जो ठीक से उन शहरों की संस्कृतियों से रूबरू नहीं हो पाए हैं उनको जान सकेंगे।

आज के समय में तीव्र सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन शहरी जीवन की विशेषता बनते गए हैं तथा पारंपरिक व शाश्वत महत्त्व पृष्ठभूमि में चले गए हैं। हमारी कोशिश है कि इन दोनों धाराओं को इन पुस्तकों में समाहित करते हुए हम परिपूर्णता का प्रयत्न करें। शहरी जीवन के लाभ ने मानदण्डों, विचार-सरणियों और व्यवहार पैटर्नों के संबंध में परिवर्तन किए हैं किंतु पारंपरिक प्रसंगों, लोकगीतों, स्थानीय जीवन की प्रत्याशाओं के बगैर इनको नए रूप में पहचाना नहीं जा सकता। कई लघु नगर/नगर/वृहत् ग्राम भारत की आज़ादी के आंदोलन की पृष्ठभूमि में रहे हैं तथा कई कलाओं, संस्कृतियों को विन्यस्त करने की दिशा में अग्रणी। कई ने स्थानीयता के अलावा भारतीय जीवन के संस्कार निर्मित किए हैं तो कइयों ने हमारी आज की दृष्टियाँ निर्मित की हैं।

इन विशिष्ट लघु नगरों/नगरों पर आधारित पुस्तक-शृंखला में 'देवास की सांस्कृतिक परंपरा' पुस्तक आपको सौंपते हुए मुझे हर्ष है। मुझे आशा व विश्वास है कि यह पुस्तक सिर्फ़ शहर की गाथा न होकर संस्कृति, जिजीविषा, नवाचार, परंपरा, जिज्ञासा, समझ व नए समय को दर्शाती जीवन-दृष्टि की वाहक के रूप में पाठकों के बीच आदर का विषय बनेगी।

गिरीश चंद्र जोशी
निदेशक, सीसीआरटी

अनुक्रम

प्राक्कथन

1. देवास की भौगोलिक स्थिति 14
2. देवास की कुछ विशिष्ट पहचान, कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य 21
3. विरुद् गाथा 32
4. देवास तथा देवास ज़िले की प्रागैतिहासिकता 53
5. देवास की विशेषता 69
6. राघोगढ़ (देवास) के अमर शहीद दौलत सिंह राठौड़ 77
7. देवास ज़िले के हाटपीपलिया में स्वतंत्रता संग्राम 83
8. देवास की प्रकृति व संस्कृति 86
9. मालवी काव्य और कवि 99
10. स्वतंत्रता संग्राम 108

प्राक्कथन

अपने शहर, कस्बे या गाँव के बारे में लिखना ठीक ऐसा ही है जैसे अपनी धड़कनों को पढ़ना, इसे पढ़ते वक्त इसका एक–एक शब्द न जाने कितने प्यारे, अपनेपन से भरे अर्थों की पोटली खोलता है। इन अर्थों में अहसास की एक खूबसूरत दुनिया बसी रहती है। हम यह भी महसूस करते हैं कि ये चलने वाली हवाएँ – हमारे इसी दुनिया की है। सड़कें, पेड़, पक्षी इस दुनिया के परिचय के हिस्से हैं वर्ना इनके बिना खुद को ढूँढना कठिन हो जाए। वे मुहल्ले, वे लोग, उनकी हँसी, मुस्कुराहटें, प्राणवायु में धुली जीवनदाई शक्ति कैसा संचार करती है, कहना कठिन है। तालाबों, बागों, सुबह और शाम कुदरत की चित्रकारी, अनजानी बहती कविता और इन्हीं में ढल रही लंबी कहानी के हम पात्र बन जाते हैं। क्या हमें नहीं लगता कि किसी वृहद उपन्यास के हम पात्र हैं ? या कोई अध्याय हैं? यदि इसमें से निकल जाए तो उपन्यास लड़खड़ा जाएगा। ऐसा ही कुछ हर इंसान की जिंदगी में होता है। ये तमाम परिवेशगत अहसास, लगाव, स्मृतियाँ – व्यापक फलक पर देश या मुल्क को महसूस करने की ताव पैदा करती देती है।

देवास, मालवा क्षेत्र में पड़ता है–मध्य प्रदेश के उज्जैन संभाग का महत्त्वपूर्ण जिला। देवास राजनैतिक नक्शे में जो भी हो मेरे लिए वह एक ऐसा घर है, और उस घर में एक ऐसा कोना या हिस्सा है जहाँ मैं तमाम रिश्तों–नातों की ऊष्मा को अपने आस–पास पाता हूँ। अपने आपके परिचय से भर उठता हूँ। अपना शहर जो कस्बा ही है। बड़ा कस्बा कभी इतिहास की गुफाओं में गूँजता महसूस नहीं होता लेकिन अपना शहर समग्रता में जीते हुए हम जान ही नहीं पाते कि इसका अतीत क्या है, पुरातत्व क्या रहा होगा, इतिहास और संस्कृति क्या रही होगी! लोकपक्ष की समृद्ध परंपरा तो होगी ही ना।

देवास को गहराई से जीते हुए उसमें रचे–बसे होने से आत्मीय अहसास धड़कता है।

अपनेपन में रमे–रमे यह जिज्ञासा भी करवट लेती है कि आखिर ये देवास है क्या, इसका अस्तित्व कब और कैसे बना ? वैसे मैं विज्ञान का विद्यार्थी रहा हूँ। विज्ञान पढ़ाता रहा हूँ। इतिहास में रुचि रही। साहित्य

लिखता रहा। इस तरह तीन धाराओं का संगम मेरे अंदर उथल–पुथल मचाता रहा। 'संस्कृति और इतिहास' विषय नहीं हो सकते क्योंकि यह किसी भी समाज या व्यक्ति के वजूद के हिस्से हैं। इतिहास – संस्कृति की जड़ों से सभ्यता और सभ्य समाज के फूल खिलते हैं। जब से इन्हें विषयों के रूप में देखा जाने लगा। कठिनाइयाँ पैदा होने लगीं।

आज चतुर्दिक बेचैनी के पीछे संस्कृति से अपरिचय, भाषा से दूरी और इतिहास से कटना है। इससे आपसी अपरिचय का बोध भी बढ़ रहा है। शिक्षक होने के नाते एक जवाबदारी महसूस करता रहा हूँ कि बच्चों में, युवाओं में सांस्कृतिक समझ और इतिहास बोध हो, वे अपनी भाषा के साहित्य को समझें। साहित्य इंसान की जिंदगी को भरा–पूरा बनाता चलता है। कुछ इसी भाव से, इन्हीं भावना और विचारों के साथ देवास को जानने, समझने का प्रयास करता रहा।

जब अपने देवास के इतिहास, संस्कृति और लोकपक्ष के दरवाजे पर दस्तक दी तो देवास महज मेरा घर ही नहीं, वृहत्तर सांस्कृतिक दुनिया का वृहत्तर परिप्रेक्ष्य जैसा खुल गया। ओह देवास! खूबसूरत–प्यारा–देवास।

बचपन की यादें और माँ की 'बारता'

यादों में माँ न हो तो शायद कुछ नहीं बचता। एक बड़ा शून्य और भटकाव घर कर रह जाता है। मालवा की लोक संस्कृति और वाचिक परंपरा समृद्ध रही है। इस परंपरा में दादी, नानी, मौसी, माँ की सशक्त उपस्थिति रही है। देवास नगर से लेकर जिले की तमाम तहसीलें, विकास खंड, पंचायतें और गाँव समग्र रूप से एकात्मकता के साथ लोक सांस्कृतिक पक्ष से जुड़े रहे हैं।

शाम की भागदौड़, खेलकूद, फिर विद्यालय द्वारा दिया गृहकार्य करने के बाद जो सबसे बड़ा आकर्षण था – और अभी भी है चाहे वो अन्य कारणों से कम हो गया हो–सोने के पहले माँ से या दादी से 'बारता' सुनना। ये 'बारता' इतिहास, रिश्ते, समाज, लोक, जीवन मूल्यों की खान है। जिस सरल और तरल तरीके की आत्मीयता में माँ बारता (कहानी) कहती है वह अनोखा है–जिज्ञासा और उत्कंठा से भरा। बारता बच्चों में स्वाभिमान, सदाचार, कर्त्तव्य निष्ठा, सौहार्द के शाश्वत मूल्यों को मन मस्तिष्क में प्रतिष्ठित करती है। देवास का परिवेश 'बारता' के दिव्य मूल्यों से भरा आँगन है।

माँ की बारता मालवी, निमाणी या सोंधवाड़ी, रजवाड़ी मालवी से शुरू होती, यह शुरुआत भाषा की सीमा से परे उसे मूल कथ्य और मूल्यों के केंद्र तक ले जाती है। भारत का ऐसा कौन सा संत, कवि, कथा और घटनाएँ हैं जो मालवी की 'बारता' [1] में न समाया हो। मालवा की बारता, घर से चल कर व्यापक भारतीय परिवेश में सुगंध की मानिंद फैलती है। उसी तरह भारत की सुगंध घर–घर में समा जाती है। इन बारताओं की भूमि, उसका कथ्य, मानवीय जीवन मूल्य, देश को सुसंस्कृत करते हुए विश्वफलक पर अपनापन महसूस करता है।

हमारे उन अज्ञात पूर्वजों ने कैसे–कैसे साहित्य, संस्कृति के विश्वविद्यालय बनाए थे। जहाँ घर की माँ, पिता, श्रम–परिश्रम से भरे जीवन के स्त्री और पुरुष हमारे 'प्रोफेसर' थे। और आज हमारे वे विश्वविद्यालय और प्रोफेसर हमसे छिने जा रहे हैं। खैर, मेरी तथा मेरी तरह बारता सुनने वाले, इन कहानियों के वृक्षों पर चढ़ कर साहित्य, संस्कृति के आँगन में कब उतर गए पता ही नहीं चला। हाँ यह जरूर है कि साहित्य में उस माँ, उस दादी का 'इंफ्रास्ट्रक्टर' है जो साहित्य की सशक्त इमारत भी खड़ी करता है। विशाल मार्ग भी बनाता है।

कई बागों से भरे, दो तालाबों, कुएँ, बावड़ियों वाले देवास की ठंडक का क्या कहें। नीम के वृक्षों की बहुतायत के कारण मच्छरों का नामों निशान नहीं था। हालाँकि वो देवास अब नहीं रहा। हाँ उसके खँडहर बचे हुए हैं। यादों के महल आज भी है जो कई संभावनाओं को जगाए हुए है। ऊँचे पेड़ों को देखते हैं तो माँ की, बारता, याद आती है।

बारता की शुरुआत ऐसे होती। बहुत साल पहले की बात है। हम बहुत का अर्थ लगाते कि कितने बरस पहले जिस तरह बऽऽऽ हो तऽऽऽ कहते हुए लम्बा स्वर लेती थी तो समझ जाते कि ये वर्ष की गिनती से भी बहुत पहले की बात है। हाँ तो वह सुनाती, घने जंगल में एक मोटा और बहुत ऊँचा पेड़ था। खूब घना पेड़ उस पर एक चिड़ी और चिड़ा रहते थे। वे अपने बच्चों से बहुत प्यार करते। जब दाना–पानी की तलाश में जाते तो समझाते देखो सावधानी से रहना, घोंसले से बाहर मत निकलना, हम आएँगे तो पेड़ की सबसे ऊँची डाल पर ले चलेंगे, जहाँ से तुम्हें पूरा जंगल, पहाड़ और नदी दिखेगी। बच्चे मान जाते थे। बड़ा ही खुशहाल परिवार था। दिन गुजर रहे थे। एक दिन उस पेड़ के नीचे दो मुसाफिर आकर बैठ गए। शाम हो गई थी।

---

[1] बारता – कहानी

चिड़ा–चिड़ी देखने लगे, कुछ देर बाद वे पेड़ की छाया में लेट गए। रात घिरने लगी। अँधेरा होने लगा था। अँधेरे के साथ ठंड भी बढ़ रही थी। थके माँदे मुसाफिरों ने इधर–उधर देखा कहीं कोई खाने–पीने के लिए कुछ मिल जाए। एक तो अँधेरा फिर ठंड से वे ठिठुरने लगे। ऊपर से चिड़ा तथा चिड़ी देख रहे थे। चिड़े ने कहा बच्चों की माँ। अपने द्वार अतिथि आए हैं। वे थके हैं भूख से व्याकुल हैं, क्या करें कुछ समझ नहीं आता। चिड़ी ने कहा देखो अँधेरा है। रात गहराती जा रही है, पहले तो इन मेहमानों के लिए आग की व्यवस्था करो, चिड़े ने कहा–'हाँ यह ठीक है – मैं सबसे ऊँची डाली पर चढ़ कर देखता हूँ, यह आग कहाँ से मिल सकती है'।

चिड़े ने पेड़ की सबसे ऊँची डाल पर चढ़ कर चारों तरफ निगाहें डाली, दूर कोई अलाव जल रहा था। वह वापस अपने घोंसले में आया। चिड़ी से कहा तुम बच्चों का ध्यान रखना मैं मेहमानों के लिए आग लेकर आता हूँ। चिड़ा कह कर उड़ गया।

एक अलाव जल रहा था। बची–खुची लकड़ियाँ जल रही थी। चिड़ा नीचे आया किनारे पर एक पतली सी टहनी जल रही थी उसने किनारे से पकड़ा और उड़ गया। अपने वृक्ष के वह डाल पर आकर बैठा और नीचे दोनों कँपकँपाते मेहमानों के बीच जलती टहनी गिरा दी।

वे दोनों अजनबी चौंक गए। आश्चर्य से एक–दूसरे को देखा। झटपट आसपास से सूखे पत्ते, टहनियाँ बटोर कर जलती टहनी पर रख दिया। वहाँ अच्छा खासा अलाव जल उठा। दोनों मेहमान ठण्ड की ठिठुरन से राहत पा गए। शरीर में गर्मी आई तो भूख भड़क उठी। दोनों ने ऊपर देखते हुए कहा–'हे ईश्वर! तेरी कृपा की कोई सीमा नहीं देख तू ने न जाने कहाँ से हमारे पास आग भेज दी। भूख लगी है, कुछ मिल जाए तो यह रात कटे'। वे आग तापने लगे, ऊपर चिड़ा सुनता, देखता रहा। वह अपने घोंसले में आया। उसने चिड़ी को आग लाने और मेहमानों को राहत मिलने की बात कही तो चिड़ी खुश होकर बोली–'देखो ईश्वर ने हमारी लाज रख ली, अतिथि की सेवा हमसे हो सकी'।

चिड़ा अपनी पत्नी के संतोष भरे चेहरे को देखता रहा। वह बोला– 'प्रिये! तुमने ठीक कहा लेकिन भूख से वे बिलबिला रहे हैं। इस रात में खाना कहाँ मिलेगा?' दोनों गंभीर विचार में डूबे चिंता का हल खोजते रहे। कहीं कोई समाधान नज़र नहीं आ रहा था। चिड़े ने सोच विचार कर कहा–'हे प्रिये! अतिथि देवता का रूप होता है। इनकी सेवा हमारा कर्त्तव्य है। इनको भोजन

देना हमारा धर्म है। धर्म और कर्त्तव्य से हम विमुख नहीं हो सकते।' चिड़ी ने कहा–'तुम सही कहते हो'।

चिड़ा बोला–'प्रिये! तुम जानती हो, बच्चों तथा घर का आधार माँ होती है। माँ के बिना गृहस्थी की कल्पना नहीं की जा सकती। तुम बच्चों का ध्यान रखना। पालन–पोषण करना। मैं नीचे जल रहे अलाव में कूद जाता हूँ। वे मुझे भून कर खा कर अपनी भूख शांत कर लेंगे।' चिड़ी सन्न रह गई–'यह तुम क्या कह रहे हो? परिवार तथा पत्नी के लिए पिता ही महत्त्वपूर्ण है। फिर मैं आपकी पत्नी हूँ। आपके संकल्प और कर्तव्य मार्ग पर अपनी भूमिका निभाऊँ। आपके पहले मैं अलाव में गिरूँगी। नहीं ऐसा नहीं हो सकता, बच्चों को माँ से जुदा करने से बड़ा पाप दूसरा नहीं'।

वे आपस में बहस कर रहे थे। नीचे से अतिथियों की आवाज आ रही थी–'तूने आग दी। अब भूख को शांत करने का साधन कर, दो दिन के थके हैं, अन्न का दाना भी मुँह में नहीं गया है।'

यह सुन दोनों विचलित हो गए। चिड़े ने कहा–'हे प्रिये! मेरी भूमिका समझो, घर को तुम्हारी जरूरत ज्यादा है। फिर घर के बड़े होने का दायित्व निभाने दो'। चिड़े ने चिड़ी को गले लगाया। बच्चों के सर पे हाथ फेरा। और घोंसले से बाहर आया और अलाव में कूद गया। अतिथि चिल्ला उठे–'हे ईश्वर! तू कितना दयालु है, हमारी अर्ज सुन ली, कैसा मोटा ताजा पक्षी आया'। दोनों ने चिड़े को अच्छी तरह भूना और खाने लगे, खा कर, कहने लगे–भूख कुछ शांत हुई जान में जैसे जान आ गई लेकिन भूख अभी भी है। वे कहने लगे–'काश एक और पक्षी आ गिरे तो पेट भर जाए'। चिड़ी ने सोचा–'मेरे पति उनका भोजन बन गए लेकिन भूख नहीं मिटी। मेरा कर्तव्य है कि पति के मार्ग का अनुसरण करूँ, अपना दायित्व निभाऊँ'। उसने ऊपर देखते हुए कहा–'हे दुनिया के मालिक! जिनका कोई नहीं होता, उनका तू होता है। तेरे हवाले ये बच्चे हैं। इनको अपनी दया में रखना'। चिड़ी ने सोते हुए बच्चों को थपथपाया, प्यार किया, सर पर हाथ फेरा, उसने पलट कर ममता और करुणा से भरी आँखों से सोते हुए बच्चों को देखा और फिर घोंसले को। वह बाहर आई और कुछ पल आकाश में देखा और अलाव में जा गिरी। अतिथि चिल्ला उठे–'वाह क्या तकदीर है, ईश्वर की दया और कृपा की तो बात ही अलग है'। वे चिड़ी को भून कर खाने लगे। उनकी भूख मिट गई–'वाह रे मालिक, तूने मरने से बचा लिया। आग भी दी। भोजन भी दिया। तेरी कृपा बनी रहे'। वे ढलती रात और बढ़ती ठंड में अलाव के पास

लेट गए, फिर गहरी नींद में डूब गए। बची हुई लकड़ियों के साथ चिड़ा और चिड़ी की हड्डियाँ भी जल रही थी। धीमे–धीमे हवाएँ चल रही थी। पत्ते फड़फड़ाने लगे थे।

इस कहानी में जीवन–गृहस्थी, मूल्य, त्याग, धर्म, कर्तव्य और मूल्यों का जो अनमोल खजाना था, माँ ने हम बच्चों को सौंपा था। देवास के जीवन में उसके सामाजिक ताने–बाने में मूल्य सर्वाधिक मायने रखते हैं। मालवा का ऐसा कोई घर नहीं जहाँ 'बारता', 'कहानी', किस्से, भजन और कहावतें नहीं होतीं। ये कहानियाँ किसी भी क्षेत्र के सांस्कृतिक परिदृश्य की उसकी परंपरा की आधारशिला होती है।

देवास जहाँ जल, वृक्ष, हवाएँ अपने जीवनदायी आँचल फैलाए रहते हैं। वहीं पारिवारिक, सामाजिक जीवन के रिश्ते–नाते, सौहार्द, आदर–सम्मान का भी प्यारा–सा अपनापन बिखेरता है। मुस्कुराकर बात करना। रिश्तों को गर्माहट देता दिल के तमाम दरवाज़े, खिड़कियाँ खोल देता है।

ऐसे शहर या कस्बे पर लिखना कठिन होता है जो अपने अंदर धड़कता है – वह महसूस किया जाता है, वह बोला नहीं जाता और न शपथ–पत्र पर लिखा जाता है। इसीलिए 'संकोच', 'लिहाज', 'भावनाओं की कद्र' की त्रिवेणी है। संकोच 'मालवी संकोच' के रूप में भी प्रसिद्ध है। मालवा का संकोच बड़ा ही अजीब है। अपने बारे में, अपनी उपलब्धियों के बारे में बढ़–चढ़ कर कहने का जैसे रिवाज़ ही नहीं है। गहरी विनम्रता ने मालवा को उसके नगर, कस्बों, गाँवों को शांत और संतोषी भी बनाया है।

देवास जिले की भौगोलिक स्थिति देखें तो इसकी सीमा महान नर्मदा नदी बनाती है। क्षिप्रा, नर्मदा, कालिसिंध, जैसी बड़ी नदियाँ इसी जिले में बहती हैं। नदी को नदी नहीं 'मैया' कहा जाता है। मैया यानी माँ, जो पोषण करती है। पालती–पोसती है। अन्न जल देती है। प्रकृति को जीतने या उस पर कब्जा जमाने की वृत्ति से दूर प्रकृति को माँ मानने की 'मालवी' भावना कमोबेश संपूर्ण भारत में है। गंगा मैया, यमुना मैया है। यहाँ एक बात विशेष तौर पर कहना चाहूँगा। व्यापक फलक पर 'गंगा–यमुना' भक्ति तथा तीर्थों की नदियाँ है वहीं नर्मदा भी तीर्थों के साथ 'सिद्ध नदी' मानी जाती है। भक्तिभाव से जुड़ा मनुष्य–अंततः सिद्ध हो जाता है। अनेकानेक सिद्ध क्षेत्र 'नर्मदा मैया' के किनारे हैं। देवास जिले की खातेगाँव तहसील में नर्मदा किनारे उस नदी का नाभि क्षेत्र है। सिद्धेश्वर महादेव का अति सुंदर मंदिर, नेमावर गाँव में है। यह आम मान्यता है कि इसे पाण्डवों ने बनाया था। वैसे

भी इतिहासकारों, पुरातत्ववेत्ताओं की स्थापित मान्यता के अनुसार उत्तर भारत के सर्वाधिक सुंदर मंदिरों में इसको शुमार किया गया है। मंदिर निर्माण की एक शैली *'नेमावर'* (सिद्धेश्वर महादेव) शैली भी मानी जाती है।

संतों उनकी वाणियों, रचनाओं का लोकपक्ष–लोकगायकी अभिभूत करती है। नृसिंह मेहता, मीराबाई, नानक, कबीर, रामदेवजी, सिंगाजी, देवनारायण, दादू, नामदेव, तुकाराम, प्राणनाथ, इनकी वाणियों से नर्मदा–क्षिप्रा, कालिसिंध का देवास का मानस सराबोर है। ये संत कब कैसे जनमानस में समाते चले गए कोई नहीं जानता। एक अज्ञात सांस्कृतिक अंतःसलिला सी सरस्वती नदी बहती रहती है। दिखती नहीं, महसूस होती है। यह सरस्वती, वाणी की देवी, कब नदी बन गई कब यह वाणियों को लेकर जनमानस के विशाल समुद्र में अपनी मिठास, अपना सौंदर्य, अपनी भाषा, अपने इंसानी मूल्यों के रत्न सौंप गई पता ही नहीं चला।

देवास से गुजरने वाली, देवास से होकर उज्जैन जाने वाली क्षिप्रा पावन नदी है। कालिदास ने मेघ से कहा था, 'हे मेघ तुम्हारे रास्ते में चाहे उज्जैन न हो लेकिन जाना। जहाँ नीली नदी मिले वही उज्जैन है।' कालिदास का मेघ नीली नदी खोजता है। क्षिप्रा आकाश से नीली दिखती होगी। क्षिप्रा का कितना आकर्षण रहा होगा यह कालिदास द्वारा मेघ से बार–बार किया जाने वाला आग्रह बताता है। देवास को होने वाले गर्व में एक सुकून भरा गर्व 'क्षिप्रा' और 'नर्मदा' का है।

कहने को देवास के पास बहुत कुछ है। पूरा विक्रमादित्य और बेताल है। जीवंत विक्रम है। *बेताल पच्चीसी* का लोक में साहित्य है। *सिंहासन बत्तीसी* है। इतिहास सिकुड़ कर कितना करीब आ जाता है। उसका उदाहरण ये साहित्य है। सदियाँ सिमट कर माँ की बारताओं (लोक कथाओं) में कितनी प्रासंगिक कितनी आधुनिक हो उठती है। *बेताल पच्चीसी* और *सिंहासन बत्तीसी* के बीच दस शताब्दियों का अंतर है। पूरे हजार बरस का फासला है। ये फासला माताओं, दादियों, नानियों, बुजुर्गों के वाचिक आख्यान में पूरी दुनिया, पूरा युग खुलता चला जाता है। राजा विक्रमादित्य का लोक सेवक पक्ष जनप्रतिबद्धता वाला चरित्र, जनता के साथ, जनता के लिए, जनता का होकर रहने वाला व्यक्तित्व सामने आता है। बेताल सवाल करने वाला, सटीक टिप्पणी करने वाला 'जनवादी प्रतिपक्ष' पूरी रचनात्मकता से उभरता है।

आज का राजनैतिक परिदृश्य, जन प्रतिनिधियों की स्थिति, जनता, सरकार के संदर्भ में 'विक्रम–बेताल' कितने प्रासंगिक, कितने आधुनिक पुनर्पाठ पेश करते हैं। क्या लोक जीवन को नहीं देखा जाना चाहिए ? बड़ा सवाल है। देवास बारताओं, किस्सों की भूमि रही है। कोई मुझ से पूछे तो कहना चाहूँगा कि मेरे शिक्षक बनने, लेखक बनने में जो भूमि बनी उसमें बुजुर्गों की सुनाई कथाएँ, बारताओं, किस्सों कहानियों का योगदान रहा है। चीजों को देखने–समझाने की दृष्टि माताओं, दादियों, नानियों, मौसियों और बुजुर्गों से मिली। कितना आधुनिक तानाबाना है इस देवास का, इस मालवा अंचल का।

देवास के बारे में बातें खत्म नहीं होंगी लेकिन इसके ठोस इतिहास, पुरातत्त्व, पुरापाषाण काल, स्वतंत्रता संग्राम पर भी बात ज़रूरी है।

t hou fl g Bkd j

देवास की भौगोलिक स्थिति

देवास मध्य प्रदेश का एक प्रमुख जिला है। म.प्र. के पश्चिमी हिस्से में वह स्थित है और मालवा अंचल का एक भाग है। देवास जिला 22^0,17′, 27′′ उत्तरी अक्षांश से 23^0 19′, 20′′ पूर्वी देशांतर से 77^0 07′, 30′′ तक फैला है। जिले की अधिकतम लंबाई 150 किलोमीटर उत्तर से पश्चिम और दक्षिण से पूर्व की ओर है। चौड़ाई 65 कि.मी. है।

देवास जिले का कुल क्षेत्रफल 787.24 कि.मी. तथा समस्त जंगलों का क्षेत्र मिलाकर 7020 वर्ग कि.मी. में फैला है। समुद्र तल से 535 मीटर ऊँचा है। पर्वतमाला के अनुसार विंध्यांचल पर्वत माला का हिस्सा है। विंध्यांचल में औषधीय पौधे तथा वनस्पतियाँ पाई जाती हैं। इस सुरम्य पर्वत श्रृंखला देवास तथा अन्य जिले के हिस्सों में भी फैली है।

देवास नगर से 7 कि.मी. दूर नागदा ग्राम (यह अब देवास नगर निगम का वार्ड है) की पहाड़ी औषधीय पौधों तथा जड़ी–बूटियों का भंडार है। नागदा ग्राम सहित आसपास के क्षेत्र में औषधीय पौधों के अनेक जानकार तथा उनके उपयोग पर विस्तृत ज्ञान रखने वाले लोग मौजूद हैं।

देवास विंध्यांचल में स्थित होने से यहाँ सागौन का श्रेष्ठ वन क्षेत्र है। यह इमारती लकड़ियों में सर्वाधिक श्रेष्ठ माना जाता है। देवास जिले की बागली, कन्नौद, खातेगाँव तहसीलें सागौन के जंगलों से भरी पड़ी हैं। शानदार प्राकृतिक दृश्यों के कारण यह लुभाती है।

जहाँ तक नदियों का संबंध है नर्मदा, क्षिप्रा, कालिसिंध तो है ही इनकी सहायक नदियाँ छोटी कालिसिंध, लखुंदर, चंद्रकेशर, जामनेर, घोड़ा पछाड़, कनेरी, कनाड़ तथा लोदरी तथा नाग धम्मन आदि नदियाँ है। इन नदियों ने भू–जल स्तर को काफी हद तक बचाते हुए बड़ी नदियों के प्रवाह को बनाए रखा है।

स्वतंत्रता के पूर्व देवास

स्वतंत्रता के पूर्व देवास, पवार शासकों की रियासत थी। उसी तरह देवास की वर्तमान तहसीलें भी विभिन्न रियासतों के अधीन थी। बागली, सोनकच्छ, टोंक, हाटपीपलिया, गंधर्वपुरी आदि ग्वालियर के हिस्से थे।

कन्नौद, खातेगाँव, होल्कर (इंदौर) रियासत में पुंजापुरा, उदयनगर (तहसील बागली) धार की पवार रियासत में थी। इस तरह चार रियासती शासन के अधीन नर्मदा–क्षिप्रा का क्षेत्र था।

स्वतंत्रता के पश्चात् देवास

आज़ादी के बाद 20 जून 1948 को देवास जिले का गठन हुआ। इस तरह देवास को जिला मुख्यालय बनाया गया जो ए.बी. रोड पर स्थित है। इसी नगर के नाम पर जिले का भी नामकरण हुआ। अब देवास जिले में देवास, हाटपीपलिया, बागली, कन्नौद, खातेगाँव, टोंक, सोनकच्छ, उदयनगर, तहसीलें और विकास खण्ड हैं। ये सभी तहसीलें और विकास खंड अपनी–अपनी विशेषताओं के साथ विकासमान हैं।

'देवास' नाम का इतिहास

देवास नाम कैसे पड़ा। इसके बारे में भिन्न–भिन्न मत, किंवदंतियाँ तथा मान्यताएँ प्रचलित है। आमतौर से एक किस्सा यूँ कि कोई 'दिवासा' नाम के व्यापारी के नाम पर 'देवास' पड़ा है। 'किंतु जनश्रुतियों, किंवदंतियों, समसामयिक वर्णनों में इस क्षेत्र की ऐतिहासिकता का महत्त्व वर्णित है। देवास नगर के मध्य आगरा–मुंबई मार्ग पर स्थित टेकरी पर दक्षिणी भाग में देवी तुलजा भवानी एवं उत्तर भाग में चामुंडा माता की प्रतिमाएँ स्थापित होने से प्राचीनकाल में इस स्थान का नाम 'देवीदास' पड़ा जो कालांतर में 'देवास' में परिवर्तित हो गया। प्राचीन शिलालेखों में यह नगर 'देववास' के नाम से प्रसिद्ध है।' [1]

उज्जैन के प्रख्यात संस्कृतवेत्ता, इतिहासविद डॉ. भगवती लाल राजपुरोहित ने मुझे चर्चा के दौरान बताया था कि बहुत सारे देवों को 'देवासः' संस्कृत में संबोधित किया जाता है। देवास, 'देवी–देवताओं' का क्षेत्र होने से जन भाषा में देवास से विसर्ग (:) हट जाने से 'देवास' हो जाता है। 'देवीवास और देववास' से भी लोक भाषा में यह 'देवास' हो जाता है। यह स्वयं सिद्ध है कि देवी देवताओं के कारण 'देवास' का नामकरण हुआ है।

देवास में राष्ट्रीय इतिहास, पुरातत्व की कड़ियाँ कई कड़ियाँ हैं। बल्कि देवास व्यापक स्तर पर इतिहास और पुराकाल में अपनी रचनात्मक भूमिका भी रेखांकित करता है। 15वीं सदी (14वीं–15वीं सदी) की जैन मूर्तियों में 'देववास' शब्द आया है।

---

[1] युग युगीन देवास पृष्ठ 12 – डॉ तेजसिंह सैंधव, पुरातत्ववेत्ता डॉ. वी.एस. वाकणकर – के लेख।

देवास जिला सभ्यता, संस्कृति, लोक संस्कृति का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र रहा है। यहाँ के विभिन्न भागों में पुरा सामग्री तथा ऐतिहासिक प्रमाणों की शृंखला मिलती है। संस्कृति में लोक कला, लोक गायन, लोक आख्यानों, लोक मंचों ने मूल सांस्कृतिक परिदृश्य को जिंदा रखा है।

व्यापक रूप से किए गए सर्वे में तहसीलवार ग्रामों का अध्ययन किया गया है। अध्ययनों, सर्वे, किवदंतियों, पुरातात्विक सामग्री से भारतीय संस्कृति के अति महत्त्वपूर्ण क्षेत्र में देवास की गिनती होती है।

देवास, जिले की खातेगाँव तहसील में नेमावर, तमखान, कणा, नामनपुर, कोटखेड़ी, राजोर, चीचली ग्राम, पुरातात्विक एवं इतिहास की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण गाँव है। अनेकानेक पुरा सामग्री एतिहासिक घटनाओं, सामग्री से संपन्न है।

कन्नौद, जिला देवास का पानी गाँव, चंद्रकेशर, बिजवाड़, कांटाफोड़, जिनवानी, इतिहास की महत्त्वपूर्ण सामग्री से भरा–पूरा है।

बागली, तहसील जिला देवास बागली नगर के आस–पास पलासी, पुंजापुरा, कोटडे का क़िला (बरझाई) ओखलेश्वर, बोरखेड़ा, निमनपुर, पीपरी, पोलखाला, बोरपड़ाव, पोटला, बिसाली, कर्णीमाता, कर्णेश्वर, काटकूट, कर्णावद, पांडू तालाब, गुनेरा आदि गाँव चमत्कृत कर देने वाली संस्कृति से लैस विरासत के क्षेत्र के रूप में बेहद महत्त्वपूर्ण हैं। प्रख्यात पुरातत्ववेता स्व. वि. एस. वाकणकर ने इस क्षेत्र में वर्षों अध्ययन एवं सर्वे करके शोध लिखा है कि पुंजापुरा से नर्मदा किनारे तक (लगभग 30 कि.मी.) आदिम मानव से (पत्थर युग) ताम्र युग तथा आधुनिक काल तक के मानव विकास का प्रमाण भरे पड़े हैं। उनका बार–बार यह भी आग्रह रहा है कि इस क्षेत्र को 'नेचुरल गार्डन' के रूप में सुरक्षित कर देना चाहिए।

पलासीगाँव तथा पोटला गाँव के पास कावड़िया पहाड़ है जो एक जैसे एक तरह के कॉलम वाले पत्थरों के विशाल दर्शनीय पहाड़ हैं। इन पत्थरों को 'कॉलमनर बाक्साइट' कहा गया है। ये पहाड़ विश्व में अपने अनोखेपन के कारण प्रसिद्ध है। जियोलॉजी (भूशास्त्रियों) के अध्ययन क्षेत्र है।

सोनकच्छ तहसील

महत्त्वपूर्ण तहसील है 'सोनकच्छ' शब्द 'स्वर्ग कच्छ' का अपभ्रंश शब्द है। शब्द से ही इससे क्षेत्र की संपन्नता का पता चलता है। सोनकच्छ नगर प्रसिद्ध कालिसिंध नदी के किनारे बसा है। वैसे भी एक भरी–पूरी

जलराशि वाली नदी के किनारे का क्षेत्र समृद्ध होता ही है। वैसे फसल, व्यापार, बाजार, रोजगार, कृषि, शिक्षा के संदर्भ में सोनकच्छ आज भी संपन्न नगर है।

इसी तहसील में गंधर्वपुरी (पुराना नाम गंधावल), भौंरासा, झरनेश्वर, देव बड़ला, कचनारिया, पीपलरांवा, तालोद, अमयपुर, कोटड़ा, महू, पाताल गंगा जैसे प्रसिद्ध ऐतिहासिक गाँव है।

गंधर्वपुरी, सोनकच्छ से उत्तर दिशा में पंद्रह कि.मी. दूर बसा कस्बा है। आज भी वहाँ के प्राचीन गली, मकान, बसावट उसकी ऐतिहासिकता को सिद्ध करते हैं।

गंधर्वपुरी, प्रख्यात राजा विक्रमादित्य के पिता राजा गंधर्वसेन की राजधानी था। यहाँ का मूर्तिशिल्प, पुरासामग्री जैन–बौद्ध–मौर्यों का इतिहास कहती है, वहीं परमारकाल की भव्यता भी बयान करती है। यहाँ एक संग्रहालय बनाया गया है। जो हमें ईसापूर्व छठी शताब्दी से सोलहवीं सदी – ईसा पश्चात् तक का कालखंड सहज रूप से आँखों के सामने प्रकट हो जाती है। इस तरह गंधर्वपुरी ई.पू. 600 से 1600 ई.पश्चात् (A.D.) तक का यानी 22 सौ वर्षों का शानदार इतिहास समेटे हुए है।

मैं कई बार यहाँ आया हूँ। गौर से इसके गली–मुहल्ले, देखे हैं। यत्र–तत्र बिखरी पूरा सामग्री देखी है। मुझे हमेशा एक प्राचीन गंध का अहसास हुआ है। यहाँ के किस्से, कहानियों किंवदंतियों में गंधर्वसेन, विक्रमादित्य, ऋषि काल के शब्द सुनाई दिए हैं। शकों के भीषण हमलों का भी लोक कथाओं में जिक्र आता है।

लोक कथाओं ने शकों के द्वारा किए विनाश का इतिहास सँजोया है तो विक्रमादित्य के उदय के गौरव से मंडित आख्यान भी है। विक्रमादित्य –शकारि [1] विक्रमादित्य भी कहलाता है।

विक्रमादित्य के सिक्कों पर 'शकारि' दर्ज है। जो निश्चित ही हमलावर शकों को पराजित करने वाले विक्रमादित्य की हैं। 'विक्रमादित्य' भारतीय संस्कृति के साथ ही विश्व के अन्य देशों और वहाँ की सभ्यताओं में जितना लोकप्रिय तथा सम्मानित हुआ है–उतना अन्य कोई राजा नहीं हुआ।

ईसापूर्व की पहली सदी में विक्रमादित्य था–इसी के नाम से विक्रम संवत् प्रचलित है। भारतीय जनमानस में व्यापक रूप से 'संवत्' (विक्रम संवत्)

[1] शकारि – शकों को हराने वाला

ही प्रचलित है। तमाम तिथियों तथा कालगणना, तीज–त्यौहारों को तारीखों का आकलन विक्रम संवत् से ही होता है। यह विक्रमादित्य ईसा से 57 वर्ष पूर्व हुआ। इस समय विक्रम संवत् 2073 चल रहा है और ईस्वी सन् 2016 है। इस तरह 2073–2016 = 57 आता है।

विक्रमादित्य, ज्ञानवान, न्यायप्रिय, लोकसेवक, त्यागी, जनवादी शासक के रूप में प्रसिद्ध है। जन–जीवन में विक्रमादित्य आज भी जीवित है। बेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी, लोक साहित्य की अविराम बहती धारा में जीवंत है। 'विक्रमादित्य' के 'पराक्रमी होने के साथ' स्वच्छ छवि, उदात्त सच्चरित्र' की ऐसी मान्यता स्वीकृत हुई कि कालांतर के कई एक राजाओं, सम्राटों ने अपने नाम के साथ 'विक्रमादित्य' का विरुद् (उपाधि) लगाए।

जैसे चंद्रगुप्त प्रथम (319–20 ई.) ने चंद्रगुप्त विक्रमादित्य नाम धारण किया था। चंद्रगुप्त द्वितीय ने भी विक्रमादित्य की उपाधि धारण की। 1076 ई. में सोलंकी राजा ने विक्रमादित्य की उपाधि धारण की। उसके बाद बाबर के हमले के समय इब्राहिम लोदी के सेनापति 'हेमचंद्र' (जिसे मुगल इतिहासकार हेमू लिखता है) विदेशी हमले से भारत की रक्षा करते हुए 'विक्रमादित्य' का विरुद् धारण किया। वह इतिहास में सबसे अंतिम व्यक्ति था जिसने 'विक्रमादित्य' नाम अपने नाम के आगे लगाया था। राष्ट्र की रक्षा करते हुए उसने अपने शहादत दी। [1] हेमचंद्र ने अपनी निष्ठा से राष्ट्र रक्षा हेतु प्रतिरोध का नेतृत्व किया। लेकिन मुगल इतिहास में हेमचंद्र को खास महत्त्व नहीं दिया जाता।

इस किताब का लक्ष्य इतिहास का लेखन नहीं वरन सांस्कृतिक परिवेश को रेखांकित करना है। अपने नगर, अपने जिले के सामाजिक जीवन को महसूस कराना है और उसकी सामाजिक भूमिका को सामने लाना है। बात विक्रमादित्य की चल रही थी। विक्रम भारतीय इतिहास में साहित्य, कथा, बारताओं का नायक है। यहाँ एक बात जोर देकर कहना चाहूँगा कि 'साहित्य' किसी राजा या इतिहास में वर्णित व्यक्ति को यूँ ही अपना नायक नहीं बना लेता है। साहित्य अपनी कसौटी तय करता है। वर्षों–वर्षों उस पर मंथन करता है फिर वह 'नायक' स्वीकारता है। यह साहित्य ठेठ जनता के सामाजिक ताने बाने से विकसित होता है। उसकी निर्माणकारी शक्तियाँ और इंसानी मूल्यों से आता है। इसीलिए विक्रमादित्य की कहानियाँ ठेठ जनता से जुड़ी है। बेताल का रचनात्मक विचारक प्रतिपक्ष–जनप्रतिपक्ष के रूप में आता है।

[1] 1526, पानीपत का युद्ध।

बारता कहते सुनते वक्त हम बच्चे राजा की परेशानियों, परिस्थितियों, कठिनाइयों से जूझने तथा समाधान तक पहुँचते हुए उसी परिवेश, उन पात्रों में जा समाते थे, जो मूल्यों की आत्मा तक जाते हैं। जो सामाजिकता की आगामी धारा में या उसके सातत्य में परिष्कार करते चलती है। एक दुनिया है देवास की और रक्त में बसा और बहता हुआ मालवा।

टोंकखुर्द तहसील में इकलेरा माताजी, भूतेश्वर, जीवाजीगढ़ है।

देवास तहसील में बिलावली, बांगर, नागदा, नकलन, पालनगर, रूद्रवासा, मिर्जापुर, मेंडकी गाँव है। बिलावली, मेंडकी, नागदा अब देवास नगर निगम के वार्ड बना दिए गए हैं। पुरातत्ववेत्ताओं के अनुसार बिलावली और बांगर गाँव में हड़प्पा कालीन सामग्री मिलती है। साथ ही बिलावली प्रसिद्ध शिवमंदिर जिसे महाकालेश्वर मंदिर (उज्जैन की तर्ज पर) संबोधित किया जाता है।

देवास का नागदा ग्राम मौर्यकालीन गाँव है। इसके बारे में प्रसिद्ध था कि 'नगर नागदा' की प्राचीनता जगजाहिर है। जब बिंदुसार मौर्य के पुत्र अशोक उज्जयनी के गवर्नर (प्रांतपाल) बनाए गए थे तब नागदा में कई बार उनके आने के प्रमाण मिलते हैं। नागदा के पास से निकलने वाली नाग धम्मन नदी, क्षिप्रा की सहायक नदी ही थी। क्षिप्रा की चौड़ाई इतनी थी कि इसमें पालदार नौकाएँ चलती थी। ये नौकाएँ उज्जैन से चल कर नागधम्मन आकर नागदा के पास के ग्राम पालनगर में रुकती थी। पालनगर, नागदा का ही हिस्सा था। इतिहासकारों का सुस्पष्ट मत है कि पालदार नावें यहाँ आकर घाट से बाँधी जाती थी। इसलिए इसका नाम पालनगर पड़ा था।

नागदा ग्राम पहली ही नज़र में प्राचीन बस्ती का अहसास कराता है। पद्मिनी का मंदिर, प्राचीन बौद्ध कालीन शिल्प, मौर्य कालीन सिक्के, धातुकर्म, मोतियों के व्यापार के स्पष्ट प्रमाण मिलते हैं। यहाँ की पुरा सामग्री तथा इतिहास के दुर्लभ सामग्री यहाँ के कई संग्रहालयों की शोभा बढ़ा रहे हैं। नागदा, हम देवासवासियों को निरंतर गर्व मंडित करता रहता है। यह भी अहसास कराता है कि देवास राष्ट्रीय राजनीति, इतिहास, संस्कृति की धारा में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

मेंडकी गाँव भी अब देवास नगर निगम का एक वार्ड है। लेकिन यह अभी भी अपने मूल स्वरूप में विद्यमान है। यहाँ परमार काल का श्रेष्ठ मंदिर है। काले पत्थरों का शानदार मंदिर है। यहाँ की विशेषता यह है कि यहाँ प्राकृतिक मयूर विहार है। मोरों की छटा, उनका विहार, नाचते मोर मोहते हैं।

बिलावली गाँव भी मयूर विहार है। इसे 'पवार' राज्य के वक्त सुरक्षित रखते हुए विकसित किया गया था। 'मयूर विहार' आज भी बच्चों के लिए सभी के लिए आकर्षण का केंद्र है। मैं हमेशा बिलावली, मेंडकी, नागदा आता जाता रहा हूँ। घंटों यहाँ बैठा रहता था। मेरे मित्र भी आते थे। अकेले और समूह में लोग आते थे। यहाँ आना यानी देवास का होने जैसा भी रहा है। यह क्रम आज भी है। बिलावली का शिवरात्री मेला मध्य प्रदेश के प्रमुख मेलों में गिना जाने वाला मेला है।

देवास की कुछ विशिष्ट पहचान, कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य

देवास जिले की सीमा बनाने वाली और वहाँ से गुजरने वाली नर्मदा के तट पर शीशा पाया जाता था। इसी कारण प्राचीनकाल में कांसा बनाने का काम समाज में शुरू हुआ था। बागली तहसील के बोर पड़ाव ग्राम में तथा कन्नौद तहसील के कीटी गाँव में लोहकीट के विशाल प्रमाण पाए जाते हैं। [1]

खातेगाँव तहसील के 'तमखान' गाँव में तांबे के उत्पादन के प्रमाण मिलते हैं। यहाँ से तांबा बिलावली तथा कायथा [2] (उज्जैन) भेजा जाता था। चूँकि देवास का कॉपर युग – ताम्राश्मीय का गहरा संबंध होने से इस पर चर्चा करना जरूरी है। ताम्र युग में, वैदिक धर्म में यज्ञ पवित्र एवं आवश्यक विधान था। रूद्र तथा मातृ देवों की पूजा–अर्चना, मंदिरों में की जाती थी।

ताम्र युगीन सभ्यता मानव विकास की महत्त्वपूर्ण कड़ी थी। विकास की इस महत्त्वपूर्ण – यात्रा के पड़ाव से आगे विकास को गति मिली। देवास जिले के बिलावली, उज्जैन का कायथा, आजादनगर (इंदौर), दंगवाड़ा, शाजापुर का मक्सी इत्यादि स्थानों पर इस सभ्यता के स्पष्ट सूत्र और ठोस प्रमाण मिले हैं। कन्नौद तहसील का कीटी, बागली के गाँव बोर पड़ाव लौह उत्पादन की परिष्कृत प्रणाली के प्रमाण हैं।

देवास के ग्राम पीपरी के सीता मंदिर में जाएँ या कावड़िया पहाड़ पर, कोटड़े का किला देखें या नेमावर का भव्य सिद्धेश्वर महादेव मंदिर, गंधर्वपुरी हो या सतावास का किला, राघोगढ़ की गढ़ी हो या हाटपीपलिया की गढ़ी, देवास की चामुंडा टेकरी हो या नागदा ग्राम – संस्कृति के अनेकानेक आयामों से गुजर कर अपने आप को पाने जैसा लगता है। मानो अपार उर्जा का संचार हो रहा हो। अनेकानेक भौतिक अभाव जीवन में होते हैं, लेकिन इतिहास, संस्कृति के अहसास, उनकी प्रेरणा, अभावों और कमियों पर विजय पाना भी सिखाती है। यह वैयक्तिक सुकून के साथ समूह लोकगीत भावात्मक एकता का अनोखा संसार भी रचता है।

देवास में जहाँ संस्कृति के विभिन्न चरण मिलते हैं। वहीं इतिहास की अक्षुण्ण धारा के दर्शन भी होते हैं। देवास मालवा का महत्त्वपूर्ण जिला है।

---

[1] देवास जिले का प्रागैतिहास – डॉ वी.एस. वाकणकर।

[2] कायथा – उज्जैन जिले का महत्वपूर्ण गाँव है, जो प्रागैतिहास, पुरातत्त्व तथा इतिहास के संदर्भ में बेहद महत्त्वपूर्ण है।

और वह मालवी संस्कृति का अनिवार्य अध्याय भी है। इस अध्याय के बिना मालवा – मध्य प्रदेश की सांस्कृतिक किताब पूरी नहीं हो सकती।

देवास का लोक संसार जितना ताकतवर है उतना ही प्यारा भी। यह समग्र मालवा पर लागू होता है। कहानियों और 'बारता' के लोक अख्यानों ने भाषा, साहित्य के साथ इतिहास को भी सुरक्षित रखा है। दुर्भाग्य ही कहा जाएगा कि आधुनिक शिक्षा के वर्तमान दौर में साहित्य और इतिहास के इन महत्त्वपूर्ण स्रोतों को पढ़ाई का हिस्सा ही नहीं माना जाता। क्यों नहीं माना जाता? क्या हमारी सामाजिक दृष्टि का हरण हो गया है? कई सवाल मन में उठते हैं और गहरे अफसोस के साथ वहीं डूब जाते हैं।

इतिहास में दस शताब्दियों पहले की तरफ ज़रा सी निगाह भर डालें तो हमारी दृष्टि का क्षरण किन कारणों से है समझ में आ जाएगा। महान प्रतापी राजा भोज जो रचनाधर्मी, विचारक तथा श्रेष्ठ साहित्यकार था। राजा भोज ने कुल 55 वर्ष 7 माह और 3 दिन तक राज किया था। [1] विक्रमादित्य और बेताल की *बेताल पच्चीसी* से *सिंहासन बत्तीसी* (भोज का समय) तक का समय पूरे एक हजार वर्ष का है। ये दस शताब्दियों का समय भारतीय इतिहास का महत्त्वपूर्ण समय था। इन दस शताब्दियों में साहित्य की यात्रा समृद्ध होकर वैचारिक मूल्यों से मजबूत होने और ज्ञान का वृहत्तर सागर बन गई थी। राजा भोज के बाद (10–11वीं सदी ई.) का काल भारत पर आक्रमणों, लूट और विध्वंस का था। 11वीं सदी से 20वीं सदी तक की दस सदी में भारत क्या था और किस तरह का हो गया किसी से छुपा है क्या? माँ, बारता कहते हुए आखिर में यह जरूर पूछती थी कि तुम क्या समझे? हम जैसा समझते वैसा हम सभी बच्चे बताने लगते। ये भिन्न दृष्टिकोण या निष्कर्ष एक विमर्श भी बन जाता था। मैं अंदर ही अंदर एक फाँस लिए विचलित होता रहता। बात कुछ यूँ थी कि *सिंहासन बत्तीसी* की बत्तीसवीं पुतली कहानी कहती है और सिंहासन आकाश में उड़ जाता है।

मैं कुछ और बड़ा हुआ। साहित्य की किताबें हाथ में आई तो भाषा, कहानी, विचार, कल्पना की एक बड़ी दुनिया खुलने लगी। प्रेमचंद और रवींद्रनाथ ठाकुर की कहानियों के साथ ऐतिहासिक उपन्यास *मृगनयनी*, गोर्की की *माँ*, चेखव की कहानियाँ, रामधारी सिंह दिनकर का *संस्कृति के चार अध्याय*, हजारी प्रसाद द्विवेदी को *चारुचंद्रलेख*, मिलान कुंडेरा के उपन्यास से लेकर कमलेश्वर, राजेंद्र यादव, मोहन राकेश, धर्मवीर भारती, रधुवीर

[1] प्राचीन भारत का राजनैतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास पृष्ठ 680 युग युगीन देवास, पृष्ठ 39 डॉ. सैंधव।

सहाय, फिराक गोरखपुरी, जोश मलीहाबादी, निर्मल वर्मा, रामविलास शर्मा, मंटो तक की पढ़ा तो लगा कि दुनिया में कितना कुछ है।

घर में गांधीवादी साहित्य की विपुलता थी। आहिस्ता आहिस्ता वहाँ आचार्य नरेंद्र देव, जयप्रकाश नारायण, लोहिया, सुभाष और नेहरू भी आ विराजे थे। सरदार पटेल पर भी किताबें थीं। गोलवलकर के विचार से भी परिचित होने का मौका मिला। विवेकानंद का भरपूर सहित्य था और गांधी के *हरिजन* के अंक भी सुरक्षित थे, *नेशनल हेराल्ड* की प्रतियाँ भी थी। *जनता* भी आता था। घर में सभी विचारकों, लेखकों का साहित्य भरा पड़ा था। इन सभी ने मेरे अंदर विश्लेषण और निर्णयात्मकता के 'विवेक' को पैदा करने का मार्ग प्रशस्त किया।

इन सभी के बीच *बेताल पच्चीसी* और *सिंहासन बत्तीसी* दुबारा पढ़ा। माँ की कही कहानियों में सघन साम्य था। लेकिन माँ की बारताओं में व्यापक दृश्य, जीवंतता तो थी साथ ही विचार, धैर्य और जीवन की आस्था और उम्मीद के अंकुरण पैदा करती थी। 'छपी हुई किताब और बारताओं' ने साहित्य के संसार को बड़ा किया, और संघर्ष का माद्दा भी। माँ सिर्फ जननी ही नहीं। वह रक्त, मांस, आत्मा की निर्माता, भविष्य का इंसान, आगामी और वर्तमान समाज को गढ़ने वाली महान संस्था भी होती है। मैंने हमेशा तमाम माताओं को 'विश्वविद्यालय' से बड़ा पाया है।

सिंहासन बत्तीसी की बत्तीसवीं कहानी के समाप्त होते ही 'सिंहासन' उड़ जाता है। 'सिंहासन' उड़ने के वर्णन के साथ हम अपने इतिहास ज्ञान को साथ लाएँ, जरा सा मनन करें तो 10वीं सदी में भोज के बाद विदेशी हमलों (11वीं सदी) ने भारतीय संस्कृति, और सत्ता पर व्यापक प्रभाव डाला था। भारतीयों के हाथ से सत्ता हमलावरों के पास चली गईं बत्तीसवीं कथा का भी यही अभिप्राय है ऐसा मुझे लगता है। माँ कुछ अलग तरीके से कहा करती थी और वह ढलती रात में जब ढिबरी में तेल खत्म होने लगता तो वह बत्तीसवीं कहानी कह कर लंबी साँस लेती और कहती बेटा सिंहासन लेकर पुतलियाँ आकाश में उड़ गईं और हमारे सभी के दुख भरे दिन फिर शुरू हो गए। वाकई भारत की 10वीं सदी के बाद – हमलों ने सब कुछ बदल दिया था। इन कहानियों ने संस्कृति, साहित्य, परंपरा, विरासत के बीज आत्मा के आँगन में डाले थे। वे बीज नष्ट नहीं हुए – इन्हीं बीजों के अंकुरण ने बहुत कुछ बचाने की संभावनाओं को जीवित रखा है।

आमतौर से देवास जिले के गाँवों में वृद्ध, प्रौढ़ और महिलाएँ अपने पुत्रों, पुत्रियों, नाती, पोतियों को कहानियाँ जरूर सुनाती हैं। उसकी शुरुआत लगभग यूँ होती हैः एक थो बीर–बिकरमाजीत – एक विक्रमादित्य नाम का राजा था... विक्रमादित्य की ऐतिहासिकता पर भी निगाहें डालें। ईसा पूर्व की प्रथम शताब्दी (57 ई.पू.) से हजार बरस बाद के राजा भोज तक की भारतीय सांस्कृतिक यात्रा कई पड़ावों से गुजरते हुए गहरी सृजनात्मकता के साथ विकसित होती चलती है। इसे हम इतिहास के यथार्थ से साहित्य की कलात्मकता और ठोस सामाजिक विकास में भी देखते हैं।

महाराज भोज की ख्याति के प्रमाण उनके समय के विभिन्न अभिलेखों से मिलते हैं। जैसे बाँसवाड़ा अभिलेख संवत 1076–1020 ई., बेटमा अभिलेख 1076 से 1020 ई., उज्जैन अभिलेख 1078 से 1021 ई, तिलकवाड़ा ताम्रपत्र संवत 1103, सरस्वती अभिलेख संवत 1091–1033 ई, लंदन में देखने को मिलते हैं। (1)

रचनाधर्मी, प्रतापी राजा भोज, साहित्यकार, विचारक, लेखक के रूप में भारत के इतिहास, संस्कृति का श्रेष्ठ उदाहरण है। राजा भोज ने 55 वर्ष 7 माह और 3 दिन तक राज किया था। [1] शासन करने की यह कालावधि भारतीय राजाओं की रेखांकित करने वाली अवधि है।

महाराजा भोज ने अपने जीवन में मालवा के लोक जीवन में गहरी पैठ बनाईं अनेक रचनाओं, कहावतों, बारताओं का नायक, लोक ने उन्हें बनाया था।

संस्कृत जैसी पांडित्यपूर्ण भाषा में *सरस्वती कण्ठाभरण, समरांगण सूत्रधार, आयुर्वेद सर्वस्व शब्दानुशासन* जैसी रचनाओं के लेखक भोज ही थे।

लोक देवता (चित्र)

देवास के जन जीवन में लोक देवताओं का स्थान सर्वोपरी है। वैसे वट सावित्री, आंवला नवमी, दशामाता, हरियाली तीज, गणगौर ऐसे त्यौहारिक अवसर है जो माताओं, दादियों के साथ युवा या किशोर पीढ़ी का सामंजस्य बैठाता है। यह अवसर समूहगत भी है और व्यक्तिगत भी जब इन अवसरों पर कथाएँ – सुनाई जाती हैं। श्रद्धा, विश्वास आस्था की त्रिवेणी में किशोर पीढ़ी कथा कहने का लहजा सीखती है। और सबसे बड़ी बात यह है कि वनों, पेड़ों के प्रति लगाव, पर्यावरण के प्रति सजगता, सुरक्षा की भावना भी पैदा

[1] डॉ. सैंधव, पृष्ठ 39।

होती है। माताएँ इन पेड़ों में 'देवत्व' की उपस्थिति देखती हैं। किशोर पीढ़ी में पेड़ों के प्रति सखा भाव का विकास होता है। ये त्यौहार सामाजिक – प्राकृतिक, शिक्षण और जीवन मूल्यों की रक्षा, सुदृढ़ता और पालन करने का भाव जगाती है। देवास और उसकी तहसीलें एवं गाँव के साथ पूरा मालवा इस पर्यावरण श्रद्धा से भरापूरा है। लेकिन कथित, विकास ने पारिवारिक जीवन को अंसतुलित कर दिया है। जहाँ 'माँ–दादी–बुजुर्ग' जैसी जीवंत–प्रेरक–संस्थाएँ नगण्य होती जा रही हैं।

देवास के लोग, मालवा के बाशिंदे हरे भरे मालवा को सूखते और खत्म होते देख अपार दुख से भरे हैं। सूखती नदियों की कल–कल को सुनने–देखने के दिन अब खत्म से हो गए।

मालव धरती गहर गंभीर
डग डग रोटी–पग–पग नीर

यह कहावत मालवा के पर्यावरण और उसकी समृद्धि का सशक्त चित्र उपस्थित करती है। लोक देवताओं के प्रति श्रद्धा–विश्वास ने देवास के लोक जीवन को भरापूरा बनाया है। लोक देवता पूरी श्रद्धा, विश्वास, भक्ति के साथ पूजे जाते हैं।

इन देवताओं के नाम जन्म के समय वाले ही हैं। कालांतर में इनके गुणों, कार्यों, परोपकारी कामों के आधार पर जनता ने नाम रखे हैं। जो परंपरा में यात्रा करते हुए नैतिक तथा सामाजिक मान्यताओं से 'देवत्व' में स्थापित हुए। जहाँ तक पूजा, मन्नत, उत्सव, आरती, चढ़ावा, प्रसाद, वैदिक रीति–रिवाज यानी हिंदू सनातनी परंपरा का है। हाँ – इस परंपरा में कुछ स्थानीय विशेषताएँ ज़रुर जुड़ जाती रही हैं। उस क्षेत्र के फूल, फल, कपड़े को स्थानीय बोली के साथ खड़ी एवं सामान्य बोलचाल की हिंदी में भी प्रयोग होता है।

पाबूजी

लोक देवता पाबूजी, की पड़ की परंपरा देवास में है। 'पाबूजी' पशुओं के रक्षक देवता के रूप में पूजे जाते हैं। पशुओं के स्वास्थ्य, बीमारी, ठीक होने की इनसे प्रार्थना करते हुए मनता – मन्नत मानी जाती है। मन्नत पूरी होने पर 'पाबूजी' की पड़[1] रचाने के लिए 'भोपे' को आमंत्रित किया जाता है।

[1] 'पड़' : पाबूजी की गाथा।

यहाँ पेड़ की सांस्कृतिक विकास की भी चर्चा की जानी चाहिए '18–20 हाथ (सवा डेढ़ फ़ीट के बराबर हाथ) तथा ढाई–तीन हाथ चौड़े कपड़े पर पाबूजी के जीवन को लेकर रंग बिरंगे चित्रों में जो चरित्र–चित्रण किया हुआ मिलता है उसी को 'पाबूजी की पड़' कहते हैं' [2] – [3] 'पाबूजी की पड़' में नृत्य, वाद्ययंत्र, रावण हत्या, सारंगी, डफली के साथ गायन चलता है।

इस तरह 'पाबूजी की पड़' भक्ति, भावना, श्रद्धा के साथ चित्रांकन, वादन, गायन और भाषा का भी समन्वय स्थापित करती हैः सबसे बड़ी बात सांस्कृतिक लोक जीवन में यह सामाजिक सौहार्द, और व्यापक अर्थों में राष्ट्रीय सामाजिक जीवन मूल्यों को परिपुष्ट करता है।

पाबूजी की पड़ को शास्त्रीयता तथा दर्शन की दृष्टि से देखें तो नृत्य (शिव) गायन (सरस्वती) वादन (कृष्ण) स्त्री नृत्य (शक्ति – दुर्गा) का भी समन्वय दृष्टिगत होता है। देवास के जन जीवन में भी नृत्य, गीत, चित्रांकन, वादन की सशक्त परंपरा आज भी जीवित है।

पाबूजी की पड़ का अन्य महत्त्व

पड़ गाने वाले 'भोपे' सांस्कृतिक परंपरा को जीवित रखने वाले केंद्र है। पड़ वाचन कराने वाले भारत की सांस्कृतिक विरासत के रक्षक के रूप में सामने आते हैं। वे समर्पित गायक होते हैं।

'पाबूजी की पड़' चित्रित किए गए पर्दे को दीवार के सहारे दो किनारों से टाँक दिया जाता है ताकि चित्र सभी देख सकें, पड़ को टाँक कर गायन, अभिनय किया जाता है यह रातभर अविराम चलता है। लोग इसे पूरे मनोयोग से देखते सुनते हैं। यह गायन, नृत्य, सुकून के साथ आध्यात्मिक संतोष भी देता है।

'पाबूजी की पड़' कई गाँवों में है। देवास से 20 कि.मी. दक्षिण में इंदौर–नेमावर मार्ग पर [4] राघोगढ़ है। यहाँ के किले में 'पाबूजी' का ओटला (स्थान) है यहाँ पूजा होती है।

---

[2] 'पाबूजी की पड़' डॉ. महेन्द्र भानावत (म.प्र. आदिवासी लोककला परिषद भोपाल सन 2000), पृष्ठ 14–15

[3] पड़ को फड़ भी कहा गया है।

[4] राघोगढ़ का किला 1857 के महान शहीद ठा. दौलतसिंह राठौर का है।

लोक देवता 'रामदेव जी'

बचपन से ही देवास नगर में रामदेवजी के 'देवरे', स्थान (अस्थान) देखता रहा हूँ। वहाँ जाता रहा हूँ। देवास के समस्त गाँवों में लोक देवता रामदेवजी को मानने वाले हैं। समाज की सभी जातियाँ और वर्ग रामदेवजी को पूजते हैं, मन्नत मानते हैं। रामदेव जी को 'निशान' चढ़ाया जाता है। 'निशान' सफ़ेद ध्वज होता है जिसमें चाँद–सूरज बने होते हैं।

रामदेवजी के भजन की कई मंडलियाँ तथा लोग हैं जो तंबूरे, मजीरे, खड़ताल के साथ भजन गाते हैं। कई गाँवों में ग्रामीण, किसान तथा अन्य लोग एक जगह एकत्रित होकर भजन गाते हैं, वाद्य बजाते हैं। कई लोग रामदेवजी के नाम पर लाल कपड़े पर 'छाप' बना कर भ्रमण करते हुए सार्वजनिक स्थानों पर विशाल जन समुदाय के समक्ष भक्तिभाव से रामदेवजी के भजन को राग, लय और ताल से समाँ बाँध देते हैं।

वैसे रामदेवजी राजस्थान के प्रख्यात तँवर राजपूत राज घराने में पैदा हुए थे। राजस्थान में सर्वाधिक आस्था, विश्वास, श्रद्धा से रामदेवजी को पूजा और स्मरण किया जाता है। राजस्थान के अलावा रामदेवजी मालवा, (मध्य प्रदेश), गुजरात, निमाड़, उत्तर प्रदेश में भी सर्व जातियों में पूजे जाते हैं। हिंदुओं में 'रामदेवजी महाराज' तथा मुसलमानों में 'राम सा पीर' और 'रामदेव पीर' के नामों से संबोधित किया जाता है। उनका स्मरण, मन्नत मान करके श्रद्धा व्यक्त की जाती है।

'खम्मा–खम्मा, खम्मा म्हारा बाप जी पधारिया', 'खम्मा–खम्मा अजमाल जी रा कंवरा' जैसे छंद जनता के कंठ–कंठ में गूँजते रहते हैं। रामदेवजी के शिष्य, मेहाजी के पुत्र हरमूजी भी लोक देवता माने गए हैं। रामदेवजी के समाधि लेने के आठ दिन पश्चात् ही हरमू जी ने भी समाधि ले ली थी। इन्हें पीर के रूप में पूजा जाता है।

मेहाजी भी लोक देव के रूप में मान्य हैं। वीर योद्धा भी रहे। इन्हें *शकुन शास्त्र* का ज्ञाता माना जाता है। [1]

कभी–कभी मैं देवता के बारे में जानते, समझते और उसे 'जीते' हुए अभिभूत होता हूँ कि इस कस्बे ने इसकी तहसीलों और गाँवों ने अपने अंतर–निर्माण वृत्ति, साहित्य, संस्कृति, लोक संस्कृति, इतिहास, पुरातत्व, प्रागैतिहास

---

[1] पड़ रचना – समकालीन भारतीय साहित्य पष्ठ 99 अंक सितम्बर – अक्टूबर 2015 ले. रमेश कुमारी।
(अ) पड़ को फड़ भी कहा गया है। डॉ. भानावत ने 'पाबूजी की पड़' लिखा है।

के कितने–कितने खजाने अपने अंदर सँजो कर रखे हैं। इसकी परंपरा से आप अपने को जुड़ा हुआ पाते हैं तो अन्य तमाम अभाव तिरोहित हो जाते हैं। मन भरा–पूरा लगने लगता है। एक अकथनीय समृद्धि चारों तरफ़ दिखाई देने लगती है।

मालवा का प्रत्येक जिला नीमच, मंदसौर, रतलाम से लगा कर धार, इंदौर, उज्जैन, झाबुआ, देवास, शाजापुर, आगर, मालवा, खंडवा, सारंगपुर आदि 'लोकदेव' संस्कृति के खजाने हैं। जहाँ लोग संगीत, बारता, कहानियाँ, इतिहास के वृतांत सहित अन्य लोक परंपरा से सराबोर परिवेश में रहते हैं।

यहाँ यह तथ्य रेखांकित करना जरूरी समझता हूँ कि लोक देवता परंपरा, वीरता, त्याग, समाज सेवा, लोक एकता, सौहार्द, उच्च चरित्र, समभाव, स्त्री गरिमा, सम्मान के जीवन मूल्यों वाले तत्वों से निर्मित है। समाज ने उन देवी–देवताओं को अपने जीवन में स्थान दिया है।

मध्य काल की विदेशी हमलावर जातियों, सत्ता द्वारा लूट, विध्वंस, कत्लेआम के बीच इन्हीं लोकनायकों ने उनके भौतिक एवं आध्यात्मिक संबल ने समाज की 'भारतीयता' की रक्षा भी की है। जब भी मैं अपने देवास के सामाजिक ताने–बाने के बारे में सोचता–देखता और महसूस करता हूँ तो चाहे कितने संकट आए, तनावों के हालात बने, भ्रांतियाँ खड़ी हुईं। दंगों की स्थितियाँ दिखाई देने लगी। लेकिन देवास का जन–जीवन एकजुटता से इसका मुकाबला करके संकटों पर विजय पा लेता है। निःसंदेह इसकी बुनियाद में 'लोक परंपरा' से जुड़ा समाज है। जो आपस में परिचित है। रिश्तों से बँधा है और त्यौहारों, पर्वों की सामाजिकता से जुड़ा है। यह जुड़ाव बड़ी शक्ति बन जाता है। कमोबेश पूरा मालवा इसी तरह शांतिप्रिय, सौहार्द भरा भारतीय भाग है।

लोकदेवों की परंपरा का सांस्कृतिक पक्ष जिसमें कलाओं का बड़ा स्थान है। नाट्य, गायन, चित्रांकन, वाचिक साहित्य, तंतुवाद्य, फड़ चित्रण, व्याख्या, आख्यान, अभिनय, यानी ललित कला के समग्र आयाम 'लोकपक्ष' 'लोक देवताओं' से संबद्ध है। यह सिर्फ धार्मिक परंपरा ही नहीं है। सामाजिक जीवन में धैर्य, चिंतन, सौहार्द के साथ श्रेष्ठ तथा उच्च भावों की स्वीकृति भी है। यह परंपरा किसी भी समाज को मानवीय मूल्यों वाला समाज बनाता है।

यहाँ हल्का सा विषयांतर करते हुए एक उदाहरण देना चाहता हूँ जो इतिहास तथा साहित्य से संबंध रखता है। ज़रा याद करें जयशंकर प्रसाद की कहानी 'ममता' की, जो आक्रमणकारी हुमायूँ को चौसा के मुगल – पठान

संघर्ष में विपत्ति में पड़ा है। रात को कुटिया में आता है। ममता कहती है – तुम चाहे जो हो – तुमने जो भी किया हो मैं अपने धर्म से नहीं हट सकती – अतिथि हो – संकट में हो यह कहते हुए ममता उसे पानी तथा खाना देती है। प्रसाद, इस कहानी में भारतीय इंसानी मूल्य का सांस्कृतिक आचरण को रेखांकित करते हैं। 'ममता' भारतीय मानस और मूल्यों की सांस्कृतिक भारतीय धारा है।

दूसरा उदाहरण वीर दुर्गादास राठौड़ का है। जोधपुर–मारवाड़ की स्वतंत्रता के लिए तथा कट्टरता के खिलाफ औरंगजेब से टकराते हुए। औरंगजेब उसे दुश्मन मानता था। उसी औरंगजेब के बेटे अकबर शाह के दो मासूम बेटा–बेटी बुलंद अख्तर और सैफुन्निसा को दुर्गादास ने पाल–पोस कर बड़ा किया। मौलवी रख कर इस्लाम की दीनी तालीम दिलवाईं जब वे बड़े हो गए तो दुर्गादास राठौर ने स्वयं औरंगजेब को सौंप दिए। बच्चे यानी अपने पोते–पोती के दरबारी अदब तथा इस्लामी तहजीब देख कर औरंगजेब दंग रह गया। एक हिंदू के घर से वे बेहतर शिक्षित मुसलिम बन कर आए थे। तमाम इस्लामी अरकान का पालन कर रहे थे।

दुर्गादास, भारतीय संस्कारों, संस्कृति, मनीषा की धारा के महत्त्वपूर्ण चरित्र नायक हैं। धर्मनिरपेक्षता, सौहार्द के इस वीर को कितने कोर्स–कितनी शैक्षिक किताबों में पढ़ाया जाता है? यहाँ एक बात और कहना चाहूँगा। महान उपन्यासकार, कथाकार प्रेमचंद ने इतिहास के अनेकानेक चरित्रों में से दुर्गादास को चुना और दुर्गादास राठौर नामक लघु उपन्यास 1915 में लिख दिया था। [1]

प्रेमचंद जी ने *दुर्गादास राठौर* नामक उपन्यास की भूमिका में लिखा था। बालकों के लिए राष्ट्र के सपूतों के चरित्र से बढ़ कर कोई उपयोगी साहित्य का कोई दूसरा अंग नहीं है। इनसे उनका चरित्र ही बलवान नहीं होता उनमें राष्ट्र–प्रेम और साहस का संचार भी होता है। राजपूताना में बड़े–बड़े शूर–वीर हो गए हैं। उस मरुभूमि ने कितने ही नर–रत्नों को जन्म दिया है; पर वीर दुर्गादास अपने अनुपम आत्म त्याग, अपनी निःस्वार्थ सेवा भक्ति और अपने उज्ज्वल चरित्र के लिए कोहनूर के समान हैं। औरों में शौर्य के साथ कहीं–कहीं हिंसा और द्वेष का भाव भी पाया जाएगा, कीर्ति का मोह भी होगा, अभिमान भी होगा, पर दुर्गादास शूर हो कर भी साधु पुरुष थे। किन्हीं कारणों से हमने वीर रत्न दुर्गादास का चरित्र बालकों के सामने रखा है।

[1] 'दुर्गादास राठौर' उपन्यास, लेखक प्रेमचंद (प्रकाशनः 1915)। वैसे यह 1910 में लिखा जा चुका था। भवदेव पांडे– भूमिका, पृष्ठ 8

हमने चेष्टा की है कि पुस्तक की भाषा सरल और बा मुहावरा हो और उसमें बालकों की रुचि उत्पन्न हो [1] देवास का पूरा क्षेत्र और समग्र मालवा लोक–देवी–देवताओं की श्रद्धा, विश्वास, धैर्य के ताने बाने से भरा–पूरा है। विश्वास और धैर्य का समाज रचनात्मक, सृजनशील हुआ करता है। इसीलिए यहाँ के जन जीवन में धार्मिक कट्टरता, धर्मांधता और मनुष्य विरोधी गतिविधियाँ नहीं पाई जाती है।

कुछ अन्य लेकिन महत्त्वपूर्ण लोक देवताओं का वर्णन करना आवश्यक है। क्योंकि देवास के सांस्कृतिक पर्यावरण में उनका योगदान महत्त्वपूर्ण है।

देवनारायण जी

लोक देवता देवनारायण जी, देवास सहित मालवा, राजस्थान, गुजरात में व्यापक रूप से मान्य हैं। देवास के ग्रामीण अंचल बागली, बरोठा, काँटा फोड़, गंधर्वपुरी, कन्नौद, खातेगाँव, नेमावर, राघोगढ़, कर्णावद, हाटपीपलिया, उदयनगर आदि अंचलों में 'देवनारायण' को देवता के रूप में पूजा–अर्चन करके मनता भी मानी जाती है।

देवनारायण जी की जन्मभूमि राजस्थान है। वे बारह वर्षों तक मालवा में रहे। ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार वे फरना खेड़ी, धार, देवास, उज्जैन में रहे। निवास वहीं किया। देवनारायण जी के 'देवरे' यहाँ है। विभिन्न समय में मेलों का आयोजन होता है। देवनारायण के गीत भीलों, गुर्जरों, जाटों और अन्य कृषक जातियों में गाए जाते हैं।

देवनारायण जी ने भूणा जी को अपना उत्तराधिकारी बनाया था। उन्हें सरपाव और खांडा देकर 'खांडेराव' नाम दिया देव नारायण के देवरे में 'खांडेराव' की भी उपस्थिति बहुधा मिलती है। [2] सीमामऊ तथा श्यामगढ़ की गुर्जर महिलाएँ गीतों में गाती हैं।

म्हारे तो टीको सोनी, दो दम केड़े धड़जे रे।
देवनारायण की पालकी, तू वेगी धड़जे ।। [3]

यह गीत कन्नौद, खातेगाँव, अजनास, सतवास, नेमावर आदि में भी गुर्जर महिलाएँ गाती हैं। बागली क्षेत्र के चेनपुरा, बेहरी, बागली नगर में भी गाया जाता है। देवनारायण जी की पूजा सनातन हिंदू पद्धति से ही होती है।

---

[1] प्रेमचंद जी द्वारा लिखित भूमिका 1915

[2] डॉ. भगवती लाल राजपुरोहित – मंगलाचरण पृष्ठ 6 – 7

[3] धरम धणी देवनारायण, ले. डॉ. पूरण सहगल 2009

इस महान लोक देव का जन्म विक्रम संवत की 14वीं सदी में 1370 ई. माना जाता है। देवनारायण क्षत्रिय बगड़ावत (बाधावत) कुल में जन्मे थे। यह कुल राठौड़ राजपूतों का है।[3] देवनारायण का समय भारतीय समाज के लिए बहुत कठिन समय था, विदेशी हमलावर भारतभूमि को रौंद रहे थे। ऐसे में वीर वर देवनारायण जी ने जनमानस में धैर्य और हौंसला बनाए रखने में भी योगदान किया है।

देवनारायण जी के शिष्य खांडेराव, राजस्थान, मध्य प्रदेश, निमाड़, मालवा में रहे तथा महाराष्ट्र के मराठी समाज में 'खांडोबा' कहलाते हैं। इन्हीं को कर्नाटक में 'मल्हारी मार्तण्ड भैरव' कहा जाता है। खांडेराव का मेला भी लगता है।[4]

देवनारायणजी, मालवा, निमाड़ा में तथा राजस्थान में सर्वत्र मान्य और पूजनीय है। उनके शिष्य खाण्डेराव भी वैसे ही सर्वस्वीकृत मान्य देव हैं। मराठा रियासतों जैसे देवास, धार, ग्वालियर, इंदौर, महेश्वर (पवार, सिंधिया, होलकर) में मराठी, मराठा सांस्कृतिक समुदाय मल्हारी मातंड को पूजता तथा मन्नत मानता है। देवास में प्रख्यात नाथ सद्गुरु शीलनाथ जी की मल्हार स्थित धूनी के ठीक सामने मल्हारी मार्तण्ड का प्रसिद्ध मंदिर है।

इस मंदिर में मराठा क्षत्रिय, मराठी ब्राह्मण सहित सभी जातियों के मराठी भाषी तथा हिंदी भाषी पूजा अर्चना करते हैं। विभिन्न अवसरों पर भव्य त्यौहार मनाए जाते हैं। जिसमें सभी सम्मिलित होते हैं। यह मंदिर आस्था सौहार्द तथा भाईचारे का भी स्थान है।

देवास की परंपरा रही है कि यहाँ किसी भी जाति या समुदाय का लोक देव–या–देवी हो, पीर हो, दरगाह हो, समग्र समाज उसे सम्मान देता है। इसीलिए यहाँ के सौहार्दपूर्ण वातावरण में एक बड़ा कारण यह भी है। लोकदेवता, सामाजिक समरसता में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

---

[3] देवनारायण जी विक्रमी 14वीं सदी 13760 यानी ई. सन 1313 –यह काल भारत पर विदेशी हमलों का भी है।
[4] दक्षिण चा लोकदेव श्री खण्डोबा – आर.सी. ढेरे – धरमधणी देवनारायण पृ. 157

विरुद् गाथा

विरुद् का अर्थ है, कीर्ति, यश, कामों तथा चरित का बखान और 'वर्णन' करना होता है।

लोक देवता के विरुद् गाथाओं का गाया जाना। उनकी ऐतिहासिक, सामाजिक, सेवा तथा जन कल्याण के कार्यों, तथा श्रेष्ठ मानवीय जीवन मूल्यों के लिए अपने जीवन को समर्पित करने की पृष्ठभूमि से वे समाज में आदर, सत्कार और श्रद्धा के केंद्र बने हुए हैं। कालांतर में वे रचनात्मक प्रेरणा बन कर जनमानस के देवता के रूप में प्रतिष्ठित हुए। जितने भी लोकदेव हैं वे अपने समय में भी उतने ही सम्मानित, प्रेरक और लोक कल्याणकारी रहे साथ ही अत्याचारी तथा उनका नाश करने वाले 'वीर' भी रहे है।

ऐसे वीरों का 'विरुद' (प्रशस्तिगान) गाना स्वाभाविक है। देवास में रामदेवजी, तेजाजी, देवनारायण जी के विरुद् गाए जाते हैं। ये गायन एकल भी है, समूहगत भी और श्रोताओं का भक्ति भाव भी, ये तीनों उच्च सामाजिकता का संचार करते हैं। अंतर मानस में सात्विक प्रवृत्तियों, कर्मठता, सेवा, त्याग और सच्चाई का भाव जगाते हैं।

मालवा का जन मानस इन 'विरुदावलियों' से भरा–पूरा मानस है।

विरुद् गायन ने विरुद् गाथा साहित्य के निर्माण में काफी योगदान दिया है। परंपरा में यह साहित्य भाषा, कथा, युग, इतिहास के साथ मानव विकास के इतिहास का प्रामाणिक लोक प्रसूत स्रोत है।

रामदेवजी, लोक देवता के रूप में पूजे जाते हैं। देवास जिला रामदेवजी के भक्तों, श्रद्धालुओं से ओत–प्रोत है। रामदेवजी के चरण (पगलिए) बनाने की परंपरा है। संगमरमर पर 'पगलिए' (पाँवों–चरण की प्रतिकृति) स्थापित करते हैं। 'खेजड़ी वृक्ष के नीचे 2–3 फीट ऊँचा चबूतरा बना कर उस पर आला बना कर रामदेवजी के पगलिए स्थापित करते हैं। खेजड़ी पर श्वेत वस्त्र की रामदेवजी की ध्वजा फहराई जाती है। जिस पर रामदेवजी के लाल कपड़े से चरण बनाए जाते हैं।' [1]

महापुरुष या स्त्री चाहे किसी भी जाति–धर्म में पैदा हो वह अपने

[1] 'बाबा रामदेव प्रमाणिक जीवनी''–डॉ. सोनाराम विश्नोई, पृष्ठ 46

कर्म तथा सकल मानव प्रेम, लोक कल्याण वाली दृष्टि के कारण 'लोक देव' होता है। लोक शब्द – व्यापक जन मानस को तथा 'देव' उच्च नैतिक, उदारमना, सर्व हितैषी को प्रकट करता है। यहाँ लोक में देवत्व की स्थापना भी 'लोकदेव' करते हैं।

देवास का शायद ही कोई मुहल्ला, गाँव या कस्बा हो, खेड़ा हो या बस्ती वहाँ रामदेवजी के स्थान, ओटले ज़रूर मिलेंगे। लोक में ये प्रतीक जनमानस के मन और आचरण में देवत्व भाव की निरंतर प्रेरणा देने वाले प्रतीक हैं। इन्हें रूढ़ या अन्य किसी शब्द से दूर नहीं किया जा सकता। क्योंकि विचार और भाव उतना ही आधुनिक तथा प्रासंगिक है।

देवास के जन–जीवन में उसके कृषक, खेतिहर, श्रमिक तथा अन्य वर्गों में एक खास तरह का दयार्द्र भाव निहित होता है। इसमें मान–सम्मान और अपनेपन का मिठास होता है। इस मिठास में मालवा का सांस्कृतिक माहौल और मानस है। इसी के समानांतर चलती हुई रामदेवजी, देवनारायण जी, तेजाजी, सिंगाजी, टेकचंद जी, रामचरणजी महाराज, शीतलदासजी, [1] सदगुरु शीलनाथजी, इत्यादि लोकदेव एवं संतों की वाणियों ने सांस्कृतिक परिवेश को हरा–भरा बनाया है।

इन लोक देवों में समान रूप से जो महत्त्वपूर्ण तथा अति आधुनिक सोच मिलती है, वह है–अछूतोद्धार, जातिगत भेद का विरोध, स्त्री शिक्षा, समाज सुधार, नशा विरोध, स्त्री सम्मान, परहित के प्रति सद्भाव आदि। ब्याज का विरोध, शोषण उत्पीड़न का प्रबल विरोध का विचार भी लोक देवों में मिलता है।

इन देवों को मानने वालों में भक्ति, श्रद्धा का भाव है उसके मायने यह है कि वह उच्च मानवीय, सुसंस्कृत विचारधारा संपन्न समाज है। हम तभी श्रेष्ठ परिवेश निर्मित कर सकते हैं जब हम अपनी जड़ों की तलाश करें क्योंकि किसी भी समाज की विकासयात्रा उसके इतिहास, संस्कृति, भाषा, साहित्य, लोक सांस्कृतिक पक्ष की जड़ों में ही शक्ति पाती है। बिना शक्ति स्रोत के वह निर्माणकारी ऊर्जा कहाँ से लाएँगे ? जड़ें छोड़ कर पेड़ खड़ा कैसे रहेगा? यह एक बहुत बड़ा सवाल है इस पर गंभीरता से सोचना ही पड़ेगा।

भारत की इस आधुनिक विचारधारा का दर्शन सदियों पूर्व से होता रहा है। देवनारायणजी विक्रम की 14वीं सदी 1370ई. में हुए। रामदेवजी 1465 वि. स. में हुए। उन्होंने समाधि वि.सं. 1515 में ली है। ये सदियाँ भारतीय जनमानस

[1] शीतलदासजी देवास के दक्षिण में नागदा ग्राम के निवासी थे। वे उदासी परंपरा के संत थे।

में अध्यात्म, भक्ति, एकता, समानता के विचारों से भरी हैं। [1] रामदेव दलितोद्धार, स्त्री शिक्षा, शोषणहीन समाज के विचारों पर जोर दे रहे थे।

हाँ यह जरूर है कि लोकदेवों का संबंध हमारे प्राचीन अवतारों से जोड़ा गया। जोड़ने का तात्पर्य जनमत ने प्राचीन अवतार की झलक इनमें देखी या समान विचार देखे हैं – एक तरह से वैचारिक धारा का विकास इन लोकदेवताओं में महसूस किया गया। यह भारतीय समाज की एक खोजपूर्ण दृष्टि भी है कि वह 'त्रिवेणी' में गुप्त 'सरस्वती' की धारा खोज लेता है। समाज इतिहास, धर्म और विचार की यात्रा को खंडित नहीं देखता बल्कि वह अखंड मानवीय विचार, सांस्कृतिक मूल्यों की सतत अविराम यात्रा भी देखता है। यह बड़ी ही विलक्षण वृत्ति या गुण जनमानस में निहित है।

रामदेवजी को भगवान कृष्ण का अवतार माना जाता है। तत्कालीन ऋषि बालीनाथ जी ने इन्हें भी 'कृष्णावतार' रामदेव' संबोधित किया था। रामदेवरा, रुणिचा (पोकरण) में रामदेव जी तथा उनकी बहन डालीबाई की समाधियाँ है। रामदेवजी का जन्मदिन भादवा के द्वितीय शुक्लपक्ष को माना जाता है, इसी कारण उसे 'बाबे री दूज' कहा जाता है, जो भव्यता, श्रद्धा, भक्ति और उत्साह से मनाया जाता है।

रामदेवजी को बाबा रामदेव तथा रामदेव पीर भी कहते हैं। उसे सभी धर्म, जाति के लोग मानते हैं। राजस्थान के प्रसिद्ध पाँच पीरों में रामदेवजी को माना गया है।

हाबू, हडबू रामदेव माग लिया, नेहा।
पाँचों पीर पधारजो गोगा जी जेहा ।। [2]

देवास के जन जीवन में 'गोगाजी' भी लोक देवता के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

देवास की 'जातराएँ'

मेले–ढेले में बच्चे, बूढ़े, युवा, स्त्री सभी का मन रमता है। इसकी उमंग भरी, रंग–बिरंगी सजावटें, खरीदी और बेचना, मिठाई और खाने की दीगर चीजें, मंदिरों में देवरों, अस्थानों में बाँटने वाला प्रसाद, बच्चों, किशोरों का बड़ा आकर्षण होता है। मैं जतरा की प्रतीक्षा किया करता था हमारे देवास की चामुंडा माता की पहाड़ी के नीचे – सामने आगरा–मुंबई रोड है (एन.एच 3) उसी के दोनों तरफ, भगवती सराय के सामने, पेड़ियों के पास झूले,

[1] डॉ. सोनाराम विश्नोई – बाबा रामदेव की प्रामाणिक जीवनी, पृष्ठ 35–48
[2] 'रामदेवजी की प्रामाणिक जीवनी' डॉ. सोनाराम विश्नोई पृष्ठ 48

खिलौनों की दुकानें, गुब्बारे, जलेबियों की दुकानें, भजिये, सेंव की गंध अभिभूत कर देती थी। भजियों (पकौड़ों) का स्वाद, ताजा गर्म जलेबियों के साथ नमकीन सेंव खाना। खाने का शानदार समाँ बँध जाता था। क्या अमीर, क्या गरीब मेलों में सब एक समान हो जाते। बड़ा ही प्यारा समाँ होता और बड़ी ही प्यारी और अपनेपन की रागिनी से गूँजती दुनिया हमारे चारों ओर होती – ये जतरा 'आषाढ़ की पूर्णिमा' पर लगती थी। इसे आमतौर से 'असाड़ी पूनम की जतरा' कहा जाता है।

यहाँ थोड़ा सा विषयांतर करते हुए कहना चाहूँगा। लोक देवताओं के 'बखाण' (प्रशस्ति–विरुद) के बीच जिले के विभिन्न स्थानों में लगने वाली 'जातरा' (जात्रा) या 'लोक मेले' इनका लोक देवों, उत्सवों से संबंध है। ये लोक जातराएँ हेलमेल, लोक साहित्य, लोक गायन – वादन, प्रदर्शन के साथ उत्साह और उमंग से भरे होते हैं। जो सामाजिक जीवन में गहरी सामाजिक एकता के सूत्रों को सुदृढ़ करते हैं।

देवास के स्वतंत्रता सेनानियों, तत्कालीन पुलिस तथा प्रशासनिक अधिकारियों, व्यापारियों, बुजुर्गों ने समान रूप से स्वीकारा है कि देवास के विभिन्न क्षेत्रों की जात्राओं–जतरा–मेलों ने स्वतंत्रता संग्राम के दौरान अपूर्व राष्ट्रीय चेतना का संचार किया था। राष्ट्रीय आंदोलन को गति दी थी। 1857 के महासमर में भी 'जात्राओं' में क्रांतिकारी, मेल–मिलाप तथा अन्य माध्यमों से 'जातराओं' ने बड़ी भूमिकाएँ निभाई थी। 1857 से 1947 का अर्सा देवास की जातराओं की चेतनामयी भूमिका से ओतप्रोत है।

इन जातराओं में भजन मंडलियाँ, नौटंकी, माच, रामलीला, तेजाजी, रामदेवजी, पाबूजी, देवनारायण, सिंगाजी, गोगादेव के भजनों, के विरुद गाए जाते हैं। इनमें तंबूरा, ढफली, मंजीरे, ढोलक, खड़ताल जैसे वाद्यों का उपयोग किया जाता है। ये भजन श्रोताओं को मुग्ध करते हैं।

इस तरह संगीत, साहित्य, मंच की विधाओं की श्रेष्ठ त्रिवेणी होती है। अभी हाल ही में उज्जैन में (देवास से 30 कि.मी. पश्चिम में) 2016 सिंहस्थ 22 अप्रैल से 21 मई तक संपन्न हुआ। करोड़ों लोगों की आवाजाही, स्नान, प्रवचनों, धार्मिक अनुष्ठानों के बीच उज्जैन के विभिन्न स्थानों जैसे त्रिवेणी कला संग्रहालय (इंटरप्रिटेशन सेंटर) [1] मंगलनाथ, रामघाट, सांदीपनि आश्रम, टॉवर (फ्रीगंज) कालिदास अकादमी सहित विभिन्न स्थानों पर लोक कला, लोकमंच, शास्त्रीय नृत्य तथा फोक–डांस और फोक सांग का आयोजन हुआ। लोक

[1] जयसिंह पुरा – उज्जैन

गायन में कबीर, मीरा, तुलसी, जायसी, दादू, नानक, नामदेव, चैतन्य महाप्रभु आदि। यह सिंहस्थ व्यापक सांस्कृतिक संदेश देने में सफल हुआ है।

लोक चित्रावण से सजे उज्जैन की दीवारें, चौराहे, घाटों ने सुकून भरा माहौल निर्मित किया है। सिंहस्थ मेला मालवा क्षेत्र के उज्जैन में प्रति बारह वर्ष पर होता है। सिंहस्थ के प्रारंभ होते ही मालवा के प्रत्येक जिले में शादी–ब्याह, अन्य सभी आयोजन स्थगित हो जाते हैं। समस्त जनता उज्जैन की तरफ उमड़ी पड़ती है। वहाँ के संतों के प्रवचन, सामाजिक भोज, प्रसाद वितरण में कहीं कोई 'जाति–धर्म' का भेद, अमीर–गरीब का अंतर नहीं दिखता साथ एक ही पंक्ति में भोजन करना और खाना परोसना होता है। सभी एक साथ बिना किसी ऊँच–नीच के भाव के भोजन करते है।

ये मेले, ये सिंहस्थ, यात्राएँ सभी व्यापक सामाजिकता के विकास में अप्रतिम योगदान देते हैं।

देवास जिले की अन्य क्षेत्रों की जात्राएँ

देवासी मन भोला–भाला है। न्यूनतम में संतुष्ट और प्रसन्न रहने वाला स्वभाव है। एक तरह से देखा जाए तो यह स्वभाव आज के अपार खर्चीले, समय में परिवार तथा देश के लिए भी फायदेमंद है। जात्राएँ लोक जीवन की सांस्कृतिक यात्राएँ भी हैं। देवास सहित पूरे मालवा में 'जातरा' के कारण त्यौहार का उल्लासमय वातावरण बना रहता है।

देवास जिले का नर्मदा नदी किनारे का प्रसिद्ध ऐतिहासिक गाँव 'नेमावर' प्राचीनकाल से 'सिद्ध क्षेत्र' माना जाता है। महाभारत काल का सिद्धेश्वर महादेव मंदिर के महत्त्व और ऐतिहासिकता को मौर्यकाल से लेकर मराठा काल तक मान्यता प्राप्त रहा है। नेमावर की नर्मदा परिक्रमा लोक श्रद्धा, लोक सांस्कृतिक पक्ष का शानदार उदाहरण है। इसके अलावा 'सोमवती अमावस्या', गुरुपूर्णिमा, विभिन्न तिथियों पर लाखों श्रद्धालुओं का एकत्रित होना और बिना किसी व्यवधान के पूर्ण होना इस क्षेत्र के लोक की बड़ी उपलब्धि है।

पानी गाँव का मेला – देवगढ़, मेंढ़की धाकड़, निमनपुर (सीतामाता मेला) संदलपुर का सिंगाजी मेला, नेमावर का नर्मदा जयंती मेला, सोनकच्छ का महाशिवरात्री मेला, बिजवाड़ का शिव मेला, बागली का जटा शंकर (महादेव) मेला, गंधावल (गंधर्वपुरी) का प्रसिद्ध भुवनेश्वरी मेला, देवास की आषाढ़ पूर्णिमा का मेला (जतरा), इकलेरा में माताजी का मेला, पुंजापुरा का

चंद्रशेखर महादेव मेला, देवास जिले की ऐसी कोई तहसील नहीं जहाँ मेले–जतरा न लगती हो। देवास का लोक जीवन हरा–भरा, उत्सवी और सामाजिक है।

इन मेलों का लोक देवों से गहरा संबंध है, जैसे संदलपुर का 'संत सिंगाजी' का मेला। सिंगाजी लोकदेव के रूप में ख्यात हैं। मालवा और निमाड़ में उनको अपार श्रद्धा–भक्ति से पूजा जाता है। देवास जिले की बागली तहसील के पुंजापुरा, निमनपुर, उदयनगर क्षेत्र के कृषक – समुदाय सिंगाजी की 'कड़ाय' करते हैं। किसी एक घर पर या कोई मनता मान करके 'प्रसाद' तैयार किया जाता है। इसी को 'कढ़ाव' या 'कड़ाई' कहते हैं। इस प्रसाद को शुद्ध घी से तैयार किया जाता है। अपनी क्षमता के अनुसार पाँच दस किलो घी का प्रसाद तैयार कराया जाता है। घरों में भजन का निमंत्रण भेजा जाता है। रात में सभी एकत्रित होकर पूजा अर्चना करके तंबूरे, खड़ताल, मजीरे, खंजरी से लयतालपूर्वक संत सिंगाजी के भजन गाते हैं और उनका बखाण करते हैं। यह पूरी प्रक्रिया सनातन हिंदू पद्धति के अनुसार होती है। देवास के पास बड़वाह, सनावद, खरगोन, बड़वानी, खण्डवा आदि स्थानों तथा जिलों में 'सिंगाजी' के प्रति अपार श्रद्धा है।

लोकदेव 'गोगाजी'

देवास सहित मालवा के अनेक हिस्सों में 'गोगाजी' (गोगा देव) की पूजा की जाती है। इनकी स्मृति में जुलूस भी निकलता है। देवास नगर तथा ग्रामों में कुम्हार (प्रजापति) के घर से ताजी काली मिट्टी के अश्व पर विराजित योद्धा की प्रतिमा बनाई जाती है। संध्या समय 'चौक पूर कर' (पूजा का विधान सजा कर) रंगोली – चावल सजाए जाते हैं। धूप दीप लगा कर पुष्प चढ़ाए जाते हैं। नारियल बदारा (फोड़ा) जाता है। गोगाजी को साँपों का देवता भी कहा जाता है। ये लोक रक्षक हैं। इनका थान (स्थान) गोगा मेड़ी है। जहाँ भाद्रपद नवमीं को मेला लगता है। इन्हें गोगा चौहान भी कहा जाता है।

तेजाजी (तेजाजी महाराज)

तेजाजी, मालवा, राजस्थान, मध्य प्रदेश के निमाड़ में सर्वाधिक लोक मान्य देवता हैं। वीर, साहसी, जनकल्याण के लिए प्रतिबद्ध, वीर तेजाजी के स्थान गाँव–गाँव में मौजूद है। नागपंचमी तथा तेजा दशमी को इन की व्यापक तौर से पूजा की जाती है। रात में भजन–कीर्तन होते हैं। नारियल, चने चिरोंजी, मिठाई का प्रसाद चढ़ाया जाता है। तेजाजी को सभी वर्ग, तबके के लोग पूजते हैं। देवास के प्रख्यात मलहार स्मृति मंदिर (सभा भवन) के कोने

पर (कलेक्टर कार्यालय के ठीक सामने) पीपल के विशाल वृक्ष के नीचे तेजाजी का प्राचीन स्थान है।

देवास जिले के हाटपीपलिया के गाँवों में वीर तेजाजी महाराज के गीत गाए जाते हैं।

सद गुरु आया पावणा
म्हारा तेजाजी – तेजाजी ऽ ऽ ऽ तेजाजी।

तेजा दशमी जन–त्यौहार स्वेच्छापूर्वक उमंग और श्रद्धा भक्ति से मनाई जाती है।

भैरव

भैरव, समाज में सर्वत्र व्याप्त देव हैं। कुल भैरव या कुल भैरू सभी कुलों–खानदानों के होते हैं। गाँव के भेरू भी होते हैं। गाँव की सीमा जिसे 'कांकड़' कहा जाता है। 'कांकड़ भेरू' भी होते हैं। इनकी छोटी–छोटी मंदरी (लघु रूप मंदिर) तथा ओटले पर आकर विहीन सिंदूर से पुती मूर्ति होती है। प्रत्येक पारिवारिक कार्य में 'भेरू महाराज' का पूजन तथा आशीर्वाद लिया जाता है। दुल्हा–दुल्हन सर्वप्रथम कुल देवी तथा कुल के भैरू के समक्ष उनकी वंदन–नमन करके आगामी सुखी जीवन की कामना करते हैं।

देवास में प्रसिद्ध चामुंडा पहाड़ी पर स्थिती चामुंडा माता के मंदिर के बाईं तरफ छोटी गुफा में 'कालभैरव' का मंदिर है। यहाँ सभी जातियों, वर्गों के स्त्री–पुरुष, वृद्ध, बालक–बालिकाएँ श्रद्धा भक्ति से पूजा–अर्चना करते हैं। धूप–दीप–जगा कर नारियल का प्रसाद चढ़ाते हैं।

देवास को इसीलिए 'देवास' कहा जाता है क्योंकि यहाँ (बहुत सारे देवता) देव–वास या देवीवास यानि 'देवों का वास' है। 'देवीवास' से सीधा अर्थ टेकरी पर विराजमान चामुंडा माता तथा तुलजा भवानी के मंदिरों से है।

देवास एक सहज सरल नगर तो है ही वहीं अनोखा भी है। वह कई तरह से आकर्षित और प्रभावित करता है।

मालवा के लोक जीवन में जैसे रामदेवजी, तेजाजी, देवनारायण जी, पाबूजी, हरमूजी, सिंगाजी, खण्डोबा है। वैसे ही 'जूण कुँवर' भी पूज्य देव हैं।

^t wkd φj * (जूण जी') – जहाँ–जहाँ देवनारायण जी के देवरे या मंदिर है वहाँ–वहाँ जूणजी की भी स्थापना ससम्मान की गई है। [1] जूण जी

[1] लोक देवता – जूण कुँवर – डॉ. पूरण सहगल – पृष्ठ 17

लोक में संतान दाता, बाल रक्षक, जल रक्षक, वन संरक्षक तथा गोरक्षक देवता के रूप में जाने जाते है। जूण कुँवर को लोक में जो ख्याति है उसके विभिन्न बिंदुओं पर थोड़ा सा भी विचार करें तो जूण जी मानवीय जीवन की उत्पत्ति से, पालन पौषण, जल संरक्षण (जल स्रोत सुरक्षा) जंगल–संरक्षण (पर्यावरण संरक्षण) के साथ दुधारू पशुओं के रक्षक भी हैं।

लोक मान्यता है कि सुखी–दुखी पीड़ित जो भी उनके यहाँ जाते हैं, जूण देवजी सबका मंगल करते हैं। वे शिव शंकर हैं। [1] देवास जिले में व्यापक रूप से देवनारायण जी और जूणा जी के प्रति आस्था तथा भक्ति–भाव है।

जूण कुँवर जी की बड़ी ही अच्छी कहानी देवास, (मालवा) राजस्थान और गुजरात में प्रचलित है। लोक गाथा (जनता की) में यह तो शक्ति होती ही है कि वह अपने लोक जीवन के पुराण, इतिहास, घटनाएँ, आदि को लेकर अच्छे शिल्प, कथन, वार्ताओं के माध्यम से कहानी, आख्यानों, भजनों में निरंतरता बनाए रखते हैं। ऐसा कौशल लोक जीवन में ही संभव है। लोक जीवन की कहानियाँ, बारताएँ कहीं भी जीवन मूल्यों, सामाजिक मूल्यों को अनदेखा नहीं करती, उसमें कर्तव्य बोध, प्रेम, स्नेह और जीवन की सरस धारा अंतर्निहित होती है।

जूण कुँवर की प्रचलित कहानी

'बोरेड़ी से जूण जी मालवा की ओर चल पड़े वे सुखानंद में मुकाम करना चाहते थे। भगवान शिव ने उन्हें रोका और कहा जूण कुँवर! सुखानंद भी मेरा ही स्थान है। किंतु बड़ावली के पास में मेरा एक स्थान (मठ) वीरान हो गया है। तुम वहाँ मुकाम करो। मेरे उस वीरान हुए स्थान को फिर से आबाद करो' जूणजी ने शिव के आदेश को मानकर वर्तमान शिव स्थान पर अपना मुकाम कर लिया'। [2]

इस लोकमान्य कथा में गहरी प्रतिकात्मकता है। शिव (कल्याण–लोक हितैषी है) जहाँ लोक कल्याण होता है वहाँ सुख शांति होती ही है। अन्य क्षेत्रों में भी सुख शांति आए इसलिए 'वीराने' को आबाद करने का हुक्म शिव (लोक कल्याण) देते हैं और जूण कुँवर उस वीराने को हरा–भरा, खुशहाल बनाने के लिए मुकाम करते हैं।

इतिहास सम्मत है कि हाड़ा राजा ने पुसकरिया सरोवर की देख–रेख

[1] देवास जिले में व्यापक रूप से देवनारायण जी, जूणजी के प्रति आस्था तथा भक्ति भाव है।

[2] लोक देवता 'जूण कुँवर – डॉ. पूरण सहगल – पृष्ठ 17 पैरा 2 * जूण कुँवर' पानगढ़ (राज.) के राजा (हाड़ा गोत्र) के पुत्र थे। * सुखानंद मालवा के जावद तहसील में है।'

[3] पृष्ठ 19 पैरा 2, लोक देवता – जून कुँवर।

और गायों की रक्षा का भार अपने कुँवर जूणजी को सौंपा था।[3]

जूण कुँवर ने वीरता, त्याग, सेवा, कल्याणकारी विचार, सौहार्द के साथ से जन सेवा की। ऊँच–नीच की भावना को परे रख कर समाज को समभाव से देखा। देवास के गाँवों में मालवा अंचल में जूणजी को पूरी श्रद्धा–भक्ति से स्मरण किया जाता है। लोक देवियों में – भँवरमाता, आँवरी माता भी हैं जिन्हें मालवा में श्रद्धापूर्वक स्मरण किया जाता है।

देव – या लोक देव भले ही राजस्थान के हैं लेकिन उनके सर्वाधिक भक्त मालवा में ही हैं। लोक में 'देव' को सीमाओं से नहीं बाँधा जाता है। वे सभी के होते हैं।

लोक देवों, देवियों के साथ मालवा राजस्थान, गुजरात, म.प्र. के अन्य जिले के साथ छत्तीसगढ़, बिहार आदि क्षेत्रों में भी कुल देवता, कुल देवी की पूजा होती है। प्रत्येक कुल की देवी होती है। नवरात्र के समय कुल की 'देवी' की पूजा पूरा परिवार एकत्रित हो कर करता है। पूरा परिवार पैतृक – स्थान पर ही एकत्रित होकर 'देवी पूजन' करते हैं।

हाटपीपलिया देवास जिले की महत्त्वपूर्ण तहसील है। वह व्यापार और कृषि का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र माना जाता है। साथ ही वह 1857 के महासमर का केंद्र भी था। हाटपीपलिया में आज भी सिसौदिया वंश के सक्तावत राजपूतों की गढ़ी है। अब वह जीर्णावस्था में है। लेकिन विशाल पीपल के नीचे सिसौदिया वंश की कुल देवी 'बायण माता' का स्थान है जो मंदिर भी है। हाटपीपलिया के शासक – जागीरदार सिसौदिया वंश के सक्तावत राजपूत थे। 1857 के स्वतंत्रता संग्राम में यहाँ के तत्कालीन शासक ठाकुर शकतसिंह सक्तावत [1] तथा उनके भाई ठाकुर बख्तावरसिंह सक्तावत, अंग्रेजों से संघर्ष करते हुए शहीद हुए। राजपरिवार की महिलाओं ने जौहर कर लिया था। इसी गढ़ी में 'बायण माता' का मंदिर है, जो सभी के श्रद्धा सम्मान का केंद्र है। दिवंगत माताओं को नमन किया जाता है। मंदिर में धूप, ध्यान, पूजा होती है। 1857 ई. में बुधवार के दिन यहाँ के शासकों, सैनिकों, किसानों तथा आम जनता ने ब्रिटिश हमलावरों से संघर्ष करते हुए अपने प्राण न्यौछावर किए थे। उनकी स्मृति में बुधवार को यहाँ 'हाट' लगने लगा तभी से 'पीपलिया' 'हाटपीपलिया' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। [2]

---

[1] शहीदों के परिजन – पास ही जिक्राखेड़ा गांव में रहते हैं।

[2] 1977 में जनता पार्टी की म.प्र. में बनी पहली सरकार के मुख्यमंत्री कैलाश जोशी भी इसी गांव के हैं। उनके चुनाव क्षेत्र का हिस्सा है।'

प्रागैतिहासिक काल से यात्रा करते हुए देवास स्वतंत्रता समर तक आ गया। हाटपीपलिया में साम्राज्यवादी ब्रिटिश फौज ने नंगा नाच किया। अनेक लोगों ने शहादत दी। वहीं पास ही राघोगढ़ (डबल चौकी – चापड़ा मार्ग) [1] नामक ग्राम है। 1857 में यहाँ के ठाकुर – शासक दौलतसिंह राठौड़ थे। स्वतंत्रता की भावना से ओतप्रोत ठाकुर दौलतसिंह ने वर्षों संघर्ष करते हुए अंततः शहीद हुए थे।

राघोगढ़ की गढ़ी में 'पाबूजी' का स्थान है। जो वहाँ का प्रसिद्ध लोक देवता है। गढ़ी के बाएँ बुर्ज के पास 'नागणेची माता' का मंदिर है। राठौड़ वंश की कुल देवी कहलाती हैं लेकिन सभी नागरिक उनके प्रति श्रद्धा भाव व्यक्त करते हैं।

देवास का लोक जीवन उत्साहवर्धक एवम् श्रद्धा से भरा पूरा है।

शीतला माता

शीतला माता लोक जीवन में व्याप्त हैं। इनके स्मरण तथा मनता के बिना परिवार का कोई उत्सव पूरा नहीं माना जाता। विवाह, तीज–त्यौहार, होली, दीपावली अन्य पर्वों पर 'शीतला माता' का समूहगत तथा व्यक्तिगत पूजन अर्चन किया जाता है। शीतला माता को बालक–बालिकाओं की रक्षक, परिवार की रक्षा तथा आशीर्वाद दाता, नव विवाहितों को सुखमय दीर्घ जीवन, सुख समृद्धि देनेवाली आत्मीयता से भरी मानी जाती है। सामाजिक जीवन में इनकी प्रतिष्ठा सर्वोपरि है। हर गाँव नगर में शीतला माता के ओटले होते हैं। कहीं मंदिर तथा मंदरी भी होती हैं। [2]

घर परिवार के प्रत्येक मांगलिक कार्य में शीतलामाता का आह्वान किया जाता है। जब घर में 'विवाह' का मुहूर्त तय हो जाता है तब गणेश लाने के साथ मंडप, कुल देवी पूजन के साथ एक दिन घर की स्त्री–पुरुष 'शीतला माता' को निमंत्रित करने 'गाजे–बाजे [3] से परिजनों सहित शीतलामाता मंदिर जाते हैं। यहाँ दूल्हा या दुल्हन से पूजा कराई जाती है। घर की वरिष्ठ महिलाएँ पूजा अर्चना करके आशीर्वाद की कामना करते हुए 'शीतलामाता' को निमंत्रित करती है।

'शीतलासप्तमी' काफी मायने रखती है। यह तिथि होली दहन के

---

[1] राघोगढ़, देवास जिले में है। यह इंदौर–बैतूल मार्ग पर बसा है। इसे ओल्ड सिहोर रोड भी कहा जाता है। (एक राघोगढ़ – राजगढ़ जिले में है) स्वतंत्रता संघर्ष का संबंध देवास जिले के 'राघोगढ़' से है।

[2] मंदरी– छोटा मंदिर यह छोटे से ओटले पर बनाया जाता है। आमतौर से पीपल तथा बरगद के वृक्ष के नीचे (छाया) में होते है। चित्र भी संलग्न है।

[3] बैंड या ढोल के साथ – गीत गाते हुए।

ठीक सात दिनों के बाद पड़ता है। यानी रंग पंचमी के दो दिन बाद। लोग शीतलामाता के मंदिर जाकर ठण्डा भोजन, नारियल, धूप–दीप चढ़ाने जाते हैं। उसके बाद घरों में रात्रि का तैयार किया भोजन (ठंडा भोजन) परिवार ग्रहण करता है। इस दिन प्रातः काल ठण्डे पानी से ही स्नान किया जाता है। पूरे दिन चूल्हा नहीं जलाया जाता।

शीतला माता का पारिवारिक जीवन में कितना ऊँचा स्थान है। इसका उदाहरण है विवाहोपरांत दूल्हा–दुल्हन (वर–वधू) परिजनों के साथ 'धोक देने' (प्रणाम करने) शीतला माता मंदिर के स्थान (ओटले, मंदिर) आते हैं। धन्यवाद ज्ञापित करके, भविष्य के लिए शुभाशीष की कामना की जाती है।

यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह है कि लोक देव, देवी, स्थान में श्रद्धा रखना अंधविश्वास नहीं वरन मानव मन की कल्याणकारी भावना और विश्वास है। इस भाव की गहराई को समझने की ज़रूरत है।

देवास के सहज जन जीवन में तथा विस्तृत मालवा के लोक जीवन में व्यापक रूप से भारतीय चिंतन परंपरा में 'अभाव' के मायने आज की मान्यता वाला अभाव नहीं है, जिसमें घर में भौतिक चीजों का 'अभाव' या 'कमी' कहा जाता है। यहाँ 'अभाव' के मानी 'भाव' या 'भावना रहित' होना है। समाज, धर्म, परिवेश, पर्यावरण, इंसान, रिश्ते, घर–परिवार, देश, संवेदनाएँ ये सभी 'भाव' 'भावों'–भावनाओं से समृद्ध होती हैं। 'भाव' का न होना ही 'अभाव' कहा गया है और माना भी गया है। यह मान्यता या सच्चाई 'भारतीयता' के अंतः सूत्र की एकता, अनुभूति, आचरण, और चिंतन की सुदृढ़ सूत्रबद्धता है। ये गहरा संतोष और धैर्य प्रदान करती है जो अविश्वास, घृणा, हिकारत और अलगाव को पनपने नहीं देती।

ईसा पूर्व की प्रथम सदी के विक्रमादित्य से दसवीं सदी के भोज तक और वहाँ से ग्यारहवीं सदी से तो 1857 तक की ज़रा इतिहास में झाँके दस सदियों में देश, और इस भारतीय समाज ने, पहले के दस शताब्दियों तक सिर्फ़ सांस्कृतिक उत्थान देखा। बाद के पूरी नौ सदियों तक आक्रमणकारियों द्वारा विध्वंस, लूट, कत्लेआम और विनाश देखा। इसके बावजूद भारतीय समाज की वह अंतःधारा, अंतःसूत्रता की एकता दृढ़ता ने उसे कहीं भी धैर्य, संतोष खोने नहीं दिया। बल्कि इस महाविनाश के घोर मलबे से भारतीय और भारतीयता के निर्माण की शक्ति, संकल्प से फिर उठ खड़ी हुई ऐसी ही ताकत की परंपरा का नाम देवास है। लोक माता, लोक देव मूलतः पर्यावरणरक्षक, बच्चों के हितैषी, पालनकर्ता, स्त्री गरिमा के रक्षक, मातृभाव, प्रेम, सौहार्द,

दया, ममता, तथा कर्तव्यपरायणता की प्रेरणा वाले देव हैं। इस परंपरा ने समाज को धैर्यशील, संवेदनशील, समावेशी और गरिमापूर्ण बनाया है।

कांगरिया देव

कांगरिया देव, देवास जिले के बरोठा तथा हाटपीपलिया तहसील में लोक मान्यता वाले देव हैं। बारिश के मौसम में पूजा अर्चना होती है, ऐसी मान्यता तथा विश्वास है कि अवर्षा, सूखा, अकाल से कांगरिया देव बचाते हैं। कांगरिया देव का मंदिर घने जंगल में पहाड़ी क्षेत्र में स्थित है।

आषाढ़ माह (जून–जुलाई) में परंपरागत रूप से कांगरिया देव की पूजा अर्चना, भजन किए जाते हैं। यहाँ मालवी – निमाड़ी बोली में महिलाएँ गीत गाती हैं। जिसमें कांगरिया देव की मनुहार तथा प्रशस्ति होती है। इसमें अपार श्रद्धा और विश्वास का भाव निहित होता है।

कांगरिया देव मंदिर पर, आदिवासी समुदाय के बंधु–बाँधव समूह में भुजरिया नृत्य करते हैं। पत्थरों पर चित्रकारी करके अपनी श्रद्धा भक्ति व्यक्त करते है।

कांगरिया देव (भैसूड़ा पर्वत पर) [1] का स्थान प्राकृतिक रूप से सुंदर है। सघन वन है, वर्षा के दिनों में झरना बहता है। प्राकृतिक रूप से पर्यटन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण है।

कांगरिया देव, वर्षा, कृषि तथा कृषकों, खेतिहर श्रमिकों, श्रमजीवियों के देव हैं। ये सभी किसी भी क्षेत्र की समृद्धि तथा उन्नति के आधार हैं। लोक देवों में सामाजिक विकास पर्यावरण संरक्षण, तथा लोक के प्रति समर्पित भाव को जगाते हैं। समाज के लिए कर्तव्य बोध पैदा करते हैं।

कांगरिया देव की पूजा में संगीत का भी बड़ा महत्त्व है – इनके भजनों को गाते हुए श्रद्धालु ढोल, मजीरे, झांझ, तंबूरे का उपयोग करते हैं। यह सब इतना लयकारी होता है कि आनंद विभोर हो जाते हैं।

बरोठा ग्राम में रामदेवजी

देवास जिले की समस्त तहसीलों के गाँवों में लोकदेव श्री रामदेवजी के स्थान, मंदिर और छोटी मंदरियाँ बनी है। समाज में वे मान्य तथा पूजनीय हैं। लोक मान्यता इतनी सघन है कि बरोठा ग्राम को (देवास जिला) दूसरा

[1] कांगरिया देव – भैसूड़ा पर्वत पर स्थित है।

[2] रूणिजा, राजस्थान के जैसलमेर जिले के पोकरण गांव 'रुणिजा' है, यहाँ श्री रामदेव जी तथा उनकी बहन डाली बाई सा. की समाधियाँ है। जहाँ सतत भजन कीर्तन तथा श्रद्धालुओं का मेला लगा रहता है।

'रुणिजा' माना जाता है। [2] बरोठा के मंदिर में रामदेवजी के 'पगलिए' (पाँवों की प्रतिकृति – संगमरमर पर) तथा मूर्ति स्थापित है। बरोठा ग्राम में 1555 ई. भादवा सुदी के दशमीं तिथि तक रामदेवजी का जन्मोत्सव प्रतिवर्ष मनाया जाता है। यह पर्व–उत्सव सात दिनों तक निरंतर चलता रहता है। अखंड भजन होते हैं। विभिन्न भजन मंडलियाँ – निरंतर रामदेवजी के मंदिर में भजन करते हुए अपना भक्ति मन से श्रद्धा व्यक्त करते हैं। भजनों में मंजीरे, तंबूरे, खड़ताल और ढोलक बजाई जाती है। साथ ही लयकारी से नृत्य भी किया जाता है। पूजा सनातन हिंदू पद्धति से ही होती है।

मन्नतें पूरी होने पर 'धजा' (ध्वज) सफ़ेद ध्वज तथा कपड़े पर बना घोड़ा चढ़ाया जाता है। प्रसाद के रूप में चूरमा, नारियल चढ़ाते हैं। रामदेव जी के जीवन चरित्र पर लोक नाट्य, आख्यान, कथा, गायन, वादन चलता है। समग्र समाज इसमें भाग लेता है। आर्थिक व्यय भी संपूर्ण समाज की जन भागीदारी से पूरा होता है।

रामदेवजी को भगवान श्री कृष्ण का अवतार कहा गया है। बरोठा (देवास जिला) में रामदेव जी के इस स्थान को लेकर कई घटनाएँ भी जुड़ी हैं। जैसे 1850 से 1855 के बीच न्यूनतम बारिश हुई – सूखे जैसे हालात थे। 400 गायों को पालने, पानी, चारे की विकट समस्या थी। शिवलाल नामक व्यक्ति इन 400 गायों को बरोठा ले आए। यहीं ठहर गए। यहाँ बरगद के वृक्ष के नीचे ज्योति जलाई इससे 1856 में व्यापक ज्वर की बीमारी खत्म हो गईं इसी ज्योति वाले स्थान पर मंदिर स्थापित है।

अनेक जनकल्याणकारी कार्यों तथा चमत्कारों, आस्था, घटनाओं से यह स्थान दूसरा 'रुणिजा' पुकारा जाता है। राजस्थान, मध्य प्रदेश, गुजरात से श्रद्धालु यहाँ आते रहते हैं।

तेजाजी

लोक देवों में तेजाजी भी व्यापक श्रद्धा, भक्ति और विश्वास के देवता हैं। आपको रक्षक देव के रूप में मान्यता प्राप्त है। तेजा दशमी पर समारोहपूर्वक पूजा अर्चन किया जाता है।

हमारे पूर्वज, विद्वान बताते रहे हैं कि 'लोक पक्ष' में विराजमान 'लोक देव में समग्र संस्कृति, इतिहास, साहित्य की विशाल परंपरा समाए हुए है। जैसे–जैसे इनके बारे में जानकारी मिलती है, शोध करते हैं तो व्यापक समृद्ध सामाजिक चिंतन परंपरा, ऐतिहासिक जानकारियाँ और सामाजिक विकास

की ऐतिहासिक यात्रा सुस्पष्ट नज़र आती है। हमारी संस्कृति संवर्द्धित होती है और तत्कालीन कुरीतियों से संघर्ष भी करती चलती है। लोक देव, समाज सुधार, मूल्यों के रक्षा, समता, बंधुता की धारा को विकसित करते चलते हैं। वर्तमान तथा भविष्य के लिए जहाँ विकास अनिवार्य है वहीं हमें अपने लोक पक्ष, अपनी भाषा, साहित्य और सांस्कृतिक सरस्वती की गुप्त धारा को अनिवार्यतः बचाना होगा। सांस्कृतिक अनदेखी करके सिर्फ ऊपरी विकास पर जोर देना हमें गहरे संकट में भी डाल सकता है।

ऐतिहासिक रूप से भाषा, साहित्य, परंपरा, मानवीय मानस और समाजिकता 'लोक' के गहरे परिश्रम साध्य कर्म, प्रतिभा, लगन, निर्माणकारी शक्ति का परिणाम होते हैं। इस धारा को समझना होगा।

इसका दर्शन हमें शास्त्रीय गायन में स्पष्ट दिखाई देता है। प्राचीन लोक को शास्त्रीयता में ढल कर विकसित होने में सदियों की मेहनत, प्रतिभा, शोध, रियाज की जरूरत होती है तभी शास्त्रीयता तानसेन, बैजू बावरा से होते हुए गुलाम अली, कुमार गंधर्व, रज़ब अली खाँ, अमीर खाँ, बेगम अख्तर, गिरिजा देवी, भीमसेन जोशी, अमजद अली खाँ, अजय चक्रवर्ती और मुकुल शिवपुत्र तक आती है। इस गुप्त सरस्वती की यात्रा का मार्ग कितना अजीब, कितना अनोखा है। कितना धैर्य, ज्ञान, कौशल, साहित्य, भाषाओं के हिमालयी क्षेत्र से वह गुजरता है। तब जाकर शास्त्रीयता की गंगा और हेमकुंड साहब बना है।

लोक साहित्य, लोक देवता, लोक बोली, लोक भाषा में लोक गायन, वादन में भारत, भारतीयता धड़कती है। इस धड़कन में 'वसुधैव कुटुंबकम्' का भाव संसार रचा जाता है। इस 'वसुधैव कुटुंबकम्' वाक्य की रचना और अर्थ तक कितनी बड़ी विकास यात्रा इस लोक ने की है। उसे देख आश्चर्यचकित होना पड़ता है। वह ही हमें गर्वमंडित भी करता है, वह ही हमें कर्त्तव्य बोध का अहसास जगाता है कि हमारी भूमिका क्या है ? हमारा योगदान कैसा होना चाहिए?

यहाँ किंचित विषयांतर करते हुए कहना चाहूँगा 'लोक' तथा सभ्यता के विकास में शोक–दुख, प्रसन्नता में भी इंसान ने गायन और नृत्य को अभिव्यक्ति का संसार बना दिया। भारतीय परिदृश्य में हम पाते हैं कि कठिन श्रम, सामूहिक परिश्रम का संगीत, गीत और वाद्य से अनोखा संबंध है। इस सबने इंसानी जिंदगी में कष्टों, दुखों को एक ऐसा मकाम दिया जो 'सभ्यता' का अनिवार्य हिस्सा बन गया।

'श्रम और उल्लास और शोक का संगीत से जुड़ाव नया नहीं है। ऋग्वेद में कपड़ा बुन रही स्त्रियों के काम के साथ गाने के संकेत हैं। उषा और निशा बुनकरियों की तरह अपने तार फैलाए हुए गीत गाते हुए सलीके से वस्त्र बुन रही है।'[1]

आज भी फसल काटते वक्त समूह गान सुनाई पड़ता है। काम से लौटती महिलाएँ गाते हुए आती हैं। दिन भर खेत–खलिहान, खदानों में काम से लौटते पुरुष चौपाल पर एकत्रित होकर झांझ, मजीरे, एकतारे, बजा–बजाकर गाते हैं। इन्हीं में लोकदेवों के भजन भी जुड़ जाते हैं।

'श्रम के साथ संगीत का जुड़ाव, भारत का विशिष्ट गुण है।'[2] विद्धानों ने भारतीय संगीत, साहित्य, लोक में गहरी सौंदर्य दृष्टि का गहन अध्ययन किया है। 'अपने गुण और दोष दोनों ही में यह विशिष्ट भारतीय सौंदर्य दृष्टि है जो अरुणाचल से लेकर कन्याकुमारी तक देखी जा सकती है।'[3]

भारतीय समाज के कई देवता बिना रूप और आकार के 'सिंदूर' चढ़ा कर पूजे जाते हैं। अनेकानेक संकेतों के सहारे पहचाने जाते हैं। इन सभी के साथ हमारी सामाजिक सौंदर्य दृष्टि का पता चलता है। देवास में इसके अनेक आयाम देखने को मिलते हैं। इस शहर पर, इसके सभी कस्बों, गाँवों पर इतना लिखा जा सकता है कि हज़ारों पृष्ठ भी कम पड़ेंगे।

देवास के उल्लासमय मानस में उसके अनेक क्षेत्रों में लगने वाले 'मेले' उसे प्रफुल्लित और आनंदवर्धक बनाते हैं। 'नर्मदा, बेतवा नदी मध्य प्रदेश की जीवन रेखा है। चंबल, ताप्ती, काली सिंध, क्षिप्रा, मंदाकिनी (पयस्विनी गंगा) आदि नदियाँ प्रमुख हैं। इनके पावन तट पर ओंकारेश्वर, महेश्वर, चित्रकूट, ओरछा, सांची, विदिशा, पचमढ़ी, दतिया, शिवपुरी, उज्जैन, देवास और मंदसौर (शिवना नदी) जैसे ऐतिहासिक–सांस्कृतिक नगर स्थित हैं, जबलपुर के निकट भेड़ाघाट पर धुआंधार प्रपात, महेश्वर का सहस्राधार प्रपात तथा रीवाँ के बहुती, केवती एवं चचाई प्रपात मध्य प्रदेश की नैसर्गिक सुषमा में चार चाँद लगाते है।'' [4]

ये सभी नदी किनारों के नगर तथा क्षेत्रों में लोक मेले, तथा जातराएँ लगती हैं। देवास में तो नदी, तालाब, सरोवर सभी स्थानों पर मेलों के साथ

---

[1] भारतीय सभ्यता की निर्मिति – भगवानसिंह, पृष्ठ 208

[2] भारतीय सभ्यता की निर्मिति संगीत और श्रम – भगवानसिंह 'इतिहास बोध प्रकाशन', इलाहाबाद –प्रथम संस्करण अप्रैल, 2004, पृष्ठ 209

[3] भारतीय सभ्यता की निर्मिति – भगवानसिंह, पृष्ठ 212

[4] मध्यप्रदेश के मेले और तीज त्यौहार, म.प्र. जनसंपर्क का प्रकाशन 2010, ले. अयोध्या प्रसाद गुप्त :कुमुद', पृष्ठ 13

सांस्कृतिक गतिविधियों की पूरी शृंखला चलती है। जो सामाजिक सद्भाव सामाजिक एकता, मातृभाव को निरंतर पुष्ट करते चलती है।

देवास जिले में लगने वाले मेलों की सूची पर निगाहें डाले –

- चामुंडा माता मेला – देवास
- आत्माराम बाबा मेला – तहसील नेमावर, जिला देवास
- चंद्रशेखर महोदव मेला – तहसील पुंजापुरा, जिला देवास
- महाशिवरात्रि मेला – तहसील भौंरासा, जिला देवास
- शिवरात्रि मेला – तहसील बिलावली, जिला देवास
- रामनवमी मेला – तहसील हाटपीपलिया, जिला देवास
- चामुंडा नवरात्री मेला – देवास एवं गंधर्वपुरी, जिला देवास
- भुवनेश्वरी मेला – गंधर्वपुरी [1]
- ललित पुष्पा मेला – तहसील पीपलराँवा, जिला देवास
- बिजासनी मेला – तहसील सन्नौड़ खातेगाँव, जिला देवास

इन मेलों ने देवास के जन–जीवन में अपार प्रेमपूर्ण, भक्तिभाव, साहचर्य, उमंग और उत्साह का निरंतर संचार किया है।

मेरे लिए वह दृश्य बेहद प्रेरणास्पद और भारत की आत्मा को जानने, समझने और स्वयं में अनुभव करने का होता है। जब देवास, या नेमावर (तहसील खातेगाँव) भौंरासा (देवास) चंद्रकेशर, चंद्रशेखर महादेव मेला (पुंजापुरा), सीता मंदिर मेला (पीपरी) आदि क्षेत्रों में जाता हूँ। वैसे वर्षों से जाता रहा हूँ। देखता हूँ कि आम जनता के जत्थे के जत्थे सर पर पोटली रखे, नंगे पैर परिवार सहित धूल भरी सड़कों या पगडंडियों से धूप में चले आ रहे हैं। कहीं भी ठहर जाते हैं, उठते हैं और फिर चल देते हैं। कहीं किसी सुविधा या राहत की कोई शिकायत उनके होठों पर नहीं होती। बस तीर्थ यात्रा जहाँ यात्रा है वहीं हमसफर यात्री है – सीधा संवाद करते, सुख–दुख बाँटते, एक दूसरे का बोझ उठाते, वृद्धों की मदद करते चले जा रहे हैं। मानों कितनी लंबी, विशाल और अनंत यात्रा पर निकले हों। मंदिरों के दर्शन, नर्मदा और क्षिप्रा नदी में स्नान कर आगे बढ़ते हैं। आकाश के नीलेपन में सुदूर दृष्टि दौड़ा कर ईश्वर या परम शक्ति से अपनी बोली भाषा में प्रार्थना करते हुए दुआएँ माँगते लोग, गहरे संतोष की आभा लेकर लौटते हैं। उनके साथ होते है कई किस्से, कई स्मृतियाँ होती हैं।

[1] गंधर्वपुरी (गंधावल) देवास जिले की सोनकच्छ तहसील में है। विक्रमादित्य के पिता गंधर्वसेन की राजधानी थी (ई.पू. प्रथम सदी में)

मैं अभिभूत होता हूँ और विचार करता हूँ कि ये निःस्वार्थ, यात्राएँ ये मेले, पर्वों ने ही देश को जीवंत कर रखा है। मध्यकालीन – कठिनाइयों और विपरीत परिस्थितियों में भी देश को इसी 'लोक' ने बचाया है। क्या गीता का यह श्लोक प्रासंगिक नहीं है।

नैनं छिदंति शस्त्राणि, नैनं दहति पावकः
न चैनं क्लेद यन्त्यापो न शोषयति मारुतः

लोक की आत्मा अमर है उसे 'इतिहास' के किसी भी मोड़ पर कोई भी घटना – कोई भी अत्याचारी छू नहीं सका। कितना धैर्यवान्, कितनी वीरता से भरा समाज है! जो अपनी संस्कृति की गुप्त सरस्वती और उसके प्रवाह को बनाए और बचाए रखता है। उस सांस्कृतिक धारा के निरंतर परिष्कार में विक्रमादित्य, भोज, कालिदास, नानक, मीरा, तुलसी, जायसी, कबीर, रामानंद, रैदास, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, नामदेव, बहिणाबाई, चैतन्य महाप्रभु, दादू तिरूवल्लुअर जैसी प्रतिमाएँ पैदा होती हैं। यह सिलसिला निरंतर बढ़ता है। राजा राममोहनराय, ईश्वरचंद्र विद्यासागर से ज्योतिबा फुले, सावित्री फुले गांधी, बादशाह खान से लेकर अम्बेडकर, महामना मदन मोहन मालवीय–जैसे रत्न भी जगमगाते हैं।

देवास, मालवा क्षेत्र मध्य प्रदेश के कई सूत्र थमा देता है। यह सूत्र बड़ी ही आसानी से देश की मूल मुख्यधारा से संपृक्त हो जाते हैं। यहाँ एक बात कहना चाहूँगा। आमतौर से देश में राष्ट्रीय तथा क्षेत्रीय या आंचलिकता का प्रयोग 'साहित्य तथा संस्कृति' तथा बोली भाषा के संदर्भ में किया जाता है।

लेकिन यह शब्दावली या विभाजन (वर्गीकरण) वैज्ञानिक तथा सांस्कृतिक रूप से ठीक नहीं है। जहाँ तक भाषा का सवाल है भारत की कोई भी भाषा क्षेत्रीय नहीं है। वह भाषा अखिल भारतीय ही है क्योंकि उन भाषाओं में उसके साहित्य में 'अखिल भारत' का कथ्य, शिल्प, विन्यास और अभिव्यक्ति समाई होती है। ये तमाम भाषाएँ समग्र भारतीय साहित्य का निर्माण करती है। उदाहरण देना चाहता हूँ।

प्रेमचंद जी का साहित्य केवल हिंदी का ही है? क्या उसमें भारत की आवाज और आत्मा नहीं है ? हिंदी स्वयं अपनी सीमाओं का अतिक्रमण करती है। यही बात देश की विभिन्न भाषाओं की है। गुरुदेव रवींद्रनाथ ठाकुर की *गीतांजलि* और *गोरा* उपन्यास क्या सिर्फ बांग्लाभाषियों के लिए ही हैं? ये रचनाएँ बांग्ला भाषा में जरुर है लेकिन इसका साहित्य अखिल भारतीय महत्त्व का है। वही बात काज़ी नजरूल इस्लाम (बांग्ला), बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय,

शरदचंद्र चट्टोपाध्याय, ताराशंकर बंधोपाध्याय, महाश्वेता देवी, शंकर, विमल मित्र, प्रेमेंद्र मित्र आदि के साहित्य में भी है। वहीं ओड़िया के सीताकांत महापात्र हों या मलियाली तकषी शिवशंकर पिल्लई हों, गुजराती के उमाशंकर जोशी, पन्नालाल पटेल हों, मराठी के वि.स. खाण्डेकर, पु. ल. देशपांडे, शिवाजी सांवत हों। असमी के वीरेंद्र कुमार भट्टाचार्य हों या इंदिरा गोस्वामी, पंजाबी के नानकसिंह हों या कश्मीर के रहमान राही हों, राजस्थान के विजयदान देथा हों, कर्नाटक के पुटप्पा, भैरप्पा हों। बोडो साहित्य हो या मीजो या मणिपुरीः अरुणाचल से कन्याकुमारी तक का साहित्य, भाषाई सीमा को फलाँग कर वह अखिल भारतीय हो जाता है। अतः समस्त भारतीय भाषाओं में व्यापक भारतीयता का स्पंदन एवम् अहसास की सरस्वती निरंतर बहती है।

सिंधी भाषा का साहित्य समग्र भारतीय आत्मा की अनुगूँज से भरा है। सिंधी लेखक निर्मलदास फतेहचंद, हकीम फतेह मुहम्मद, बूलचंद दयाराम, लीलाराम प्रेमचंद, गुरुबक्षाणी, जेठमल परसराम, भेरूलाल मेहरचंद, लालचंद अमर डिनोमल, सिंधी भाषा के साहित्य की आत्मा के चितेरे हैं और भी अनेकानेक सिंधी लेखकों ने सिंधी में भारतीय विचार–दर्शन, मनुष्य, समाज, धर्म, श्रम आदि का विषद विवेचन किया है।

हमारी भारतीय भाषाएँ पृथक् दिखती हैं लेकिन वे एक–दूसरे से विपरीत नहीं है। भिन्नताएँ, पृथकताएँ नहीं हैं, हमें इस तथ्य को ज़रूर जानना होगा। भाषा और साहित्य की चर्चा में देवास की बोली, भाषा वहाँ में रचे गए साहित्य की चर्चा जरूरी है। देवास को व्यापक ख्याति दिलाने में यहाँ के लेखकों का बड़ा योगदान है।

वैसे तो देवास में साहित्य की परंपरा काफी प्राचीन है। राजपूतों के शासन तक और पठानों के शासन में रहने के बाद, मुगलों से लेकर अफगानों के अधीन मालवा रहा है लेकिन यह देखा गया कि चाहे शासन जिसका भी हो 'लोकपक्ष' ने अपनी परंपरागत गायन, वादन, श्रुति को जिंदा रखा जिन्हें कालांतर में लिपिबद्ध किया गया।

देवास के साहित्यिक या परिवेश में वाचिक परंपरा के कवि महत्त्वपूर्ण हैं। आख्यानों, प्रवचनों में पौराणिक से लेकर नैतिक शिक्षा की कहानियों तक, साथ ही वर्तमान दौर के उदाहरण भी स्थानीय बोली में है। यह ध्यान रखना पड़ेगा कि मालवा में विक्रमादित्य तथा राजा भोज के 'परमार' शासन तथा उसके परिवेश ने मालवा को सुसंस्कृत और समृद्ध बनाया था। यह समृद्धि

साहित्य, निर्माण, गायन वादन, और कला के अन्य माध्यमों के साथ चित्रांकन में भी स्पष्ट नज़र आती है। मालवा के सिंधुराज के यशस्वी पुत्र भोज (1010 से 1055 ई.) था, जो एक कला प्रेमी राजा के रूप में ख्यात था।

वाचिक परंपरा से यह जानकारी मिल जाती है कि अकबर ने मालवा पर आक्रमण कर पठान शासक बाजबहादुर [1] को हराया था। बाजबहादुर अच्छा गायक और संगीत प्रेमी शासक था। उसकी पत्नी रानी रूपमती का संगीत प्रेम सर्वत्र विख्यात है। बाजबहादुर तथा रूपमती की प्रेम कहानी पर कई सफल फिल्में बनी हैं। मुगल आधिपत्य से मालवा में अव्यवस्था फैली। भोज की परंपरा को ठेस लगी लेकिन लोक जीवन में गहरे बैठे साहित्य और संगीत लोक संस्कृति को नया आयाम मिला। लोक चेतना सघन हुई और परंपरा को बचाने का निरंतर प्रयास हुआ।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान भी देवास के ग्रामीण लोक जीवन में रचे बचे काव्य, बारता, आख्यानों, भजनों, लोकमंच (माच) रूप बसंत, रामचरित मानस – रामलीला आदि ने संस्कृति जागरण के आभियान को जारी रखा।

यहाँ फारसी ग्रंथों के हिंदी, मोढ़ी, लिपि में अनुवाद भी मिलते हैं। कई साहित्यिक कृतियों का जिक्र स्थानीय बोली मालवी के गीतों में मिलता है, जो स्वतंत्रता की भावनाओं से ओत–प्रोत है।

स्वतंत्रता संग्राम के दौरान 1928–35 के बीच एक बढ़िया गीत – विकसित हुआ। उसमें साहित्य तथा मालवी लोक भाषा का अद्‌भुत मिश्रण है तथा स्वतंत्रता में निहित आशा और उम्मीदों का भी शानदार चित्रण है। यह गीत भारत के दो महान कहानीकारों की कहानियों से विकसित हुए हैं।

श्री चंद्रधर शर्मा गुलेरी की प्रसिद्ध कहानी 'उसने कहा था' जो 1916 में प्रकाशित हुई थी। इस कहानी ने जबरदस्त लोकप्रियता पाई थी। देवास में जब मैं कक्षा नवीं में पढ़ता था उस वक्त हमारे सीनियरों में तथा अन्य लोगों में प्यास लगने पर एक वाक्य बड़े ही शानदार तरीके से बोला जाता था – 'ला वजीरा पानी पिला दे'। हमारे कई शिक्षक भी जमाल चाचा को जो इसी शासकीय विद्यालय में कार्यरत थे, से कहते सुना है। 'वजीरा पानी पिला दे' 'उसने कहा था' की कहानी की प्रसिद्ध पंक्ति थी। जमाल चाचा पानी लाकर कहते : वजीरा पानी ले आया सर, पीजिए। हाँ, तो मैं कह रहा था कि गीत के सिलसिले में 'उसने कहा था' कहानी का लहनासिंह तथा प्रेमचंद जी की कहानी 'ठाकुर का कुआँ' का पात्र 'जोखू' है जो ठाकुर के कुएँ से पानी नहीं

[1] कुमार बायजिद

पी सकता था। इन दोनों कहानियों को प्रभाव भारतीय जनमानस पर गहराई से पड़ा है।

मालवा के देवास, उज्जैन, रतलाम, शाजापुर जिलों में स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान इन कहानियों के पात्र कहानी से निकल कर लोक में आ बसे थे। गीत यूँ है –

अमर सर में मेलो भरेगा
अने लहणों आवेगो
कुआ मेरे खड़ियो वजीरो
जोखू पाणी पीवेगो [1]

स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में 'उसने कहा था' के पात्र का विदेशी धरती, साम्राज्यवादी ताकतों के लिए अपने देश के बहादुर, ईमानदार और समर्पित बेटे को जनमानस मरते हुए देखना नहीं चाहता था। कहानी में पात्र शहीद हो गया है। लेकिन जनमानस और उसकी गहरी आशावादिता उसका इंतजार कर रही है कि अमृतसर में 'मेला भरेगा' और उन खुशियों में लहनासिंह जीता जागता लौटेगा। जनमानस महसूस करता है कि 'ठाकुर के कुएँ' से जोखू को पीने का पानी नहीं दिया जाता वह नाली का गंदा पानी पीने को मजबूर है। जातिवाद, ऊँच–नीच के खिलाफ लोगों में यह उम्मीद थी कि आजादी के बाद समाज बदलेगा।

इसीलिए लहना पानी पिलाने वाले वजीरासिंह को कुएँ के पास खड़े पाता है। आशा करता है कि मरते हुए लहनासिंह को पानी पिलाने वाला वजीरासिंह इस अमानवीय जंग में घायल जोखू को भी पानी पिलाएगा।

इन दोनों कहानियों के लेखकों को कभी पता ही नहीं चला होगा कि वे अपनी कहानियों में नये समाज के सपनों को तामीर कर रहे हैं।

देवास में प्रचलित यह गीत कांग्रेस के जलसों तथा सभा में वक्ता द्वारा गाया जाता था। कितनी उम्मीदों के बाग उगे थे। स्वतंत्रता ने हमारे समाज में गहरी उर्जा भर दी थी। स्वतंत्रता के पश्चात् कई उम्मीदें धराशाई हो गईं। हालांकि स्वतंत्रता का अपना महत्त्व तो है ही उसके अपने सकारात्मक पहलू भी हैं। साहित्य की दृष्टि से देखें तो प्रेमचंद का *गोदान, प्रेमाश्रम, गबन, रूठी रानी, सोजेवतन, पंचपरमेश्वर, ईदगाह, नमक का दरोगा, सेवा सदन 'रंगभूमि'* पूरा साहित्य समाज की पड़ताल करके – भारत को समग्रता में देखता है और गहरा आशावाद सामने रखता है। यह आशावाद समग्र

[1] यहाँ अमर सर याने ''अमृतसर'' है। अने – और, मेरे – पास में, मेलो – हाट बाजार, मेले जतरा।

भारतीय संघर्षरत जनता का था। 1947 से 1957 के दशक में फणीश्वरनाथ रेणु का *मैला आँचल, परती परीकथा* जैसी रचना में गहरा मोहभंग भी है। ये दोनों उपन्यास साहित्य हमें अपनी जड़ों की तलाश, पुनर्व्याख्या, पुनरवलोकन की जरूरत महसूस कराते हैं। मुझे लगता है 1957 से आज तक यह सवाल हमारे समाज के समक्ष लगातार उपस्थित है।

देवास के बारता कहने, सुनने की परंपरा रही है इसलिए पढ़े–लिखे लोग अखबार, पुस्तकें, समाचार पढ़ कर सुनाया करते थे। यह जानकारियों का भरोसेमंद स्रोत था। स्वतंत्रता संग्राम के दौरान जानकारियाँ अबाध गति से जनता को मिलती थी। घरों के ओटले, चौपाल, बैठक, सत्संग और मंदिर सूचना और विचार–विमर्श के केंद्र भी थे। जिस तरह लोक साहित्य, लोक देवता के भक्ति गीतों के लिए लोग एकत्रित होते थे। वहीं स्वतंत्रता संग्राम में लोक जागरण, राष्ट्रीय विमर्श के केंद्र भी सहज रूप से बन गए थे। ये केंद्र सामाजिक चेतना, एकता, सौहार्द के भी केंद्र थे। देवास के परिवेश को निर्मित करने में उसकी विशिष्ट संस्कृति की निर्माण में महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

देवास तथा देवास जिले की प्रागैतिहासिकता

अपने नगर, शहर को जीते हुए कभी–कभी यह ख्याल आता है कि अपनी इस धरती का, अपने इस नगर देवास का दूर कहीं सुदूर इतिहास भी तो होगा ही। इसे जानने की तीव्र इच्छा हमेशा रही। घर में स्वतंत्रता आंदोलन का वातावरण था ही। राष्ट्र, समाज, साहित्य, इतिहास की बातें होती रहती थीं। इतिहास की घटनाएँ कहानियों के रूप में सामने आतीं, इस पृष्ठभूमि से इतिहास को जानने, समझने की रुचि पैदा हुई यह रुचि दूर तक इतिहास में ले गई, उस क्षितिज के पार, इतिहास की सीमाओं से दूर प्रागैतिहास के दौर में ले गई

देवास के क्षेत्र में 20 लाख वर्ष से 10 लाख वर्ष पूर्व के आदिम मानव के विकास के सोपान मिलते हैं। वैज्ञानिकों, पुराविदों के अनुसार सब से प्राचीन मानव नर्मदीय उच्छीर्ष मानव (होमो इरेक्टस) इस क्षेत्र में आया। इसी होमो इरेक्टस मानव के द्वारा निर्मित गोलाशय उपकरण देवास जिले की बागली तहसील के ग्राम पुंजापुरा, पलासी, बोर पड़ाव, पोस्तीपुरा में बहुतायत से पाए जाते हैं। इन गोलाशयों की प्राप्ति भारतीय प्रागैतिहासिक काल की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। पुंजापुरा ग्राम [1] के पूर्व में गोलाशय, कुदालें पाई गई हैं। इन उपकरणों से विकास तथा सभ्यता के विकास के पायदान का पता चलता है।

निःसंदेह देवास जिले का यह क्षेत्र मालवा के पठार और नर्मदा नदी के बीच है। जो आदिम समय से सभ्यता के विकास के अध्ययन का श्रेष्ठ क्षेत्र है।

देवास जिले की बागली तहसील सागौन के खूबसूरत जंगलों के लिए प्रसिद्ध है तो वहीं इसी तहसील के ग्राम पुंजापुरा से 5 कि.मी. पूर्व में पलासी नामक गाँव है। वहाँ मैं अनेक बार गया। किंवदंतियाँ सुनीं, वैज्ञानिक जानकारियाँ हासिल कीं, पुराविदों से चर्चा की। वाकई यह गाँव बेहद महत्त्वपूर्ण गाँव है। जिसकी किसी भी तरह उपेक्षा नहीं की जा सकती। पुंजापुरा से पलासी गाँव जाते वक्त रास्ते में भूरियापुरा गाँव भी नजर आता है। बीच में पारस नदी यानी पहाड़ी नदी भी थी। इसी नदी के नाम से 'पारस' गाँव का नाम भी पड़ा। अनेकानेक माँग पत्रों, बार–बार उठती माँगों, कभी

---

[1] ग्राम पुंजापुरा, पलासी, बोर पड़ाव, पोस्तीपुरा एवं रूपलीपुरा मैं मैंने स्वयं जाकर देखा है, अनेक सामग्री एकत्र करके विद्यालय में रखी थी। जिसे कई पुराविदों ने परखा था। इस सामग्री पर प्रख्यात पत्रिका *धर्मयुग* (मुंबई) में मेरा 1979–80 में लेख छपा था।

छोटे–मोटे सीमित आंदोलन 'पारस पर बाँध' बनाने के लिए चले पारस गाँव, भूरियापुरा, पुंजापुरा, मानसिंहपुरा, भीकूपुरा, चंद्पुरा आदि के किसान तथा खेती आश्रित जन जाति कोरकू भील जानते थे कि 'पारस' जो पहाड़ी (विध्यांचल पर्वत माला का हिस्सा) नदी है। बाँध बन जाए तो वर्षों से जो जमीन उर्वरकता का खजाना अपने आँचल में छुपाए हुए है – वह 'पारस' का जल मिलते ही 'सोना' उगलने लगेगी। इन गतिविधियों और जनभावना का मैं प्रत्यक्ष गवाह रहा हूँ। खैर आगे जो भी हुआ जनता, शासन, राजनीति का ध्यान 'पारस' पर गया और बाँध बना विशाल जलाशय पहाड़ियों के बीच झील की तरह चमक उठा। नहरों से कृषि जन–जीवन में जिंदगी की बहारें आईं। अब यह क्षेत्र आर्थिक रूप से श्री समृद्ध है। औसत आमदनी का दर ऊँचा है। उत्पादन का प्रतिशत भी काफी बढ़ा। इसी समृद्धि से संलग्न बैंक, शिक्षा, चिकित्सा संचार की पर्याप्त सुविधाएँ यहाँ आ गईं क्या इसे प्रतीकात्मक रूप से कहा जाए तो यूँ कहा जा सकता है कि 'पारस' ने इस क्षेत्र के 'लौह आवरण' को छू कर स्वर्ण में तब्दील कर दिया है।

हाँ तो मैं कह रहा था कि पलासी गाँव [1] बेहद महत्त्वपूर्ण गाँव है। पलासी गाँव में उसके ठीक सामने 'चीरा पहाड़' है। यह पहाड़ अपने विशिष्ट पत्थरों के कारण आकर्षण का केंद्र है। इसी पहाड़ी पर लाखों की संख्या में पाट के (बीम की तरह) आकार के पत्थर जमे हुए रखे हैं। ये पत्थर शटकोणीय है, पत्थर उत्तर तथा दक्षिण की तरफ झुके हुए हैं। ये लघु अश्मोपकरण (माइक्रोलिथस) के बने हैं। भू वैज्ञानिकों की भाषा में इन्हें 'कॉलमनर बसाल्ट' कहा जाता है।

यह महत्त्वपूर्ण इसलिए भी है कि पलासी गाँव से नर्मदा [2] के किनारे तक का क्षेत्र मानव विकास के अध्ययन का स्वाभाविक क्षेत्र है। प्रख्यात पुराविद पद्म श्री डॉ. वि.एस. वाकणकर ने बार–बार जोर दे कर कहा था कि इस क्षेत्र को 'नेचुरल गार्डन' की तरह सुरक्षित रखना चाहिए। [3] क्योंकि आदिम मानव से होमो इरेक्टस तक तथा औजार निर्माण की विभिन्न विकास यात्रा का दर्शन एक ही स्थान पर हो जाता है। यह क्षेत्र वैज्ञानिक पर्यटन के रूप में भी विकसित किया जा सकता है। यह विशाल संग्रहालय भी यहाँ बनाया जा सकता है। यह संग्रहालय 'मानव सभ्यता अध्ययन केंद्र' के रूप में ख्यात हो सकता है। निःसंदेह म.प्र. शासन तथा भारत सरकार को इस पर ध्यान देकर सकारात्मक पहल करनी चाहिए।

[1] पुंजापुरा से पूर्व में 5 कि.मी. दूर

[2] नर्मदा नदी, देवास जिले की सीमा निर्धारित करती है। पुंजापुरा – पलासी से नर्मदा की दूरी 25 से 30 कि.मी. है।

[3] स्व. वी.एस. वाकणकर के साथ लेखक स्वयं अध्ययन यात्रा में साथ रहा है।

पुंजापुरा के पश्चिम में उदयनगर कस्बा है। इसी मार्ग पर किशनगढ़ गाँव भी है। इसी के पास से पीपरी नामक गाँव की तरफ रास्ता जाता है। पीपरी–पोटला ग्राम के पास 'कावड़ा–कावड़ी, का पहाड़ है। यहाँ भी पलासी ग्राम की तरह 'चीरा पत्थरों' (कॉलसनर – बसाल्ट) की जमावट है। लाखों पत्थर जमे हैं।

देवास जिले में अनेक स्थानों जैसे बिलावली, बांगर, आदि में ताम्राश्वयुगीन (Copper Age) मृदभाण्ड (Earthen Pot) मृण्मूर्तियाँ (Terra Cota) मनकें आदि भी प्राप्त हुए हैं।

इतिहास के पन्नों में देवास

प्रागैतिहासिक गुफाओं में देवास का सुदूर अतीत का समृद्ध खजाना भरा पड़ा है जो खोजकर्ताओं को निरंतर आकर्षित करता है। इस समृद्धि का अहसास जनमानस में धड़कता रहता है। इस धड़कन से हमकदम होता इतिहास भी उसी तरह जीवित है। इतिहास के पन्नों में भी देवास ने अपनी पहचान बनाई है। पहचान ही नहीं वरन राष्ट्रीय इतिहास और संस्कृति में अपनी उपस्थिति की अनिवार्यता भी सिद्ध की है। देवास की सृजनशीलता उसकी रचनात्मकता से जुड़ा हुआ है। आगे जब इसकी चर्चा होगी तो कई आयाम भी उभर कर सामने आएँगे। नर्मदा, क्षिप्रा, कालिसिंध, नाग धम्मन जैसी नदियों का यह क्षेत्र इतिहास में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है।

अपने अतीत पर और अपने गौरवशाली इतिहास पर किस कौम को अभिमान नहीं होगा? मौर्यकाल भारत का महत्त्वपूर्ण युग रहा है। जिसमें देश का स्वाभिमान, समृद्धि, उन्नति, सामाजिक, भौगोलिक एवं राजनैतिक एकता पर आम सहमति स्थापित हुई थी। एक मजबूत राष्ट्र के रूप में भारत ने अपने कदम बढ़ाए थे। अवंतिका (उज्जैनी) प्रदेश के प्रांतपाल के रूप में अशोक ने मालवा पर अपनी प्रभावी तथा शालीन शासन शैली से मालवा के प्रत्येक हिस्से पर अपनी अमिट छाप छोड़ी थी। नगर देवास से 5 कि.मी. दूर बिलावली ग्राम में एक टीले के उत्खनन में मौर्य काल की महत्त्वपूर्ण सामग्री प्राप्त हुई है। *

रूपनाथ शिलालेख में अंकित है कि यह क्षेत्र मौर्य शासन के अंतर्गत ही था। नागदा [1] उस समय नगर के रूप में विकसित था और व्यापार का बड़ा केंद्र बन चुका था। नाग धम्मन नदी क्षिप्रा की सहायक नदी थी। आसान

* बिलावली ग्राम – देवास 5 कि.मी. उत्तर पूर्व में एबी रोड एन.एच. 3 पर स्थित है। अब यह ग्राम देवास नगर पालिका निगम का वार्ड है।

[1] नागदाः देवास के दक्षिण में 10 कि.मी. है। यह ग्राम अब देवास नगर पालिक निगम का वार्ड है।

विशाल पाट (चौड़ाई) होने से उज्जैन से जल परिवहन था। उसी में पालदार नावें चलती थी। वाकई जल परिवहन ने इस क्षेत्र की समृद्धि में जबरदस्त भूमिका निभाई थी। नागदा में धातु उद्योग, मोती, चांदी, सोना, लकड़ी का काम और अन्य घरेलू आवश्यकता की वस्तुओं सहित सजावट की सौंदर्य सामग्री भी निर्मित की जाती थी।

पालदार नावों के कारण देवास तथा नागदा के बीच के एक गाँव का नाम ही 'पालनगर' हो गया। हुआ यूँ कि उज्जैन से क्षिप्रा नदी में पालदार नावों का आवागमन होता, ये पालदार नावें क्षिप्रा की सहायक नदी 'नाग धम्मन' नदी में प्रवेश करके नागदा के पास के घाटों के किनारे आकर रुकती थी। यहीं पर यात्री का सामान उतारा–चढ़ाया जाता था। पालदार नावों से पूरा क्षेत्र बड़ा ही सुंदर नजर आता था। कालांतर में यह 'पालनगर' के नाम से जाना गया। [1]

अशोक अपने प्रांतपाल के शासन के दौरान कई बार देवास आए। हाँ इतना तय है कि मौर्य काल में नागदा, देवास का क्षेत्र काफी उन्नत रहा है। पूरे मालवा में शांति–समृद्धि और सुव्यवस्था चारों तरफ देखी जाती थी। समय अपनी गति से चलता है। चीजें बदलती रहती हैं। राजनीति और शासन भी समय के साथ बदलते हैं। उसी के चलते इतिहास भी नई करवटें लेता है। महान् अशोक अपने पिता बिंदुसार मौर्य के बाद सम्राट बना। उसने अपने पराक्रम, प्रतिभा, धर्म पालन और नैतिकता से विशाल भारतीय राष्ट्र का निर्माण किया। लेकिन इस महान राष्ट्र की (साम्राज्य) वैसी रक्षा तथा व्यवस्था उसके उत्तराधिकारी नहीं कर पाए। मौर्यवंश के अंतिम शासक वृहद्रथ के समय स्थिति बिगड़ गई मौर्य शासन के सेनापति पुष्यमित्र शुंग ने वृहद्रथ को ईसा पूर्व 184 में अपदस्थ कर दिया। पुष्यमित्र के बेटे अग्निमित्र का मालवा के विदिशा पर शासन था। इसी ने नर्मदा पार स्थित विदर्भ नरेश को पराजित किया था। देवास ने प्रत्यक्षतः अशोक का शालीन, प्रभावी और सुसमृद्ध शासन देखा था। वहीं मौर्यवंश के बाद शुंगवंश को भी उन्होंने देखा। इतिहास के अनेकानेक पृष्ठ देवास की भूमि पर खुलते हैं, वक्त की हवाओं में फड़फड़ाते हैं। जहाँ वाक्य अपने अर्थों की गंध लिए कहानियों, गीतों, किंवदंतियों, बारताओं में समा जाते हैं। लोक और इतिहास की पुराकाल और पौराणिक काल की खूबसूरत जुगलबंदी मालवा के लोक जीवन में रची–बसी है। इस इतिहास को देवास के नागदा, पीपरी, पलासी, गंधर्वपुरी, बिजवाड़,

[1] पालनगरः देवास से नागदा जाते समय सड़क किनारे स्थापित है। नागदा के करीब बसा गाँव (लगभग 1 कि.मी के फ़ासले पर स्थित है)

नेमावर, भौंरासा, सोनकच्छ, पीपलरांवा, देवबड़ला आदि स्थानों पर गहराई से महसूस करते हैं।

गुप्त एवं औलिकार

शक–कार्दमक शासकों के बाद गुप्त नरेशों का शासन यहाँ रहा। मालवा के मंदसौर से प्राप्त शिलालेख में कुमारगुप्त का उल्लेख बतौर शासक (अधिपति) के रूप में हुआ। बंधुवर्मन और गोविंदगुप्त राज प्रतिनिधि थे। यहाँ से प्राप्त पाषाण स्तंभ के लेख से स्पष्ट होता है कि उसके कार्यकाल में हूणों के आक्रमण से शासन व्यवस्था, सामाजिक तानाबाना तथा आर्थिक स्थिति भंग हुई थी।* कुमारगुप्त के बाद उसके पुत्र स्कंदगुप्त (ई.स. 455–60) में शासक हुआ। स्कंदगुप्त ने अपनी जनशक्ति तथा पराक्रम से श्वेत हूणों के प्रचंड आक्रमण को ध्वस्त कर दिया। लेकिन बार–बार के हमलों से मालवा तथा उसका जन–जीवन अस्त–व्यस्त हो गया। अंततः भानुगुप्त के शासनकाल में 484 ई. के कुछ ही समय बाद तोरमाण हूण ने इस क्षेत्र पर अधिकार कर लिया।

484 ई. से 510 ई. तक मालवा तथा उसके तमाम क्षेत्रों में विशिष्ट जन–जागृति पैदा हुई सभी शासकों ने पिछले इतिहास से सबक लिया। देशी–विदेशी के फर्क को स्पष्टतया समझा गया।

तोरमाण हूण के कब्जे में जहाँ यह क्षेत्र प्रताड़ित हुआ। वही तोरमाण के उत्तराधिकारी मिहिरकुल (510 ई.) के शासन में अत्याचारों की अति की जाने लगी। नृशंसतापूर्वक मालव जन को प्रताड़ित किया गया। समग्र मालवा, विध्यांचल की पर्वतमाला में (शाजापुर, देवास, सीहोर–विदिशा, मंदसौर, नीमच, धार) मालव जन में विद्रोह फूट पड़ा। ऐसे में इस अत्याचारी शासक तथा शासन की कुव्यवस्था को खत्म करने के लिए भारतीय शासक मगध नरेश नरसिंह गुप्त, बालादित्य और मंदसौर के राजा यशोवर्मन का संयुक्त मोर्चा बना। यशोवर्मन के अधीन संयुक्त भारतीय शक्ति ने 'हूणों' को निर्णायक रूप से बुरी तरह पराजित करके मालवा से खदेड़ दिया। यहाँ महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इतिहास में जो घटना घटी थी उसके दूरगामी प्रभाव भारत की राजनीति और शासन पर पड़ा। मालवा से विदेशी आक्रमणकारियों तथा बलात् कब्जा किए आक्रांताओं को खदेड़ने के लिए 'राष्ट्रीय सहमति' बनी थी। इस भारतीय सहमति तथा प्रयास ने आगामी समय को प्रभावित किया। यह चेतना बन कर देवास सहित मालवा के चप्पे–चप्पे में बस गई जो आगे चल कर अन्य गतिविधियों में परिलक्षित हुई

* मंदसौर म.प्र. का महत्त्वपूर्ण जिला है – देवास से उत्तर पश्चिम में है यहाँ से उज्जैन – नागदा – जावरा होते हुए पहुँचा जा सकता है।

यशोवर्मन के काल में सांस्कृतिक उपलब्धियाँ महत्त्वपूर्ण थीं।

कभी लगता है कि हम जिस जमीन पर खड़े हैं या जिस परिवेश में जीवनयापन कर रहे हैं उसका इतिहास और संस्कृति से क्या संबंध होगा? ख्याल भी नहीं आता। सोचने में यह भी आता है कि इतिहास कहीं दूर खड़ा है। महान शासन कहीं और होते हैं लेकिन इतिहास और संस्कृति, साहित्य, ललित कलाओं के अपने घर होते हैं। जहाँ हम खड़े हैं वहीं प्रखर शासक, महान रचनाकार, श्रेष्ठ गायक, कलाकारों की यह भूमि थी। देवास का यह क्षेत्र इतिहास–संस्कृति–ललित कलाओं का आँगन रहा है। जो आज तक भी वैसा ही है। तमाम विकास के बावजूद अनुकूलता तथा प्रतिकूलताओं के बीच रचनात्मकता, सृजनशीलता की 'सरस्वती' निरंतर बहती रही। देवास के क्षेत्र इसके जीवित गवाह हैं।

परमार काल और देवास

मालवा के किसी भी हिस्से के बारे में लिखते समय समग्र मालवा को देखना चाहिए। क्योंकि देवास–देवास जिला मालवा का महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। मालवा के राजतंत्र, अर्थतंत्र, प्रशासन, तीज त्यौहार, भाषा साहित्य से देवास अभिन्न रूप से जुड़ा है। देवास, मालवा का सांस्कृतिक आँगन है। जहाँ संगीत, कला, लोककला, साहित्य, विभिन्न ललित कलाओं को फलने–फूलने और विकसित होने से देवास के आँगन की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। 'परमार' काल मालवा का 'सांस्कृतिक' काल भी है। 9वीं सदी के पूर्वार्द्ध में परमारवंशी नरेशों का सुशासन स्थापित हुआ। [1] सांस्कृतिक उत्थान के सहज सामाजिक जीवन स्थापित करने में परमार शासकों का योगदान रहा।

देवास तथा परमार काल को अलग करके नहीं देखा जा सकता। अतः परमारों के बारे में जानना आवश्यक है। क्योंकि देवास जिले में परमार काल के मंदिर और अन्य निर्माण बहुतायत में पाए जाते हैं। इनमें से कई क्षेत्र राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय ख्याति के हैं और महत्त्वपूर्ण हैं। जैसे नेमावर का महान सिद्धेश्वर महादेव मंदिर है।

परमारवंश को इतिहासकार राष्ट्रकूटों की एक शाखा मानते हैं। ऐसी मान्यता है कि ऋषि वशिष्ठ ने अग्निकुंड से एक वीर योद्धा की उत्पत्ति को वशिष्ठ ने 'परमार' नाम दिया (इस का अर्थ है – शत्रुओं का संहार करने वाला) 'अग्निकुण्ड' से योद्धा को उत्पन्न करना। एक प्रतीक भी है। अग्नि

[1] 8वीं शताब्दी से 13वीं शताब्दी (ईस्वी) तक मालवा, परमार राजवंश के शासन में रहा।

'चेतना' भी है। अग्नि ज्ञान और कर्म की भी है। ऐसे में वशिष्ठ ने अपने ज्ञान, तपस्या से 'परमार' को शिक्षित–दीक्षित किया होगा। इस 'परमार' कुल में आगे चल कर 'उपेंद्र' नामक राजा हुआ। इसी उपेंद्र राज को परमारों का या परमार वंश की स्थापना करने वाला आदि पुरुष माना जाता है।

जहाँ तक इतिहास के तथ्यों का प्रश्न है। इतिहासकार परमारों को राष्ट्रकूटों की एक शाखा मानते हैं। निःसंदेह परमारों का भारतीय संस्कृति के हर क्षेत्र में अपना श्रेष्ठ योगदान दिया है।

उपेंद्र को ही परमारों का संस्थापक माना जाता है। उपेंद्र 808 से 837 ई. तक रहा। उपेंद्र के बाद उसका पुत्र वैरीसिंह प्रथम 837 ई. से 863 ई. तक शासन करता रहा।[1] वैरीसिंह के कई विजय स्तंभ पाए जाते हैं। [2] परमार वैरीसिंह के बाद 'सीयक प्रथम' ने 863 ई. से 891 ई. तक शासन किया। इतिहास में यह एक पराक्रमी राजा के रूप में जाना जाता है।

सीयक प्रथम के बाद वाक्पति प्रथम 891 ई. में मालवा की गद्दी पर विराजमान हुआ। 'उदयपुर प्रशस्ति में अवंती की नवयौवनाओं के नेत्रोत्पलों के लिए इस राजा की कल्पना सूर्य सदृश की गई है। [3] प्रशस्ति के श्लोक में – वाक्पति प्रथम की मालवा नरेश होने की पुष्टि होती है। इसने 917 तक शासन किया। वैरीसिंह द्वितीय 917–18 में मालवा का शासक बना। उदयपुर प्रशस्ति के 11वें श्लोक में इसका उल्लेख है। [4] इस तरह मालवा के शासकों का सिलसिला चलता रहा और मालवा को सुदृढ़ पहचान मिली।

सीयक द्वितीय (949 ई.), वाक्पतिगुंज द्वितीय, सीयक द्वितीय के बाद 960–973 के मध्य शासक बना। वाक्पति गुंज के मुंज, अमोधवर्ष और उत्पल नाम भी पाए जाते हैं। [5] मुंज ने सांस्कृतिक, साहित्यिक, सामाजिक, आर्थिक उत्थान में व्यवस्था ने दूरगामी योगदान किया। वाक्पति कुंज ने विदेशी हूणों को भी जबरदस्त पराजय दी। मुंज के बाद उसका छोटा भाई सिंधुराज मालवा का शासक बना, इसे मुंज की परंपरा मिली थी जिसके दरबार में साहित्य, ललित कला, संस्कृति की धारा प्रवाहित होती थी। मुंज सांस्कृतिक विकास का अभिमानकर्ता भी रहा। उसके समय दरबार में पद्मगुप्त, धनंजय भट्ट, शोभन धनपाल, हलायुध जैसे विद्वान कवि, साहित्यकार

---

[1] परमार वंश का इतिहास–ढक्कन 1553: डॉ. डी.सी. गांगुली

[2] प्रचीन भारत – दिल्ली

[3] लोक – 10 डॉ. तेजसिंह सैंधव

[4] डॉ. तेजसिंह सैंधव

[5] डी.सी. गांगुली – डॉ. तेजसिंह सैंधव

थे। ऐसी परंपरा सिंधुराज को मिली थी।

सिंधुराज के बाद उसका यशस्वीपुत्र भोज मालवा का शासक बना। राजा भोज का कार्यकाल परमारवंश तथा मालवा का स्वर्णकाल माना जाता है। भोज साहित्य प्रेमी, कला साधक के साथ साहित्य का रचयिता भी था। राजा भोज के शासनकाल में भवन निर्माण, कला, साहित्य, मंदिरों का भव्य तरीकों से योजनाबद्ध विकास संभव हो। 'भोज की ख्याति के प्रमाण उसके समय के विभिन्न अभिलेख–बांसवाड़ा अभिलेख–संवत 1076–1020 बेटमा (इंदौर) अभिलेख 1076 सं.–1020 ई. तक उज्जैन संवत 1078 ई. 1021, तिलकवाड़ा ताम्र पत्र संवत 1103 आदि तथा उसके प्रचुर साहित्य में मिलत है'[1]

ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार राजा भोज ने 55 वर्ष 7 महीने और 3 दिन राज्य किया।[2] राजा भोज भारतीय इतिहास के विकास के साथ संस्कृति के विकास में अपार रचनात्मक योगदान करने वाला राजा रहा है। राजा भोज के समय का भोजपुर (भोपाल के निकट) झील, सरस्वती की विश्व प्रसिद्ध मूर्ति जो ब्रिटिश संग्रहालय में सुरक्षित है।

देवास नगर में मेंडकी ग्राम (अब देवास नगर का वार्ड) में जीवनेश्वर महादेव मंदिर, नेमावर का सिद्धेश्वर मंदिर, देवास में खेड़ापति मंदिर की बाजू में शिव मंदिर अपनी सुंदरता, मजबूती के लिए आज भी राजा भोज के परमार काल की शानदार विरासत की याद दिलाता है।

साहित्य की दृष्टि से राजा भोज ने *सरस्वती कण्ठाभरण, समरांगण सूत्रधार, आयुर्वेद सर्वस्वः, शब्दानुशासन* जैसी श्रेष्ठ कृतियों की रचना की। भोज की कला, संस्कृति तथा साहित्य की परंपरा ने समाज को गहरे प्रभावित किया था। यही कारण है कि उज्जैन, धार, इंदौर, देवास, शाजापुर, मंदसौर, रतलाम एवं नीमच में लोक साहित्य के साथ आधुनिक लेखन, संगीत, कला, मांडणे तथा संस्कृति के विभिन्न क्षेत्र में लोग सक्रिय है। उसी समय श्रेष्ठ साहित्य रचा गया।

परमारों की इस सांस्कृतिक परंपरा को देखें तो लगता है कि भोज की जमीन वैसी ही उर्वरा है जो 10वीं–11वीं सदी में थी, जो बीसवीं–इक्कीसवीं सदी तक प्रवाहमान नदी की तरह प्रवाहित है।

वर्तमान में धार से प्रसिद्ध लेखक स्व. रमेश बक्षी, उज्जैन से डॉ. सुमन, शरद जोशी, श्यामसुंदर निगम, शिव शर्मा, हरीश निगम, शाजापुर

---

[1] प्राचीन भारत–जिल्द 11वीं पृष्ठ 182, युग युगीन देवास, डॉ. तेजसिंह सेंधव।

[2] मेरूतुंग के अनुसार

से श्री नरेश मेहता, हरिनारायण व्यास, रमेश दवे, विष्णु नागर, डी.पी. झाला, देवास से डॉ. प्रफुल्ल लता जाधव, गोविंद झोकरकर, प्रभु जोशी, प्रकाश कांत, जीवनसिंह ठाकुर, शास्त्रीय गायक और संगीत सम्राट रजब अली खां, पद्म विभूषण कुमार गंधर्व, भानुमती कोमकली, पद्मश्री वसुंधरा कोमकली, कलापिनी, भुवनेश सीतामउ के महाराजकुमार डॉ. रघुवीरसिंह, इंदौर के सरोज कुमार, निरंजन जमींदार, सूर्यकांत नागर, राजकुमार कुम्भज, भोपाल से मालती जोशी, मंजूर एहतेशाम, राजेश जोशी, रमेंशचंद्र शाह, ग्वालियर से हरिहर निवास द्विवेदी, महेश कटारे, खण्डवा से संतोष चौबे, रामनारायण उपाध्याय, प्रतापराव कदम, श्रीराम परिहार, जावरा कस्बे से दिनकर सोनवलकर तथा प्रभाकर श्रोत्रिय, नीमच से बालकवि बैरागी, खण्डवा से माखनलाल चतुर्वेदी आदि ऐसा लगाता है भोज के दसवीं सदी के बाद – बीसवीं–इक्कीसवीं सदी में भी हवाओं में गंध की मानिंद घुले हुए बह रहे हैं। कई नाम और भी हैं ये सभी बतौर उदाहरण है। नाम न आए तो मालवी में एक क्षमायाचना है। 'माफ करजो' या 'भूल–चूक लेनी देनी'।

देवास में समग्र मालवा बसता है। ललित कलाओं की समस्त विधाएँ इसकी जमीन पर इसके मानस में जीवित है, सक्रिय है और निरंतर परिष्कृत होती जा रही है। राजा भोज के साथ एक विशिष्ट पहचान दर्ज है। एक तरफ वह योद्धा की तरह समर में लड़ता है। विजयी होता है। उसके कई विजयी अभियान रहे हैं। लेकिन भोज की ख्याति उसके 'सांस्कृतिक', सामाजिक, साहित्य, निर्माण, समृद्धि के संदर्भ में ज्यादा याद किया जाता है। सांस्कृतिक उत्थान में उसकी महान भूमिका ने उसे विजयी अभियानों से आगे का भी महान योद्धा, विचारक, रचनाकार सिद्ध किया है। इसीलिए पराक्रमी विक्रमादित्य के बाद राजा भोज लोगों के दिलों में बसे हुए है। ये दो महान शासक भारतीय साहित्य, लोककथाओं, लोकगायन, आख्यानों के भी नायक हैं। साहित्य में स्थान पाना वह भी 'नायक' के रूप में बहुत ही कठिन है। जनता में यानी लोकपक्ष अपना 'हीरो' यूँ ही नहीं चुन लेता है। लोक साहित्य सदियों तक इतिहास, कर्म, आचरण और मूल्यों का परीक्षण करता है। जब उसकी कसौटी पर खरा उतरता है तो साहित्य उसे अपने में जगह देता है। ऐसा ही 'भोज' तथा विक्रमादित्य (ई.पू. 57) के संदर्भ में सच है।

परमार वंश की परंपरा के भोज के बाद जयसिंह उत्तराधिकारी बना और जयसिंह के बाद उदयादित्य हुआ। इसका राज 1086 ई. तक या कुछ समय बाद तक रहा। यह क्रम लक्ष्मणदेव से नरवर्मन के बाद जयवर्मन (1138) फिर विद्यावर्मन ने इस के उपरांत अर्जुन वर्मन तक आया। इन लोगों ने और

इसने 1215 ई. तक शासन किया। वे अपने पूर्वज राजा भोज की तरह ही विद्वान तथा संस्कृति का उन्नायक रहे। और देवपाल देव, देवपाल का ऐतिहासिक साक्ष्य देवास के कर्णावद ग्राम से जुड़ी है। एक ताम्रपत्र वर्तमान देवास जिले के कर्णावद गाँव के कर्णेश्वर मंदिर से संबंधित है जो इंदौर संग्रहालय में सुरक्षित है। [1]

देवास परमारों के इतिहास का गवाह रहा है। देवास का नेमावर पवित्र नर्मदा नदी के नाभि स्थान पर है। नेमावर अनेकानेक पौराणिक काल से ही इतिहास में घटनाओं, अभियानों, शासन, सत्ता का गवाह रहा है। नेमावर 1857 के महान स्वतंत्रता संग्राम का प्रमुख स्थान रहा है। नेमावर के पास नर्मदा के किनारे (उस पार) हंडिया नामक स्थान है। यह अंग्रेजों का फौजी अड्डा भी था। नेमावर के क्रांतिकारियों ने नर्मदा किनारे की इमारतों पर तोपें रख कर अंग्रेज फौजी अड्डों पर गोले दागे थे।

अंग्रेज दमनकारी सत्ता ने यहाँ के सात स्वतंत्रता सेनानियों को नेमावर की पहाड़ी पर फाँसी लटकाया था।

हाँ तो मैं परमार शासकों के बारे में उनके समय के संदर्भ में बता रहा था। मालवा पर हमेशा बाहरी तथा अन्य भारतीय शासकों की निगाहें रही हैं। क्योंकि कहावत प्रसिद्ध है कि

मालव धरती गहन गंभीर।
डग डग रोटी–पग पग नीर।।

भरपूर पानी, समृद्धि, जल, वन, आबो–हवा, आत्मीयता, संतोषप्रद जीवन सभी को आकर्षित करता ही था। 1138 में चालुक्यों ने (गुजरात के) आकार यहाँ पर अधिकार जमा लिया लेकिन जयवर्मन ने पुनः परमारों का अधिकार स्थापित किया। ये तो देसी शासक थे। उतना विध्वंस नहीं करते थे इनका सीधा राजा से संघर्ष होता था। जय–पराजय के बाद सत्ता स्थापित या विस्थापित हो जाती थी।

मालवा 12वीं–13वीं सदी के मध्य से विदेशी–विधर्मी सत्ता के निशाने पर आ गया। उसी समय से मालवा का पतन शुरू हो गया। 1250 ई. के पश्चात् आक्रमणों का निरंतर सिलसिला शुरू हो गया। 1238 ई. में जलालुद्दीन खिलजी ने मालवा के परमार राज्य के हर हिस्से को भरपूर लूटा था। इस लूट और लुटेरों से देवास कैसे बचता, आवागमन के रास्तों के

[1] डॉ. डी.सी.सी. गांगुली (डॉ. तेजसिंह सैंधव)

अनुसार देवास मुख्य मार्ग पर था। 1238 ई. भी देवास के सीने पर खिलजी की सेना रौंदते हुए निकली। जबरदस्त लूट और कत्ल–खून बहाने के बाद जलालुद्दीन खिलजी के अट्हासों से मालवा का क्षेत्र गूँजता रहा। 1305 ई. में जलालुद्दीन खिलजी ने मालवा पर कब्जा जमा लिया। देवास सहित मांडू, धार, उज्जैन, मालवा के अन्य क्षेत्र दिल्ली के कथित सुलतानों के अधीन आ गए। 1401 ई. तक संपूर्ण मालवा दिल्ली की क्रूर सल्तनत का अंग बना लिया गया। देवास में आज भी सल्तनत काल के ध्वंस के सबूत बिखरे पड़े हैं। उसी को चुनौती देते मालवा के परमारों के निर्माण के सबूत भी खड़े हैं।

देवास, मालवा और मालवा के सुलतान

वाकई ये सदियाँ बेहद क्रूर और बेपनाह तकलीफदेह रही हैं। अत्याचारों की झलक लोक गीतों में भी मिलती है। उससे लड़ने–जूझने का भाव भी इन गीतों में निहित है। इस तरह के लोकगीत इतिहास को भी साथ लिए चलती है।

दिलावर खाँ गोरी ने मालवा के धार नगर को अपनी राजधानी बनाई और सुलतान की उपाधि धारण कर ली। 1406 ई. में उसके पुत्र आलम खाँ, होशंगशाह के नाम से मालवा का सुलतान बन गया, होशंगशाह ने राजधानी धार से हटा कर – पहाड़ों से सुरक्षित मांडू में स्थापित किया। 1435 ई. में होशंगशाह के निधन होने के बाद उसका बेटा ग़ाज़ी खाँ, जो मुहम्मद शाह के नाम से गद्दी पर बैठा। महज एक बरस बाद ही उसके वजीर महमूद खाँ ने 1436 ई. में मुहम्मद शाह को सत्ता से हटाकर नयी खिलजी सत्ता की शुरुआत की। सत्ता चाहे किसी के हाथों में रही हो लेकिन सभी ने मालवा अँचल का बुरी तरह दोहन किया। सभी का नज़रिया व्यापक दृष्टिकोण वाला नहीं रहा। जनता निरंतर परेशान रही। धार्मिक दृष्टि से सत्ता ने उसे कतई महत्त्व नहीं दिया।

1469 ई. में महमूद खाँ का बेटा गयासुद्दीन खिलजी मांडू का शासक बना। गयासुद्दीन खिलजी, कट्टर मजहबी था। उसके समय मालवा में तबाही का आलम था। आखिर गयासुद्दीन को उसी के बेटे नसीरुद्दीन ने जहर दे कर मार डाला।

1500 से 1510 का दशक मालवा के लिए बेहद खतरनाक समय थे। नसीरुद्दीन खिलजी ने कुशासन और जुल्मों की अति कर डाली। इसी बीच मेदिनी राय उभरा और उसने महमूद द्वितीय के दौर में हिंदू जनता सहित दीगर प्रताड़ित जनता में विश्वास पैदा किया।

मालवा के सुलतानों का काल खत्म हो रहा था। भारत के क्षितिज पर फिर विदेशी हमलावरों की काली छाया दिखाई दे रही थी। बाबर के बाद हुमायूँ मुगलों का राजा बना। हुमायूँ के बाद कुछ समय तक शेरशाह ने मालवा पर अधिकार जमाया। उसने विजय के पश्चात् वर्तमान देवास जिले के सतवास, नेमावर, हरदा–हंडिया का प्रभार शुजात खाँ को सौंपा। जुनेद खाँ को मांडू तथा धार की जिम्मेदारी दी।

शुजात ख़ाँ और मालवा

शुजात खाँ के बाद उसका पुत्र मियाँ बायजिद (उसे कुमार बायजिद भी कहा गया है) को मांडू का उत्तराधिकारी बनाया गया। यही बायजिद – बाजबहादुर के नाम से मांडू में प्रसिद्ध हुआ। उसने स्वतंत्र सत्ता स्थापित की। मालवा का हर रास्ता देवास होकर गुजरता था। बायजिद – यानी बाजबहादुर को संगीत, साहित्य ने विशेष प्रभावित किया था। मालवा के कस्बे सारंगपुर (जो शुजालवार के नज़दीक है) की रूपमती के गायन, कला मर्मज्ञता से बायजिद प्रभावित हुआ और उसे रानी बना कर मांडू लाया। रानी रूपमती पूरी तरह हिंदू संस्कारों वाली धार्मिक महिला थी। वह प्रतिदिन पूजा के साथ 'नर्मदा' नदी का दर्शन करके दिनचर्या शुरू करती थी। बाजबहादुर ने मांडू के ऊँचाई वाले भाग पर रूपमती का महल बनवाया। यहाँ से सुदूर निमाड़ क्षेत्र में बहने वाली 'पवित्र नर्मदा' रेखा की तरह दिखाई देती है। रूपमती के महल की ढलान पर बाज बहादुर का महल है। ये दोनों इमारतें वास्तुकला, पर्यावरण, स्वास्थ्य, पेयजल व्यवस्था का श्रेष्ठ उदाहरण भी है। रूपमती महल पर खड़े होकर नर्मदा का दर्शन करती थी। मालवा के लिए यह समय शांतिपूर्ण था। कला और संस्कृति की अटूट धारा जोड़ने वाला यह सिद्ध हुआ। मांडू को 'शादियाबाद' (खुशियों का नगर) भी कहा जाने लगा। लेकिन मालवा की ये खुशियाँ कम समय के लिए थीं।

मुगलों का आक्रमण

मांडू राज्य पर मुगलों ने आक्रमण किया और इसका सीधा असर देवास पर पड़ा। बाज बहादुर शेरशाह सूरी का वंशज था। अकबर ने मांडू में बाजबहादुर को पराजित किया। मालवा, मुगलों की अधीनता में आ गया। मालवा पर सत्ता स्थापित होते ही अकबर ने देवास जिले की खातेगाँव, कन्नौद तहसीलें और उसके तमाम गाँव सतवास (जिला देवास) तथा हंडिया को सरकार में शामिल कर लिया गया। वर्तमान देवास तथा सोनकच्छ

तहसीलें उज्जैन सरकार के अधीन थी। अकबर के बाद जहाँगीर से होते हुए शाहजहाँ तक मुगल शासन में शांति बनी रही। मालवा अपने मिजाज यानी शांति और प्रसन्नता से समृद्ध बना रहा। लेकिन औरंगजेब के समय से मालवा अव्यवस्था का शिकार हो गया। कट्टर मजहबी कूटनीति ने हिंदू तथा अन्य गैर मुस्लिम प्रजा को कठिनाइयों में डाल दिया। औरंगजेब तथा उसके भाइयों दाराशिकोह, मुराद और शुजा के बीच चले सत्ता–संघर्ष ने मालवा को बुरी तरह प्रभावित किया। मालवा के लोगों को लगता था कि शाहजहाँ का बड़ा बेटा दाराशिकोह बादशाह बनेगा तो सामाजिक शांति के साथ धार्मिक स्वतंत्रता ज्यादा मिलेगी।

दारा के प्रति ऐसा सोचना सही भी था। क्योंकि दारा उदारमना, होने के साथ ही ज्ञान, संस्कृति और साहित्य की कद्र करने वाला व्यक्ति था। उसने उपनिषदों और अन्य धार्मिक पुस्तकों का फारसी में अनुवाद भी करवाए। वह विद्वानों से विमर्श करता था। दारा के समय अनूदित किए कई ग्रंथ देवास के विभिन्न परिवारों के पास आज भी है। ऐसी ही एक पुस्तक जो फारसी–उर्दू में *भगवद्गीता* है इसकी एक प्रति स्वर्गीय बशीरुद्दीन मौलाना ने मुझे दी है। यह मेरे पास सुरक्षित है। दुर्भाग्य यह रहा कि मुगलिया सल्तनत के आपसी संघर्ष में 'उदार विचारधारा' कट्टरतावाद द्वारा खत्म कर दी गई इस स्थिति में मालवा बुरी तरह प्रभावित हुआ। सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से मालवा का विनाश ही हुआ।

जब हम अपने देवास को देखते हैं तो उसे इतिहास, लोक साहित्य और परंपरा के साथ हमकदम होते हुए पाते हैं। साथ ही वह आत्मीयता भी यहाँ है, जिसे कथित 'आधुनिक' कस्बाई मानसिकता कह कर पिछड़ा मानते हैं तथा उसे आधुनिकता की कसौटी पर, खारिज करने लगते हैं ! दाराशिकोह के इंसानी तथा भारतीय परंपरा की समादरता से उपजी उम्मीद, कट्टरता की बलिवेदी पर शहीद हो गई देश फिर अपने बहुजातीय, बहुधर्मी, लोकवादी जनतांत्रिक समाज के जीवन मूल्यों को बचाने के लिए प्रतिरोध में खड़ा होने लगा। दक्षिण में मराठा शक्ति का उदय हो रहा था। यह शक्ति समग्रता में देश, समाज को देख रही थी। 'हिंदवी स्वराज' का आह्वान होने लगा।

मराठा शक्ति और देवास

महाराज विक्रमादित्य तथा उनके पिता राजा गंधर्वसेन (गर्द भिल्ल भी कहा जाता है) की कर्मभूमि देवास रहा है। गंधर्वपुरी–गंधावल–देवास

जिले की सोनकच्छ तहसील में स्थित है। विक्रमादित्य के महापराक्रमी तथा लोकवादी काल की विद्वता, सेवा, सृजन से देवास संपृक्त रहा है। [1] विक्रमादित्य की दस शताब्दी के लंबे समय के बाद मालवा का शासक राजा भोज हुआ। [2] भोज के बाद आक्रमणों का सिलसिला शुरू हुआ। मालवा ने सुलतानों, खिलजियों, शेरशाह सूरी (शुजात खाँ तथा बाजबहादुर) का समय देखा है फिर यह मुगलों के अधीन कर लिया गया।

औरंगजेब के सत्ता में आने के बाद आंतरिक प्रतिरोध भी कम हुए। यहाँ विवेकपूर्ण तरह से देखना चाहिए कि मुगल सत्ता तथा आंतरिक प्रतिरोध आंदोलन में बुनियादी अंतर क्या है। इसे देखना होगा कि औरंगजेब तथा पूर्ववर्ती हुकूमतों के खिलाफ जितने भी प्रतिरोध आंदोलन उभरे उसमें भारतीय विवेक तथा सुसंस्कृत चिंतन रेखांकित करने योग्य है या नहीं। मुगल सत्ता का चरित्र राष्ट्रीय सत्ता या एक शासक का न हो कर 'हमलावर' आक्रमण, आक्रमणकारी का रहा। वहीं आंतरिक प्रतिरोध अपने सौहार्दपूर्ण सांस्कृतिक मूल्यों को बचाने के लिए संघर्ष कर रहे थे। इसीलिए गुरुगोविंदसिंह, शिवाजी, दुर्गादास राठौड़ का संघर्ष धर्मांध सत्ता के खिलाफ धर्मनिरपेक्षता का संघर्ष था। इसी संघर्ष ने दिशा भी तय की। शिवाजी – 'हिंदवी स्वराज' का दर्शन रख रहे थे तो गुरु गोविंदसिंह समानता, स्वतंत्रता, भारतीय मूल्यों के लिए संघर्षरत थे हमें इतिहास को आज के भारत की मुख्यधारा के संदर्भ में भी देखना चाहिए।

इसीलिए भारतीय समाज में जनता में जननायक की छवि – प्रतिरोध के नायकों की रही। वहीं लोकगीतों तथा साहित्य में भारतीय जननायक ही 'नायक' का दर्जा पाते रहे हैं। जबकि लोक में प्रताप, शिवाजी, गुरुगोविंदसिंह, हाकिम सूर खाँ पठान, नवाब सिराजुद्दौला, रानी लक्ष्मीबाई, बेगमहजरत महल, चित्तूर की रानी नायक के रूप में समादृत हैं।

औरंगजेब ने सत्ता संघर्ष में तथा सत्ता प्राप्ति बाद शासन–प्रशासन में मजहब का योजनाबद्ध तरीके से इस्तेमाल किया। इससे उसकी छवि शासक की बजाय दमनकर्ता की ही ज्यादा बनी।

मराठा शक्ति में समाज का प्रत्येक तबका सम्मिलित हुआ, यह शक्ति समग्र समाज तथा स्वातंत्र्य मूल्यों को लेकर चल रही थी।

---

[1] देवास के सोनकच्छ नगर के उत्तर में गंधर्वपुरी है।

[2] राजा भोज (1010–1055 ई.) अन्य साक्ष्य के अनुसार 55 वर्ष राज किया।

देवास नगर के आस–पास के नगरों का मार्गीय संकेत

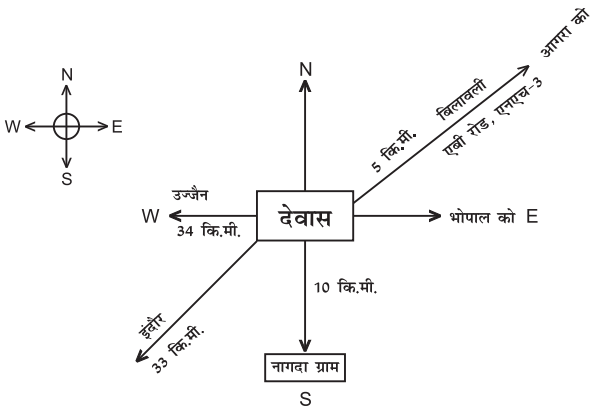

18वीं सदी में मराठा शक्ति की सक्रियता बढ़ी। शिवाजी द्वारा स्थापित सत्ता को पेशवा प्रतिनिधित्व दे रहे थे। 1803 में मराठा फौजी दस्ते ने नर्मदा पार करके उज्जैन आए। हालाँकि इसके पूर्व 1716–17 ई. में पेशवा ने मालवा का शासन तीन प्रमुख मराठा सरदारों को सौंपा था।

तीनों सरदार जिसमें सिंधिया (ग्वालियर) होलकर (इंदौर), पवार (देवास–धार) कालांतर में देवास को दो भागों में बाँट दिया–(1) तुकोजीराव पवार (देवास–बड़ी पांती यानी सीनियर स्टेट) (2) जीवाजी राव पवार (देवास–छोटी पांती याने जूनियर स्टेट) तथा धार में आनंदराव पवार को धार का प्रमुख बनाया। इस तरह संपूर्ण मालवा मराठा राज्य के अंतर्गत तीन मराठा सरदारों–सिंधिया, होलकर और पवारों के बीच बँट गया।

देवास जिला

वर्तमान देवास जिला और उसकी तहसीलें तीन मराठा रियासतों में विभाजित थी। देवास की वर्तमान तहसील पवार शाही में, सोनकच्छ, बागली, हाटपीपलिया ग्वालियर राज सिंधिया शाही में विभाजित थी। कन्नौद–खातेगाँव तहसील होलकर शाही के अधीन थी। बागली तहसील के बरझाई घाट के नीचे का हिस्सा ग्राम पुंजापुरा से पीपरी, निमनपुर–उदयनगर क्षेत्र धार रियासत के पवारों के पास था। वैसे देखा जाए तो देवास जिला चार राजशाही में बँटा था। स्वतंत्रता के पश्चात् नर्मदा को सीमा मानते हुए देवास, सोनकच्छ, हाटपीपलिया, टोंक, बागली, कन्नौद, खातेगाँव इस तरह सातों क्षेत्र मिलाकर देवास जिला बनाया गया। देवास जिले का अधिकृत गठन 20 जून 1948 को हुआ था।

देवास की भौगोलिक स्थिति

देवास जिला 22°17′27′′ उत्तरी अक्षांश से 23°19′, 20′′ पूर्वी देशांतर से 77° 07′30′′ तक फैला हुआ है। जिले की अधिकतम लंबाई 150 कि.मी. उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर है। चौड़ाई अधिकतम 65 कि.मी. है।

देवास जिला मालवा के पठार के दक्षिणी भाग एवं नर्मदा घाटी में अवस्थित है। विध्यांचल पर्वत श्रेणी का भाग, मालवा का पठार और नर्मदा घाटी इस तरह तीन भागों के जोड़ने से देवास बनता है।

मालवा के पठार पर बागली तहसील का उत्तरी भाग में सोनकच्छ तहसील है। विंध्य की श्रेणी में जिले की बागली तहसील का पश्चिमी भाग, कन्नौद–खातेगाँव का उत्तरी भाग शामिल है। नर्मदा घाटी में कन्नौद–खातेगाँव तहसील का दक्षिणी भाग है।

इस तरह देवास जिला विभिन्न विशेषताओं तथा प्राकृतिक सुषमा से संपन्न है। यह एक दर्शनीय जिला है जहाँ आदिमयुग से सभ्यता, संस्कृति के विकास, विभिन्न दौर के इतिहास, पुरातत्व के क्षेत्र, लोक परंपरा, आधुनिक शास्त्रीय तथा लोक कला, गायन, वादन, चित्रांकन तथा साहित्य से भरा–पूरा जिला है।

देवास के पवार

देवास के पवार वंशी शासक प्रख्यात योद्धा 'साबूसिंह पवार' के वंशज है। साबूसिंह को शंभुसिंह भी कहा जाता था। साबूसिंह का मूल ठिकाना राजस्थान रहा है। वे मुगलों के युद्धों के दौरान मराठाओं के संपर्क में आए और शिवाजी तथा संभाजी के विश्वासपात्र बने। अनेक सैन्य अभियानों में भाग लिया। इन्हें महाराष्ट्र में सूपे नामक ठिकाने की जागीर दी गई इन्हें 'सूपे' के कारण 'सुपेकर पवार' भी संबोधित किया जाता है।

शिवाजी के हिंदवी स्वराज की चेतना ने अनेक शूरवीरों को प्रभावित–प्रेरित किया था। देवास के शासक तुकोजीराव पवार 1738 ई. में भोपाल के संग्राम में बाजीराव पेशवा के साथ ही थे। इसके पूर्व 1736 ई. की तारापुर तथा इसी वर्ष 1736 में ही वसई के युद्ध में 'पवार' अपना जौहर दिखा चुके थे। 1761 में कृष्णाजीराव पवार ने पानीपत के युद्ध में सक्रिय भाग लिया। जनकल्याणकारी कार्यों में भी 'पवार' बढ़ चढ़ कर सक्रिय रहे, काफी नाम कमाया।

देवास की विशेषता

देवास की कई विशेषताओं में कुछ ऐसी विशेषताएँ भी हैं जो देवास को विशिष्ट और अनोखा भी सिद्ध करती है। छोटी पांती जूनियर (पवार) रियासत के राजा मल्हारराव पवार (सन् 1892 में राजा) थे। लोककल्याण हमेशा उनकी प्राथमिकताओं में रहा। अंदर ही अंदर वे गहरे आध्यात्मिक मानस के व्यक्ति थे। वे संत की तरह जीवन व्यतीत करते थे।

प्रख्यात नाथ योगी सद्‌गुरु शीलनाथ जी का सन् 1899 में देवास आगमन हुआ। हालाँकि वे इंदौर भी रहे, जिस जगह धुणी रमा कर रहे, वह स्थान 'शीलनाथ कैंप' के नाम से प्रसिद्ध है।

शीलनाथ जी के देवास आगमन के साथ ही मल्हार राव पवार की संत प्रवृत्ति, तपस्या में परिवर्तित हो गईं उन्होंने देवास के दक्षिण में 'मल्हार' नामक स्थान (बालगढ़ के पास) पर भवन तथा धुनी हेतु स्थान बनवाया। सदगुरु शीलनाथ जी देवास में 1920 ई तक रहे। शीलनाथ जी की धुनी देवास की चामुंडा पहाड़ी के उत्तर में लाल भवन में स्थापित है। शीलनाथ जी ने देवास में अध्यात्म, भक्ति, सामाजिक समरसता का वातावरण निर्मित किया। वे उच्च आध्यात्मिक तपस्वी थे। मल्हारराव पवार ने उनका शिष्यत्व ग्रहण कर लिया और पूरी तरह साधु बन गए। शीलनाथ जी की धुनी सत्संग का स्थान था। वहीं सभी धर्मों और जातियों के लोग एकत्रित होते थे। तिलक युग से गांधी युग तक अनेकानेक क्रांतिकारी, स्वतंत्रता सेनानी का भी आगमन होता रहता था। यह स्थान सामाजिक मेल–मिलाप, भजन मंडलियों के गीत और जन चेतना का भी स्थान रहा है।

प्रख्यात शास्त्रीय गायक, संगीत सम्राट रजब अली खाँ भी सारंगपुर से आकर देवास में बस गए और सद्‌गुरु शीलनाथ जी के शिष्य बने। शीलनाथ जी के संपर्क में आकर रजबअली खाँ साहेब ने 'नादब्रह्म' की विशिष्ट गायन शैली भी सीखी। रजबअली खाँ साहेब ने गुरु भक्ति तथा गुरु शिष्य परंपरा का निष्ठापूर्वक पालन किया। देवास में कुछ अजीब तरह का आकर्षण है। अध्यात्म, भक्ति, श्रद्धा और ललित कलाओं, लोक संगीत, साहित्य की धाराएँ सहज ही सभी को आत्मीयता में बाँध लेती है।

इसका एक अन्य उदाहरण है, पंडित कुमार गंधर्व का कर्णाटक से

देवास आकर बसना, यहाँ स्वास्थ्य लाभ करना। फिर हमेशा के लिए देवास – मालवा का होकर रह जाना। देवास में बहती किसी अंदरुनी सरस्वती का ही अपनापन और आकर्षण है। उसी ने कुमार गंधर्व को भी थाम लिया था।

देवास को हम जीवनदायी हवाओं की तरह पाते हैं। जहाँ भी जाते हैं, पूरा देवास हमारे साथ चलता है। वहीं चामुंडा टेकरी, वहाँ से दूर–दूर तक फैली हरियाली, विंध्याचल की पर्वत माला नागदा, बालगढ़ के पहाड़, छत्रीबाग की छत्रियाँ और कुदरती वृक्षावली और उसे घेर कर फैला हुआ तालाब जलराशि से पूरा भरा हुआ। तालाब के उस पार विश्राम भवन, और 'सागर महल' [1] है, सागर महल से तालाब तथा छत्रीबाग की सुंदरता देखते ही बनती थी। ठीक उसके पार देवास की टेकरी का लुभावना दृश्य भी मन मोहता है। [2]

सागर महल की बात चली है तो बात आगे भी बढ़ती है। बात कुछ यूँ है कि इसी सागर महल में प्रख्यात इंग्लिश लेखक ई.एम. फोस्टर आकर रहे और अपना लेखन कार्य किया। उनका प्रसिद्ध अंग्रेजी उपन्यास ए *पैसेज टू इंडिया* यहीं देवास के सागर महल की हवाओं में तालाब के पास की शांत प्रशांत फिजाओं में रचनात्मक शांति में लिखा गया था। देवास का ही कुछ ऐसा आकर्षण था कि ई.एम. फोस्टर साहब ने कुर्ता–धोती तथा पगड़ी भी पहनी और वहाँ के सार्वजनिक जीवन में सहजता से घुलमिल गए। महज कुर्ता–धोती ही नहीं बल्कि उन्होंने वहाँ की भाषा – मालवी– के साथ मराठी भी सीखी।

इतना सब आत्मसात करने के बाद उन्होंने देवास का जैसे आत्मीय ऋण चुकाया *द हिल ऑफ देवी* किताब लिखकर। देवास की पहाड़ी को चामुंडा टेकरी या देवी माता की पहाड़ी कहा जाता है। यहाँ चामुंडा माता तथा तुलजा भवानी के भव्य मंदिर है जो देवास ही नहीं समग्र मालवा तथा अन्य स्थानों में श्रद्धा, भक्ति से देखे जाते हैं। नवरात्र में पूरे दस दिन अपार जन समुदाय यहाँ भक्ति भाव से आता है। पूरे वर्ष जन आगमन होता है। ई. एम. फोस्टर साहेब को इन देवियों के मंदिर, पहाड़ी, लोक ने ऐसा प्रभावित किया कि उन्होंने इसे अपनी रचनात्मकता का विषय बनाया।

किसी स्थान, नगर, क्षेत्र की अपनी विशिष्ट परंपरा, सामाजिकता, और लोक होता है। वहाँ कला, अध्यात्म और रिश्तों का एक परिवेश होता है जो वहाँ के बाशिंदों का जीवन निर्मित करता है। बाहर से आए लोग भी

[1] सागर महल की भव्य और ऐतिहासिक इमारत, ध्वस्त कर दी गई है।

[2] सागर महल – ओर विश्राम भवन (Circuit House) के दाईं तरफ से भोपाल रोड़ है। बांई तरफ – राजोदा ग्राम की तरफ जाने वाली सड़क है।

देवास आकर यहीं के होने लगते हैं। जो यहाँ बस गए वे अपनी पहचान के साथ देवास में रचे–बसे हैं। देवास ने जहाँ सदगुरु शीलनाथ जी की आध्यात्मिक श्रेष्ठता देखी वहीं एक राजा का बैरागी होना भी देखा। रजब अली खाँ को 'संगीत सम्राट' होते देखा। कुमार गंधर्व और भानुताई की (श्रीमती भानुमती कोमकली) अखिल भारतीय सांगीतिक ख्याति के व्यक्तित्व में ढलते भी देखा।

चित्रकार खिलजी, अफजल, हरीश गुप्ता, हुसैन शेख, मधुकर शिंदे, बाबू खाँ, सुरेंद्र महाडिक, इस्हाक शेख, प्रभु जोशी, [1] इनके चित्रावणी कला से रँगा देवास खुशियों से लबरेज रहा है। चित्रकला को निरंतर विकासमान माहौल मिला जो आधुनिक तथा अतीत को सूत्रबद्ध करती है। इसे रमेश आनंद, राजेश जोशी, राजकुमार चंदन, मनोज पवार, शिवानी, बोदड़े दंपती ने विकसित ही नहीं किया वरन राष्ट्रीय स्तर पर अपनी रचनात्मक दस्तक भी दी है।

वैसे देवास के सांस्कृतिक परिवेश की चर्चा में कला, गायन, लेखन पर और भी चर्चा होगी। यहाँ देश की स्वतंत्रता के संघर्ष में देवास के महान योगदान को रेखांकित करना जरूरी है। हम सभी जानते हैं कि देवास, मालवा का महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। इसी जिले के गंधर्वपुरी में विक्रमादित्य के पिता राजा गंधर्वसेन की राजधानी थी। यही वह समय था जब भारत पर शकों के आक्रमण शुरू हो गए थे। इन्हीं शकों को गंधर्वसेन (ई.पू. प्रथम सदी) के बेटे पराक्रमी विक्रमादित्य ने परास्त किया था। इसीलिए विक्रमादित्य को 'शकारी' विक्रमादित्य भी संबोधित किया जाता है। मालवा की भूमि को ही नहीं समग्र भारत–वर्ष से शकों को खदेड़ कर भारत को मुक्त कराने का सफल अभियान विक्रमादित्य ने किया था। इसी अभियान के संदर्भ में 'विक्रम संवत' प्रारंभ हुआ। मालवा सहित भारत के बड़े हिस्सों में 'संवत' याने 'विक्रम संवत' का प्रचलन है। विक्रमादित्य की लोकप्रियता, उसकी कहानियाँ, बारताएँ, लोक जीवन में भरे पड़े हैं। विक्रमादित्य की निर्बाध लोकप्रियता तथा साहित्य के नायक की हैसियत उसके श्रेष्ठ कार्यों, न्याय, जनकल्याण, सांस्कृतिक जीवन मूल्यों, प्रशासन, लोक से प्रतिबद्धता, विद्वता से निर्मित हुई है। देवास ने उक्त मूल्यों को गहराई से आत्मसात् किया है। यह उसके जनमानस में परिलक्षित होता है।

थोड़ा सा विक्रमादित्य पर दृष्टि डालना जरूरी है क्योंकि भारतीय संस्कृति की निर्मिति में उसके महान योगदान को समझा जा सके। आमतौर पर ब्रिटिश विद्वानों तथा उनके अनुगामियों ने यह निरंतर भ्रम फैलाया कि

[1] प्रभु जोशी, ख्यात चित्रकार हैं। देश–विदेश में उनकी प्रदर्शनी लगी है–अनेक राष्ट्रीय–अंतर्राष्ट्रीय सम्मान मिले हैं। दूरदर्शन तथा आकाशवाणी में रहते हुए उन्हें ग्यारह बार राष्ट्रीय सम्मान मिले, इन दिनों इंदौर में उनका निवास है।

उज्जयिनी का राजा विक्रमादित्य कभी हुआ ही नहीं। उल्टे इसे गुप्तकाल के 'चंद्रगुप्त विक्रमादित्य' (तीसरी सदी ई.) पर जोर दिया जाता है। नाम से ही स्पष्ट है कि चंद्रगुप्त नाम के पश्चात् 'विक्रमादित्य' नाम धारण किया गया है जो 'विरुद' या उपाधि है। इससे स्पष्ट है के चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के पूर्व 'विक्रमादित्य' रहा है। पुरातात्विक, साहित्यिक साक्ष्य सिद्ध करते है कि ई. पूर्व. प्रथम सदी में उज्जैन (अवंतिका) का राजा विक्रमादित्य था।

'मालवा पर शक आक्रमण की भीषणता को युग पुराण में भी रेखांकित किया गया है। ये शक–शासक कुछ वर्षों तक शासन करते रहे, फिर उन्हें विक्रमादित्य ने पराजित कर विजयोपरांत उपलक्ष्य में संवत प्रचलित कर 'शकारि' उपाधि से विभूषित किया।' [1]

विक्रमादित्य की नामांकित मुद्राएँ भी प्राप्त हुई हैं। ताम्र धातु की गोल मुद्रा पर श्री विक्रम एवं उज्जयिनी नगर नामांकित है। आचार्य कृष्णदत्त वाजपेयी ने अपने गंभीर अध्ययन विश्लेषण के पश्चात् लिपि, प्रतीकों का तिथिक्रम ई. पूर्व प्रथम सदी निर्धारित किया है। 'पुरातात्विक साक्ष्य से विक्रमादित्य की ऐतिहासिकता, तिथिक्रम, विक्रम संवत तथा नाम संबंधी घटनाओं की पुष्टि होती है।' [2]

मुद्रा के प्रचलन को विक्रमादित्य ने भी अपनाया 'अश्वमेघ यज्ञ के आयोजन के समय 'अश्वमेघ प्रकार' की मुद्रा अपने नाम व राजधानी उज्जयिनी से जारी की होगी। इससे सुस्पष्ट है कि विक्रमादित्य चक्रवर्ती सम्राट थे।' [3]

विक्रमादित्य के अस्तित्व को नकारना फैशन की तरह भी रहा। इस नकार में भारतीय सांस्कृतिक इतिहास को ही नकारना है। पूरे प्रमाण विक्रमादित्य के ई.पू. प्रथम सदी का सिद्ध करते हैं। 'विक्रम नामांकित शिव प्रकार की तांबे की मुद्रा' इसमें स्पष्ट रूप से ब्राह्मी लिपि (प्रथम सदी ई.पू.) राजा विक्रम का लेख है और बाईं ओर वेदिका वृक्ष अंकित है। [4] ऐसे कई उदाहरण दिए जा सकते हैं। लेकिन भारतीय लोकपक्ष में विक्रमादित्य, विक्रम संवत, बेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी, अन्य आख्यान, साक्ष्य उसकी अमरता तथा यथार्थ होने की पुष्टि करते हैं।

प्रख्यात इतिहासविद, पुरातत्वेत्ता डॉ. श्यामसुंदर निगम ने भारतीय

---

[1] 'विक्रमार्क' पृष्ठ 8 सन 2008 संवत 2069, संपादक डॉ. भगवतीलाल राज पुरोहित, प्रकाशक विक्रम शोध पीठ, उज्जैन

[2] विक्रमार्क पृष्ठ 8–9 डॉ. जगन्नाथ दुबे मुद्राशास्त्री, 2012– वि.सं. 2069

[3] विक्रमार्क पृष्ठ 9 डॉ. जगन्नाथ दुबे

[4] डॉ. जगन्नाथ दुबे

उपमहाद्वीप में प्रचलित सन् संवतों की सूची बनाई है।

प्राकृतिक संवत : कलियुग संवत, लौकिक संवत, सृष्टि

व्यक्तिपरक एवं घटनापरकः काल यवन संवत, कृष्ण संवत, युधिष्ठिर संवत, बुद्ध निर्माण संवत, महावीर निर्माण संवत।

चरित्र–प्रधान एवं इतिहासपरक संवत

भारतीय	मौर्य संवत : 320 ई.पूर्व	विदेशी
विक्रमादित्य	विक्रम संवतः 57 ई. पूर्व	सेल्यूसीडियन संवत 312 ई. पू.
	द्वितीय शक संवतः कलचुरि चेदि संवत	पार्थियन संवत 247 ई.पू.प्रथम शक संवत
चंद्रगुप्त प्रथम	गुप्त संवत – 319–20 ईस्वी	ईस्वी संवत 0 ई.
	हर्ष संवत 607 ई.	हिजरी संवत 622 ई.
अकबर	जुलुसी संवत 1556 ई.	

बुद्ध निर्वाण संवत 487 ई.पू
महावीर निर्वाण संवत 527 ई. पू.

इसी सूची के अनुसार विक्रमादित्य ई.पू. प्रथम सदी 57 ई. पू. है। वही चंद्रगुप्त प्रथम 319 ईस्वी के हैं जो विक्रमादित्य उपाधि धारक है जबकि मूल विक्रमादित्य, चंद्रगुप्त प्रथम से 262–63 वर्ष पूर्व हो चुका था।

विक्रमादित्य के लिए इतना कहना इसलिए भी जरूरी है कि इतिहास, संस्कृति, साहित्य न्याय लोक जीवन के प्रेरणा तथा यथार्थ को मिथ्या स्थापनाओं के हवाले करके – भारतीयता, उसके जनपक्ष, उसके सांस्कृतिक जीवन के मूल्यों और परंपरा से संस्कृति को निहत्था नहीं किया जा सकता।

विक्रमादित्य भारत के इतिहास, संस्कृति की पहचान भी है।

विक्रमादित्य से राजा भोज तक संस्कृति के सोपान, पायदानों का भी समय है। इस युग की अपार प्रेरणा आठवीं सदी से लगाकर 21वीं सदी तक निरंतर जारी है। स्वतंत्रता आंदोलन को इस युग ने प्रभावित किया है। कहीं न कहीं हमारे सांस्कृतिक मूल्यों ने सांस्कृतिक मुख्यधारा से किंचित भी अलग नहीं होने दिया। यही हमारी सांस्कृतिक धारा की शक्ति है।

देवास सहित समस्त मालवा में विक्रमादित्य के किस्से, कहानियाँ आज तक प्रचलित है। बेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी तो जन–जन में लोकप्रिय हैं ही। वहीं तीज–त्यौहार में हर घटना, मुहूर्त में विक्रम संवत का

प्रचलन है। यह विक्रमादित्य की जीवंतता का प्रतीक है। यह आश्चर्यजनक सच्चाई है कि कोई राजा ई. पूर्व. 57 से लेकर आज तक अबाध रूप से लोक में सतत जीवित और प्रेरक तत्त्व बना हुआ है।

देवास जिले में स्वतंत्रता संग्राम

जब विद्यालय में पढ़ता था तब देश के स्वतंत्रता संग्राम के बारे में पढ़ाया जाता था। इसमें कुछ जाने माने नाम हुआ करते थे। इन नामों को सुनकर मन में यह विचार उठता रहता कि कस्बे और हमारे इस जिले में स्वतंत्रता का आंदोलन नहीं हुआ था क्या ? मैं अपने बुजुर्गों से बात करता कि हमारे देश के हर नगर में स्वतंत्रता आंदोलन हुए और अपने देवास का भी उस आंदोलन में बहुत बड़ा योगदान है। वे मुझे कुछ नाम, आंदोलन और अन्य गतिविधियों के बारे में बताते। मुझे यह सुनते हुए अच्छा लगता और मैं गर्व महसूस करता कि जिस कस्बे, ज़िले की जमीन पर मैं हूँ वहां से भी देश की आजादी की लड़ाई लड़ी गई है। इस संघर्ष का इतिहास खोजना जरूरी था। 1975 से मैं देवास जिले के स्वतंत्रता संग्राम से जुड़े तथ्यों की खोज में संलग्न हो गया। निरंतर लेख और शोधपत्र लिखे। इससे पूरे क्षेत्र में अपने भूले–बिसरे सेनानियों के प्रति जिज्ञासी बढ़ी। हम उत्सुक हुए कि कहाँ क्या–क्या हुआ है।

भारत में या किसी भी देश में चलने वाला स्वतंत्रता संघर्ष अंततः मूल्यगत संघर्ष ही होता है। सन् 1757 से सन् 1857 तक देखें तो विकराल लूट भरे कारनामों से भरी शृंखला नज़र आती है। 1857 का समर यूँ ही नहीं फूट पड़ा था। गाय या सूअर की चर्बी से शुरू हुआ, पर कारणों में से एक कारण यह भी है लेकिन यह एकमात्र कारण नहीं है। भारतीय जन मानस में चिंतन और अत्याचार के खिलाफ व्यापक चेतना थी। तथ्य प्रमाणित करते हैं कि राष्ट्र के किसी भी हिस्से में या राष्ट्रीय स्तर की किसी भी गतिविधि का देवास पर क्या असर हुआ है। देवास हर राष्ट्रीय, सामाजिक गतिविधि से जुड़ा रहा है।

देवास में स्वतंत्रता संग्राम के बारे में सिलसिलेवार बताऊँ उसके पहले राष्ट्रीय पृष्ठभूमि पर किंचित चर्चा ज़रूरी है ताकि स्वतंत्रता संग्राम को ठीक तरह से समझा जा सके।

1757 से 1760 ई. तक भारतीय राष्ट्र, राजनीति और समाज के लिए भयावह थी। युद्ध की विकट परिस्थितियाँ थी। अहमदशाह की मौत के बाद उसका सेनापति अहमद खाँ दुर्रानी ने स्वयं को अहमदशाह अब्दाली के नाम

से काबुल का शासक घोषित कर दिया। ईस्वी. सन् 1747 में उसने पेशावर पर अधिकार कर लिया और आगे बढ़ 1756 ई. में पंजाब पर भी अधिकार किया। (हम तुलना करें यही रणनीति बाबर की भी थी।) उसके बाद उसने दिल्ली को निशाना बनाया। 1757 ई. का समय ईस्ट इंडिया कंपनी की कुटिल रणनीति का भी था। कंपनी प्लासी में भारतीयों के खिलाफ – लड़ रही थी। अब्दाली भी 1757 ई. में भारत पर हमलावर था।

देश के तत्कालीन राजनीतिक हालात कितने संकटपूर्ण थे! अब्दाली का जब विनाशकारी हमला हुआ उस समय तक 'मुगल सत्ता का इतना पतन हो गया था कि किसी ने भी अब्दाली के विरुद्ध म्यान से तलवार निकालने का साहस नहीं किया।'[1]

एक तरफ अब्दाली 1747 में हमला करता है। वहीं 1757 में अंग्रेजी साम्राज्यवाद भारत में ही भारतीयों से लड़ रहा था और मुगल हुकूमत पिसते हुए, लुटते हुए भारत को देख रही थी। 1757 से 1857 तक की पूरी सदी भयावह कत्लेआम, लूट–खसोट और विनाश की रही है।

1857 और देवास

आमतौर से 1857 के पूर्व के तथा 1857 के बाद के समस्त जन आंदोलन 'विद्रोह और राजद्रोह' कहे गए हैं। जबकि प्रख्यात विचारक कार्ल मार्क्स ने 14 अगस्त 1857 के अपने लेख में लिखा था 'शीघ्र ही दूसरे तथ्य प्रकाशित होंगे जो खुद जौन बुल को भी विश्वास दिला देंगे कि जिसे वह फौजी बगावत समझ रहा है, वह सचमुच राष्ट्रीय विद्रोह है।' अर्नेस्ट जोंस ने लिखा था 'हिंदुस्तान के विद्रोह के बारे में सारे युरोप में सिर्फ एक ही राय होनी चाहिए विश्व के इतिहास में जितने भी विद्रोहों की चेष्टा की गई है, यह एक सबसे ज्यादा न्यायपूर्ण, भद्र और आवश्यक विद्रोह है।' [2]

1857 के पहले 1763 से 1820–21 तक और संथाल विद्रोह 1855–56 तक की शृंखला देखें तो भारत का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं था जहाँ विदेशी दासता, लूट और जुल्मों के खिलाफ आंदोलन और अभियान न हुए हों। आश्चर्यजनक तथ्य है कि संथाल परगने का जन विद्रोह तथा संयासी विद्रोह (1763–1800 तक) के बीच ही बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय का *आनंदमठ* उपन्यास का गीत 'वंदेमातरम' 1850 के आस–पास तक मालवा सहित देश के कई क्षेत्रों में लोकप्रिय होकर 'जन चेतना' का प्रतीक बन गया था।[3]

[1] डॉ. मनोहरसिंह राणावतः 'जवाहरसिंह जाट' पृष्ठ 21

[2] *Dara Shekoh - by Sir Jadunath Sarkar, Page 150 - Shodh Sadhna Page 154, Edited by Dr. Ranawat - Written by Sahadev Singh Chouhan*

[3] 'संन्यासी विद्रोह किसान आंदोलन भी था'। संन्यासी विद्रोह, पृष्ठ 27, अयोध्यासिंह।

1857 को समझने के लिए 1762 में (1) मीर कासिम की शिकायत देखें, 'रैयत (किसानों), व्यापारियों आदि का माल–असबाब चौथाई कीमत पर जबरदस्ती उठा ले जाते हैं तथा मार–पीट और जुल्म कर रैयत आदि को उस माल के लिए पाँच रुपये देने को मजबूर करते हैं, जिसकी कीमत सिर्फ़ एक रुपया है।'

(2) दूसरा उदाहरण देखें, 1787 में ब्रिटेन के सांसद ने लिखा था– 'पुराने जमाने में बंगाल के देहात राष्ट्र के अन्न भंडार थे। पूरब में यह प्रदेश तैयार माल, व्यापार और दौलत का खजाना था। लेकिन बुरे शासन ने इस ज़ोर–शोर से काम किया (अत्याचार–उत्पीड़न, लूट से) कि बीस साल के थोड़े से अरसे में ही देहात के बहुत से इलाके वीरान हो गए हैं। किसानों को लूटा जाता है। कारीगर को सताया जा रहा है। लोगों को अकाल का सामना करना पड़ता है। आबादी का मिटना आरंभ हो गया है।'[1]

उपरोक्त कथनों का विश्लेषण करें तो और 1747 में अब्दाली का हमला यानी 1757 की लूट 1787 की भयावहता से विकराल होती हुई 1855–56 के संथालों को विद्रोह करने पर मजबूर करके 1857 के महान स्वतंत्रता आंदोलन की परिणिति तक आ गया। इस तरह भारत एक नई सुबह की तरफ बढ़ रहा था।

यह सुबह जुल्म और शोषण के खिलाफ हो रही थी। 1857 ई. का महान समर देवास की भूमि पर दस्तक दे रहा था। 1763 से 1800 तक के संन्यासी विद्रोह की अनुगूँज देवास की विभिन्न रियासतों में गूँज रही थी। 1757 के पलासी युद्ध, 1747 ई. का अब्दाली द्वारा लूट, कत्लेआम की आँच देवास सहित – पूरे मालवा में महसूस की जा रही थी।

1857 के महासंग्राम में देवास का ऐसा कोई क्षेत्र नहीं था जो क्रांतिकारी गतिविधियों से संलग्न न हो। हर स्थान पर ब्रिटिश अत्याचारों के खिलाफ लोग खड़े हुए थे। तात्या टोपे तथा नाना साहेब पेशवा के भाई राव साहेब का देवास से सक्रिय संपर्क था।

---

[1] स्वराज संस्थान भोपाल की 'म.प्र. के रणबांकुरे' की भूमिका

– आमतौर से दौलतसिंह राठौड़ को 'ठाकुर दौलतसिंह राठौड़' संबोधित किया जाता है। जबकि ठिकाने सहित पूरे क्षेत्र में उन्हें 'राजा दौलतसिंह राठौड़' कहा जाता था। अंग्रेजों ने 'चीफ ऑफ राघोगढ़' कहा है। दौलतसिंह बाविस गांवों तथा राघोगढ़ के शासक थे।

– राघोगढ़ – देवास से 19 कि.मी. दक्षिण में विंध्य की पहाड़ियों में है।

राघोगढ़ (देवास) के अमर शहीद दौलतसिंह राठौड़

राघोगढ़ तथा हाटपीपलिया, देवास जिले के लिए तीर्थ समान है। इन दोनों ठिकानों की अपार ख्याति तथा प्रतिष्ठा है।

राघोगढ़, देवास 22^0 11 उत्तर तथा 76^0 42 पूर्व में देवास से 19 कि. मी. दूर है। यह इंदौर–नेमावर मार्ग पर विंध्याचल की पहाड़ियों में बसा है।

1857 के महासमर के सेनानी ठाकुर दौलतसिंह राठौड़, स्वतंत्रता की भावना से ओतप्रेत थे। उनका वंशक्रम देखें तो वे जोधपुर राजवंश के 'राठौड़' वंशी थे। जोधपुर बसाने वाले महाराज जोधाजी के पुत्र महाराज भारमल राठौड़ का वंश राघोगढ़ के दौलतसिंह राठौड़ तक आता है– दौलतसिंह की पाँचवीं पीढ़ी में ठा. इंद्रजीतसिंह राठौड़ तथा ठा. चेतसिंह राठौड़ – इस समय 'बरखेड़ा सोमा' नामक ग्राम में निवास कर रहे थे।

1857 दौलतसिंह के लिए स्वतंत्रता में अपना सक्रिय योगदान की ऐतिहासिक भूमिका निभाने वाला भी समय था। एक संकल्प मालवा तथा देवास के जनगण में आकार ले रहा था। यह संकल्प के साथ निर्णय लेकर किया गया संघर्ष था। साम्राज्यवादी शक्ति के शोषणकारी पंजे से अपने मुल्क भारत की संपूर्ण स्वतंत्रता का विचार काम कर रहा था। विदेशी सत्ता जो भारत का अर्थतंत्र उसकी उत्पादन प्रणाली, उसकी शिक्षा, संस्कृति तथा सामाजिक सौहार्द मिटा रही थी, उसके खिलाफ विभिन्न हिस्सों में लोग खड़े हुए थे। यह साम्राज्यवादी शोषण के खिलाफ लड़ा जाने वाला सर्वाधिक व्यापक, अनोखा संघर्ष था।

दौलतसिंह पूर्णतया स्वतंत्रता की भावना से प्रेरित थे। क्योंकि जिस तरह उन्होंने 1857 में संघर्ष किया तथा अपना बलिदान दिया, उससे उनकी संगठन क्षमता, स्पष्ट लक्ष्य और क्षमता का पता चलता है। दौलतसिंह राठौड़ का ठिकाना राघोगढ़ था। [1] लेकिन उन्होंने धनतालाब, सतवास, नेमावर, निमनपुर, कन्नौद, परगना (उदयनगर–पुंजापुरा क्षेत्र) तथा हाटपीपलिया, शुजालपुर तक अपना संगठनात्मक तंत्र स्थापित कर लिया था। इसी दौरान दौलतसिंह का संपर्क, तात्याटोपे, राव साहब, भोपाल के आदिल मोहम्मद

[1] राघोगढ़, ओल्ड सीहोर रोड़ पर था (इंदौर–नेमावर मार्ग पर) यह मार्ग महू छावनी से इंदौर होता हुआ राघोगढ़, चापड़ा, धनतालाब, कन्नौद, खातेगांव से हंडिया और भोपाल की तरफ जाता है।

खान से हुआ। अमझेरा (धार) के शासक राजा बख्तावरसिंह से दौलतसिंह की [1] पूर्व से ही घनिष्ठता थी। शाहजादा फिरोज से भी परिचय हुआ। इस प्रकार देवास का राघोगढ़ और उसके जागीरदार दौलतसिंह राठौड़ का संघर्ष राष्ट्रीय संघर्ष का हिस्सा बन गया।

राघोगढ़ जिस स्थान पर है, वह सामरिक दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण था। सामने घना जंगल, महू छावनी (इंदौर) को सीहोर छावनी से यही ओल्ड सीहोर रोड ही जोड़ता था जो राघोगढ़ से गुजरता था। महू छावनी (इंदौर) से आनेवाली अंग्रेजी फौजी टुकड़ियों पर दौलतसिंह तथा उनके क्रांतिकारी साथी हमला करके छिन्न–भिन्न कर डालते थे। दौलतसिंह ने एक बड़े हिस्से तथा दमन करने वाली सीहोर छावनी तथा महू छावनी को जबरदस्त टक्कर दे रहे थे। इन गतिविधियों से दौलतसिंह मालवा में लोकप्रिय नायक बन कर उभरे। दौलतसिंह को मिलने वाला जन–समर्थन तथा राष्ट्रीय क्रांति के नायकों से जीवंत संपर्क, ब्रिटिश अधिकारियों के लिए चुनौतीपूर्ण हो गया था।

1 जुलाई 1857 को सादात खाँ मेवाती के नेतृत्व में अंग्रेजों के खिलाफ रेसीडेंसी एरिया की सेना ने बगावत कर दी। रेसीडेंसी में स्वतंत्रता के नारे लगे जो पूरे इंदौर में फैल गए। रेसीडेंसी में तत्कालीन मुख्य अंग्रेज अधिकारी एच.एम. ड्यूरेंट पर हमला हुआ। ड्यूरेंट इंदौर सहित पूरे मालवा में सख्त तथा जुल्मी अधिकारी के रूप में कुख्यात था। उसका मानना था कि उसके रहते मालवा में पत्ता भी नहीं खड़क सकता, 10 मई 1857 की लहर यहाँ आ ही नहीं सकती।

लेकिन ड्यूरेंट को तत्काल समझ में आ गया और वह अपना सुरक्षा घेरा लेकर वहाँ से भाग खड़ा हुआ। वह ओल्ड सीहोर रोड से भोपाल जाना चाहता था। एक रिपोर्ट के अनुसार 'एच.एम.ड्यूरेंट के साथ 27 अंग्रेज, 8 महिलाएँ, 2 बच्चे, 17 अन्य लोग थे। [2] देवास में इंदौर क्रांति की खबरें पहुँच चुकी थी। 2 जुलाई 1857 को ड्यूरेंट राघोगढ़ की सीमा में आया वैसे ही राघोगढ़ के दौलतसिंह के स्वतंत्रता सेनानी अंग्रेजी लश्कर पर टूट पड़े। [3] ड्यूरेंट घायल हो गया। लेकिन चौकन्ने सुरक्षाकर्मियों के कारण बच गया। कुछ लोग मारे गए। ड्यूरेंट को राष्ट्रीय क्रांति का पूर्ण आभास तथा गंभीरता समझ में आ चुकी थी।

दौलतसिंह राठौड़ के स्वतंत्रता अभियान को जन–जन का समर्थन

[1] बख्तावरसिंह (अमझेरा) को इंदौर में अंग्रेजों ने फांसी दी।

[2] मालवा 1857, पृष्ठ 360, डॉ के.सी. लूणिया।

[3] मनोहर मुलगांवकर, पृष्ठ 360

मिला। इसका असर देवास, धार, इंदौर रियासत के क्षेत्रों पर स्पष्ट देखा जा रहा था। नेमावर में मराठा सेनानियों ने समस्त अंग्रेजों को भगा दिया। इधर नेमावर परगने की सतवास गढ़ी पर दौलतसिंह ने कब्जा कर ब्रिटिश आधिपत्य खत्म कर दिया। सतवास संघर्ष में कई राजपूत, जाट, सेनानियों, अहीरों, भौमिया राजपूतों, आदिवासियों (कोरकू तथा भील) ने अपनी कुर्बानियाँ दीं।

राघोगढ़ के दौलतसिंह राठौड़ की गतिविधियों से देवास रियासत तथा ब्रिटिश सत्ता चौकन्नी हो गई थी तथा दौलतसिंह पर सतत निगरानी रखी जा रही थी।

होशंगाबाद के डिप्टी कमीश्नर जे.सी.वुड ने अपने 10 अक्टूबर 1857 के पत्र में लिखा है 'पूरे नेमावर परगने पर विद्रोहियों ने कब्जा कर लिया है, नर्मदा घाटी में इस समय एक भी अधिकारी मौजूद नहीं है न ही पुलिस।'[1] इससे दौलतसिंह की स्वतंत्रता के अभियान को अच्छी तरह समझा जा सकता है।

दौलतसिंह योजनाबद्ध ढंग से काम कर रहे थे। उन्होंने युद्ध परिषद का गठन किया। इस परिषद के सदस्य थे – देहरिया (नेमावर) का मालगुजार खैराती खाँ वल्द शेर खाँ, दाहिद पुरा का मालगुजार खान मोहम्मद खान, ठाकुर लक्ष्मणसिंह राजपूत, नागेहरी का मालगुजार नजीर खाँ। [2] इस परिषद ने संपूर्ण इलाके में स्वतंत्रता का अलख जगाया।

स्वतंत्रता सेनानी दौलतसिंह के नेतृत्व के कारण जनता में नैतिक मनोबल का संचार हो रहा था। सतवास पर स्वतंत्रता सेनानियों के अधिकार के बाद छीपानेर के थानेदार ने (1857) ने रिपोर्ट में लिखा–'विद्रोहियों ने एक हज़ार सिपाहियों पचास सवार, दो छोटी तोपों की मदद से सतवास के किले पर हमला बोल उस पर कब्जा कर लिया एवं अपना झण्डा फहरा दिया।'

दौलतसिंह के साथी क्रांतिकारी 'रामकृष्ण' द्वारा नेमावर में स्वराज की स्थापना

शहीद रामकृष्ण में प्रशासनिक सूझ–बूझ प्रखर थी। 1857 की क्रांति की शुरुआत होते ही रामकृष्ण ने दौलतसिंह के नैतिक–भौतिक सहयोग से नेमावर परगने [3] पर अपनी सरकार कायम कर ली थी। रामकृष्ण वसूली तथा लिखित आदेश जारी करते थे। वे सिंधिया दरबार के दरबारी थे। उन्होंने

[1] राष्ट्रीय अभिलेखागार – नस्ती क्रमांक 12, पत्र दिनांक 19 जुलाई 1857 पृष्ठ 19

[2] म.प्र. अभिलेखागार – 19.09.1857

[3] नेमावर – देवास जिले की खातेगाँव तहसील का ग्राम है। नर्मदा किनारे बसा है। यहाँ नर्मदा का नाभी कुंड तथा पांडव कालीन सिद्धेश्वर महादेव का प्रख्यात मंदिर है। देवास मुख्यालय से 140 कि.मी. पूर्व में स्थित है।

1857 में सिंधिया के प्रति वफादारी का प्रदर्शन तो किया लेकिन ब्रिटिश सत्ता को एक सिरे से नकार दिया। इसका प्रमाण 10 अक्टूबर 1857 का जे.सी. वुड (डिप्टी कमिश्नर) का पत्र है।

दौलतसिंह तथा रामकृष्ण की सबसे बड़ी विशेषता तथा महत्त्वपूर्ण काम यह था कि उन्होंने स्थानीय मेवाती किसानों, गूजरों, जाटों, अहीर, राजपूतों को लामबंद कर लिया था। ये किसान उठ खड़े हुए थे। यहाँ ध्यान देने योग्य बात यह भी है कि रामकृष्ण के कृषक चेतना अभियान के बाद 1943–44 में देवास में 'चरनोई आंदोलन' हुआ। इसकी प्रेरणा 1857 का कन्नौद, खातेगाँव, नेमावर में चला 'किसान एकता' का राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन रहा है। 'चरनोई आंदोलन' व्यापक स्वतंत्रता आंदोलन का हिस्सा भी था। जिसकी पूर्व प्रेरणा तथा नैतिक ताकत नेमावर, सतवास, राघोगढ़, पीपलिया, निमनपुर की किसान चेतना थी। [1]

दौलतसिंह के साथी रामकृष्ण ने, नेमावर से नर्मदा के उस पार जहाँ अंग्रेज छावनी तथा सेना थी, पर तोपों से 'फाइरिंग' कराई। तोप के गोलों को उत्साह से भरे सेनानी रामकृष्ण के नेतृत्व में दाग रहे थे। उधर ब्रिटिश सेना की अठारहवीं बटालियन की एक कंपनी हथियारों के साथ हरदा से हंडिया आई इसका सामना रामकृष्ण के सेनानियों से हुआ। उन्नत हथियारों से लैस ब्रिटिश सेना ने नर्मदा पार की और नेमावर आए। कई दिनों के संघर्ष के बाद क्रांतिकारी रामकृष्ण को पकड़ लिया गया। सजा की कार्यवाही का नाटक करके ब्रिटिश सत्ता ने 13 अक्टूबर 1857 को रामकृष्ण को फाँसी पर लटका दिया। रामकृष्ण भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की बलिवेदी पर चढ़ गया।

सतवास पर सफल अभियान में दौलतसिंह को कंधे से कंधा मिलाकर सहयोग देने वाले लालखाँ मेवाती तथा ब्रिटिश फौज का जमादार कल्याणसिंह महत्त्वपूर्ण स्वतंत्रता सेनानी रहे। ये दोनों स्वतंत्रता सेनानी अंततः पकड़ लिए गए। इन्हें भी रामकृष्ण की फांसी के ठीक चार दिन बाद 17 अक्टूबर 1857 को फाँसी पर लटका दिया गया।[2] हालाँकि दौलतसिंह के विश्वसनीय साथी फाँसी पर लटकाए जा चुके थे। लेकिन दौलतसिंह ने स्वतंत्रता अभियान को कमजोर नहीं पड़ने दिया। इस अभियान की रणनीति इतनी प्रभावी तथा योजनाबद्ध थी कि अंग्रेजों की जुल्म भरी कार्यवाहियाँ असफल हो गईं। राघोगढ़ से नेमावर तक सतवास, राजोर (कन्नौद) खातेगाँव,

[1] चरनोई आंदोलन – 1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के तत्काल बाद देवास रियासत के गांवों में चला सामंतराही स्वैच्छाचार तथा ब्रिटिश शिकंजे के खिलाफ जनता उठखड़ी हुई थी। इस का नेतृत्व, स्वतंत्रता सेनानी स्व. कन्हैयासिंह, स्व. शकर कानूनगो ने किया। इन्हें रियासत से बाहर करके तीन–तीन माह की सजा दी गई थी।

[2] देवास स्टेट गजेटियर पृष्ठ 66–67

संदलपुर, हरदा, शुजालपुर, देवास, सोनकच्छ तक दौलतसिंह ने अपना दबदबा कायम कर लिया था।

राष्ट्रीय स्तर पर क्रांति के नायक गण दौलतसिंह से परिचित थे। 'नाना साहब पेशवा ने राजा दौलतसिंह राठौड़ को तथा युवराज (टेहरी ओरछा) देवीसिंह को अंग्रेजों का विरोध करने तथा उनका खात्मा करने हेतु 4 जनवरी 1858 को पत्र लिखे थे। [1] इन पत्रों में अंग्रेजों का सफाया करने के निर्देश स्पष्ट रूप से लिखे गए थे। इन पत्रों तथा दौलतसिंह की भूमिका, अनेकानेक शहीदों, क्रांतिकारियों की गतिविधियाँ देवास की राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में महत्त्वपूर्ण योगदान है।

हरदी नामक स्थान पर दौलतसिंह पर अंग्रेजों ने हमला किया। लेकिन दौलतसिंह गोपनीय तौर से हरदा पहुँच गए। भोपाल रियासत के अधिकारी अहमद खाँ ने भोपाल बेगम सिकंदर को 30 नवंबर 1857 को पत्र लिखा था कि नर्मदा तटीय क्षेत्र दौलतसिंह के सेनानियों से सराबोर है। [2]

देवास की दोनों रियासतें (सीनियर एवं जूनियर यानी छोटी पांती और बड़ी पांती) अंग्रेजों के भारी दबाव के बावजूद 'राघोगढ़' को दबाने में कामयाब नहीं हो पा रही थी। ब्रिटिश सत्ता ने स्वतंत्रता संग्राम के केंद्र राघोगढ़ को नेस्तनाबूद करने का फैसला कर लिया।

क्रांतिकारी दौलतसिंह का महू (इंदौर से 30 कि.मी. दूर फौज़ी छावनी) छावनी पर अभियान।

दौलतसिंह की ख्याति चारों ओर फैल गईं दौलतसिंह, ब्रिटिश सत्ता की पकड़ में नहीं आ रहे थे। अंग्रेज उन्हें गिरफ्तार करने के लिए जी जान से उनके पीछे पड़े थे। अंग्रेज जनता को प्रलोभन–लालच देते थे, डर दिखाते थे लेकिन दौलतसिंह को गिरफ्तार नहीं कर पा रहे थे। इसका सीधा अर्थ यह था कि दौलतसिंह की जनता में पैठ थी और उनकी गोपनीय रणनीति सफल भी थी।

जब यह पता चला कि अमझेरा (जिला धार) के राजा बख्तावरसिंह को अंग्रेजों ने धोखे से पकड़ लिया है। उन्हें महू छावनी में कड़े पहरे में रखा है तो दौलतसिंह ने बख्तावरसिंह जैसे स्वतंत्रता सेनानी को मुक्त कराने के लिए महू छावनी पर सशस्त्र अभियान किया। दो गंभीर प्रयासों के बाद भी भी बख्तावरसिंह को मुक्त नहीं करा सके क्योंकि फौजी छावनी पर कड़ा

[1] शासकीय अभिलेखागार नई दिल्ली कंसलटेशन 89–92 दिनांक 30 जुलाई 1858 (म.प्र. के रणबाँकुरे – डॉ सुरेश मिश्र)
[2] राज्य अभिलेखागार – भोपाल, नस्ती क्रमांक 63 पत्र 30 नवम्बर 1857 पृष्ठ 275
[3] महू अभियान का वर्णन 'अमझेरा राज्य के इतिहास' में – रघुनाथसिंह संदला ने भी किया है।

पहरा था। [3]

दौलतसिंह को पकड़ने के लिए ब्रिटिश सत्ता ने इनाम घोषित किया। देवास की तत्कालीन रियासत ने एक इश्तिहार छापा जिसमें दौलतसिंह को पकड़ने के लिए दो हज़ार रुपये के इनाम की घोषणा की।[1]

राघोगढ़ पर ब्रिटिश फौज का हमला

ब्रिटिश सत्ता चप्पे–चप्पे पर दौलतसिंह को खोज रही थी। जैसे ही दौलतसिंह का पता चला कि राघोगढ़ की गढ़ी में है तो महू की तरफ जाती हुई सेना ने जिसमें तीन सौ सवार, एक सौ पैदल सैनिक, छह तोपें थी। राघोगढ़ की गढ़ी तथा बस्ती पर हमला कर दिया। इस समय दौलतसिंह के चचरे भाई रामसिंह तथा अन्य परिजन मौजूद थे। शाम तक हमला जारी रहा। दौलतसिंह ने बाहर निकल कर ब्रिटिश दस्ते पर हमला किया और ब्रिटिश घेरे से निकल गए। अंग्रेज हाथ मलते रहते गए। बदला लेने की कुटिल नीति के चलते ब्रिटिश सेना ने वहाँ जो मिला उसे गढ़ी में स्थित बरगद तथा पीपल की डालियों से लटका कर फांसी दे दी। सैकड़ों लोग शहीद हो गए।

4 जनवरी 1858 को गढ़ी पर ब्रिटिश सेना का कब्जा हो गया। दौलतसिंह की जागीर के 22 गाँव देवास सीनियर, देवास जूनियर रियासतों में 11–11 गाँव बाँट दिए। राघोगढ़, सीनियर रियासत को मिला। [2]

लंबा संघर्ष करते हुए इस महान क्रांतिकारी दौलतसिंह ने धार के पास बाघ की गुफा में शरण ली। इनके साथ राजसिंह, सूरजमल, सादात खाँ सहित पैंतीस राजपूत अन्य सेनानी भी थे। इसी गुफा को अंग्रेजों ने घेर लिया। गोलियों से दौलतसिंह घायल हो गए। उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। शिवपुरी में वीर तात्या टोपे के साथ ही उन्हें भी फांसी पर लटका दिया गया। [3]

इस महान सेनानी के तीन बेटों प्रतापसिंह, रघुनाथसिंह, चैनसिंह को आकिया गाँव के पटेल ने गोपनीय तौर पर सुरक्षित रखा। राघोगढ़ के पास बरखेड़ा सोमा नामक गाँव में दौलतसिंह के वंशज इंद्रजीतसिंह राठौड़ तथा चेतसिंह राठौड़ अपने परिवार के साथ रहते हैं। सामाजिक जीवन में सेवा, सौहार्द, भ्रातृभाव के लिए वे आज भी जाने जाते हैं।

---

[1] महान विद्रोह कालीन अभिलेख 1857, संपादक–डॉ. रघुवीरसिंह सीतामऊ

[2] यह बंटवारा – 1860 में दस्तावेजी किया गया।

[3] 14 अप्रैल, 1858 (झांसी कैम्प) हेमिल्टन का पत्र, इसमें घायल दौलतसिंह की कैम्प में मृत्यु बताई गई है जबकि शिवपुरी दस्तावेज में फांसी बताई गई है।

1857 के महान समर में दौलतसिंह तथा उनके साथियों के बलिदान 1947 तक के स्वतंत्रता संग्राम में गहरी प्रेरणा बनी रही है।

देवास जिले के हाटपीपलिया में स्वतंत्रता संग्रामः ठा. शकतसिंह सक्तावत तथा ठा. बख्तावरसिंह सक्तावत का बलिदान

हाटपीपलिया, देवास जिले की बागली तहसील का प्रमुख क्षेत्र है। यहाँ व्यवसाय, शिक्षा, चिकित्सा तथा अनाज मंडी का प्रमुख क्षेत्र है। हाल ही में मध्य प्रदेश शासन ने इसे पृथक तहसील का दर्जा – 2008 में दिया है। भौगोलिक रूप से यह विंध्याचल पर्वत श्रेणी में मालवा का हिस्सा है। हाटपीपलिया 220° 48'' उत्तरी अक्षांश एवं 760° 34'' पूर्वी देशांतर में स्थित है। यह देवास मुख्यालय से 45 कि.मी. तथा इंदौर से 60 कि.मी. की दूरी पर स्थित है।

1857 के महासमर के समय इसे सिर्फ पीपलिया कहा जाता था। यह सिसौदिया वंश की 'सक्तावत' [1] राजपूतों की जागीर का केंद्र था। सक्तावत ठिकाने में 14 प्रमुख गाँव थे। इसमें सभी धर्मजाति के लोग रहते थे। विभिन्न धंधों, कृषि उत्पादन करने वाली जातियाँ थी।

1857 के महान स्वतंत्रता संग्राम की प्रेरणा आंधी बन गई थी। हाटपीपलिया ठिकाने के जागीरदार ठा. शकतसिंह सक्तावत ने अंग्रेजी सत्ता के खिलाफ संघर्ष करने की प्रतिज्ञा की। अपने भाई बख्तावरसिंह सक्तावत, फतेसिंह, भवानीसिंह, रघुनाथसिंह तथा मोतीसिंह से विचार–विमर्श किया। वैसे शकतसिंह, राघोगढ़ के क्रांतिकारी दौलतसिंह के संपर्क में थे ही। देवास में तात्या टोपे, राव साहेब तथा अन्य क्रांतिकारी गोपनीय रूप से ठहरते थे। इसी बीच राघोगढ़ को खत्म करने के लिए 'हैदराबाद कांटिजेंट' लाया गया। ब्रिटिश सेनापति जनरल ऑर महू छावनी (इंदौर) जाने के लिए नर्मदा पार करके नेमावर–सतवास–पानीगाँव (देवास) से होता हुआ आगे बढ़ा, जनरल ऑर के साथ दस हजार की फौज थी। इसमें तोपें, बंदूक तथा प्रशिक्षित सैनिक दस्ता भी था। देवास के दो क्रांति केंद्र राघोगढ़ तथा हाटपीपलिया को समूल नष्ट करने के लिए जनरल ऑर दृढ़प्रतिज्ञ था। इंदौर क्रांति में

[1] 'सक्तावत' सिसौदिया वंश की शाखा है। महाराणा प्रताप के छोटे भाई शक्ति सिंह के वंशजों को 'सक्तावत' नाम से पहचाना जाता है।

राघोगढ़ के पास कर्नल हेनरी ड्यूरेंट की दुर्गति का उसे पता था। जनरल ऑर हाटपीपलिया आ धमका। [1]

हालाँकि देवास रियासत भी ठा. शकतसिंह सक्तावत को धमकाती रही कि अंग्रेजों से टकराना नहीं वर्ना गंभीर परिणाम भुगतने होंगे। लेकिन इस चेतावनी को दरकिनार करके 'सक्तावत राजपूतों' के नेतृत्व में लोगों ने स्वतंत्रता समर में संघर्ष करने का अडिग फैसला ले लिया था।

जनरल ऑर ने हाटपीपलिया तथा गढ़ी को घेर लिया और फ़र्मान जारी किया कि सक्तावतों मेरे (जनरल के) सामने हाजिर हो, लेकिन शकतसिंह सक्तावत तथा बख्तावरसिंह सक्तावत ने आदेश मानने से इंकार कर दिया और जवाब में कहा कि 'अंग्रेजों को हम शासक नहीं मानते, न उनकी सत्ता को मानते हैं। देश पर कब्जा करके लूटने वालों से मुक्त कराना हमारा कर्तव्य है।'

जनरल ऑर को हाटपीपलिया के दृढ़ संकल्प का पता चल गया था। उसने अपनी तोपों से गोले बरसाना शुरू कर दिया। एक सशक्त विरोधी फौज का मुकाबला करते हुए ठा. शकतसिंह, ठा. बख्तावरसिंह शहीद हुए उनके साथ धौकलसिंह सक्तावत, एक अन्य जिनका नाम भी धौकलसिंह तंवर, रामसिंह गहलोत, जमादार गुलाब खाँ, जमादार खान जी, एक मराठा सरदार, बागरी जाति के चार वीर सेनानी भी शहीद हुए। अन्य आठ और लोगों ने भी शहादत दी। इसके अलावा कुछ किसान, कारीगर और अन्य नागरिक भी मारे गए। हाटपीपलिया राष्ट्रीय संघर्ष का क्षेत्र बन गया। हाटपीपलिया ने स्वतंत्रता के इतिहास में अपना स्थान बना लिया।

इस संघर्ष में सक्तावत परिवार के गंभीर रूप से घायल फतेसिंह, भवानीसिंह, रघुनाथसिंह तथा मोतीसिंह को ब्रिटिश सेना ने गिरफ्तार कर लिया। इन्हें कड़ी निगरानी में रखा गया। संघर्ष थमने के बाद ब्रिटिश सेना ने वहशियाना कारनामें पर उतर आईं जो मिला उसे मारा, तहस–नहस किया। और हाटपीपलिया की गढ़ी को ध्वस्त कर दिया।

गढ़ी में उपस्थित बहू–बेटियों और अन्य महिलाओं ने गढ़ी के कुएँ में कूद कर जान दे दी। कुछ मासूम बच्चों को लेकर विश्वस्त प्रौढ़ तथा वृद्ध महिलाएँ नदी–नाले और अन्य मार्गों से निकल गईं।

---

[1] They then marched with all speed in to Malwa and Coercing on their way the refractor Zamindar's of Piplia and Raghogarh.
History of Indian Mutiny 1857-59 Volume-III by G.B. Maleson London 1888 A.D.

हाटपीपलिया का यह स्वतंत्रता संग्राम कार्तिक नवमी बुधवार संवत 1914 विक्रम संवत सन् 1857 को हुआ। स्वतंत्रता का यह संघर्ष 'बुधवार' को हुआ था इस कारण बुधवार को ही 'पीपलिया' में हाट लगने लगा इसलिए इसका नाम 'हाटपीपलिया' पड़ा। इसमें स्वतंत्रता की गहरी भावना निहित है।

हाटपीपलिया की गढ़ी में सिसोदिया (सक्तावत) राजपूतों की कुल देवी 'बायण माता' तथा देवनारायण जी तथा भैरूजी के मंदिर हैं। 'हाटपीपलिया' पूरे स्वतंत्रता समर में प्रेरणास्रोत बना रहा और आज भी यह पूजनीय तथा सम्मानित स्थान के रूप में मान्य है।

शहीद शकतसिंह सक्तावत तथा शहीद बख्तावरसिंह सक्तावत के वंशज श्री विक्रमसिंह सक्तावत तथा दिलीप सिंह सक्तावत जिक्राखेड़ा गाँव [1] में निवास करते हैं। इनके पुत्र कुँवर योगेन्द्रसिंह, विजयसिंह, चितरंजनसिंह सामाजिक, सांस्कृतिक क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं।

[1] हाटपीपलिया के पश्चिम में जिक्राखेड़ा गाँव स्थित है।

देवास की प्रकृति व संस्कृति

देवास की नदियों में बहता जल, सागौन के खूबसूरत जंगल, तीनों मौसम की लुभावनी तासीर, पक्षियों के कलरव देख कर किसी अनचिह्ने आनंद में अपने को डूबा हुआ पाता हूँ तो ऐसा लगता है, अपना यह जिला अपना घर है। इसे घर की चारदीवारी में भी भरपूर महसूस किया जाता है। कन्नौद–खातेगाँव के घाट और सघन जंगल, बागली बरझाई का घाट और जंगल, नेमावर के मंदिर और नर्मदा की विशाल जलराशि, गंधर्वपुरी का ऐतिहासिक अहसास और सोनकच्छ की कालिसिंध का प्रवाह और प्राचीन मंदिरों की पवित्रता कितना–कितना मन मोहती चलती है। देवास की टेकरी और उसके मंदिर की गहरी शक्ति लहर पैदा करती हैं तो भौंरासा का भँवरनाथ जी का मंदिर, झरनेश्वर के मंदिर, इकलेरा माता जी का मंदिर आध्यात्मिकता का अनिर्वचनीय सुख से भरते हैं।

बिलावली, मेढ़की के पक्षी विहार, क्षिप्रा में लहराती आदिम अहसास की गंध, किसी भी इंसान को देवास से बाँध लेती है। मुझे लगता है कुल जमा देवास के सांस्कृतिक परिवेश में अजीब सा बंधन है। यह जकड़न नहीं है, वरन् बहुत कुछ पाने का अहसास देता है। बंधन–स्वातंत्र्य भी देता है। रिश्तों के बंधन–सांसों में, धड़कनों में अपने संपूर्ण अस्तित्व में समाँ कर अपने हो जाते हैं। देवास को अलग करके देखना यानी अपने को नकारने जैसा है। कभी लगता है कि मैं देवास से अलग हो कर अपने ही घर में प्रवासी या अजनबी होने जैसा महसूस करूँगा। लेकिन देवास से बेगाना होने का प्रश्न ही कहाँ है? मेरे बाहर–भीतर सब तरफ अपना यह कस्बा, उसका परिवेश के बीचो–बीच छाया हुआ है। चारों ओर लोक–संस्कृति, काव्य, गीत, गायन, वादन और चित्रांकन का वातावरण हैं। ये सभी एक ऐसी दुनिया रचते हैं जहाँ सुकून है, शांति है, रचनात्मकता है, अपनापन है और अपनेपन की रिश्तों, नातों का जीवनदायी कुनकुनापन भी है। यही रिश्तों की कुनकुनी आँच की गर्मी है।

देवास और लता मंगेशकर

सुर सामग्री लता मंगेशकर के शानदार गीतों ने असंख्य दिलों को सुकून दिया है। रात के अँधेरे में अपने दुखों, दर्दों को सहलाते लोगों ने लता के गीतों में अपना ही दर्द देखा है, उसमें दमकती आशा और उम्मीदों के

खिलते फूल महसूस किए हैं। अनगिनत लोगों के सुखों को मधुर और दिव्य बनाते उनके गीतों ने खुशियों से भर दिया है। लता इंसानी विचार, भावनाओं, संवेदनाओं, सुखों, दुखों में 'जीवनदायी' तत्त्व के रूप में मौजूद हैं।

इन्हीं लता मंगेशकर का देवास से बड़ा गहरा नाता रहा है। वैसे लताजी को किसी गाँव, कस्बे और शहर से जोड़ना ठीक नहीं लगता। वे तो पूरे देश की, पूरे एशिया और समग्र दुनिया की हैं। फिर भी गौरव के बिखरते करोड़ों अरबों बूँदों में से एक बूँद की विशाल दुनिया में अपना कुछ ऐसा है जो देवास का बना ही लिया जाता है।

प्रख्यात शास्त्रीय गायक संगीत सम्राट रजब अली खाँ देवास के अप्रतिम व्यक्तित्व रहे। उनकी गायकी देश में गूंजती थी। यह महान गायक प्रख्यात नाथ योगी सद्गुरु शीलनाथ जी के शिष्य थे। रजबअली खाँ के भतीजे तथा गंडाबंद शिष्य उस्ताद अमानत अली खाँ थे। अमानत अली खाँ बंबई (मुंबई) के भिंडी बाजार में रहते थे। लता मंगेशकर शास्त्रीय संगीत सीखने के लिए अमानत अली खाँ के पास जाती थीं। लता जी बार–बार देवास के प्रति अपना रिश्ता और आभार व्यक्त करती हैं। रजब अली खाँ तथा अमानत अली खाँ ने शास्त्रीय संगीत की दुनिया में देवास का नाम स्थापित किया था। इन दोनों यानी गुरु–शिष्य की समाधियाँ (मज़ार) देवास में है। मध्य प्रदेश शासन इन दोनों महान गायकों की स्मृति में प्रतिवर्ष 8 एवं 9 जनवरी को अखिल भारतीय संगीत समारोह का आयोजन देवास में करता है। इसमें देश के प्रसिद्ध गायक, वादक आमंत्रित होते हैं।[1] लताजी देवास को बड़े अदब से याद करती हैं।

पद्म विभूषण पंडित कुमार गंधर्व

पंडित कुमार गंधर्व भारतीय शास्त्रीय संगीत की अप्रतिम उपलब्धि थे। कुमार जी संगीत से एकाकार कलाकार रहे। देवास के गर्व में उनकी सांस्कृतिक दुनिया में खिले हुए फूलों की गंध, साँसों में प्राणवायु की तरह है। वैसे तो पंडित कुमार गंधर्व कर्नाटक के बेलगाम जिले के सुलेभावी गाँव के थे। कुमार गंधर्वजी का जन्म 8 अप्रैल 1924 को हुआ था। वैसे उनका वास्तविक नाम 'शिवपुत्र सिद्धरामैया कोमकली कुमार गंधर्व था।' उन्होंने प्रो. बी.आर. देवधर और सुश्री अंजनीबाई मालपेकर से संगीत शिक्षा ग्रहण की थी।

इस महान प्रतिभाशाली गायक को देवास ने जब अपने आँचल में पाया तो देवास के गर्व में उसके सांस्कृतिक परिवेश में जैसे बहारें आ गई

[1] कुमार गंधर्व समारोह, देवास में 8 अप्रैल (8–9) को भव्यता से प्रतिवर्ष मनाया जाता है।

थीं। कहाँ कर्नाटक का बेलगाम (सुलेभावी) और कहाँ मालवा का देवास ? देवास की 'आबो हवा' कुमार जी को ऐसी रास आई कि वे देवास के और देवास उनका हो गया। कुमार गंधर्व 1948 में देवास आ गए फिर जीवनपर्यंत देवास में ही रहे। [1]

कुमार गंधर्व क्रांतिकारी गायक थे। देश के शीर्षस्थ शास्त्रीय गायकों में अपना अद्वितीय स्थान रखते थे। कुमार जी ने कई अप्रचलित रागों का पुनराविष्कार किया। कई नए रागों की बंदिशों की रचना की। कुमार जी क्रांतिकारी कुछ यूँ भी थे कि उन्होंने घराना शैली से अलग हटकर शास्त्रीय संगीत और लोक संगीत, मालवी, अवधी, ब्रज को बेमिसाल जीवंतता और ऊर्जा प्रदान की। प्रयोगधर्मा कुमार गंधर्व देवास की मालवी माटी, हवा, पानी में रच–बस गए।

कुमार जी को भारत सरकार ने पद्मभूषण और पद्म विभूषण अलंकरण प्रदान किए। केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी का राष्ट्रीय सम्मान, म.प्र. शासन का शिखर सम्मान तथा अखिल भारतीय कालिदास सम्मान दिया गया था। देश–विदेशों में उनकी संगीतीय प्रस्तुतियों को भरपूर प्रशंसा मिली। उनके गायन से श्रोता हमेशा भाव विभोर होते रहे।

यह लिखते हुए मुझे वे तमाम स्मृतियाँ ताजा हो रही हैं जो कुमार जी के साथ चर्चा भेंट, बातचीत, सहज भेंट तथा उनसे साक्षात्कार लेते वक्त हुआ था। वे पल, वो समय, वह आत्मीयता उनकी भोली–भोली अपनत्व से भरी आवाज, मित्र–स्नेह–भाव सब याद आ रहे हैं। देवास ने कुमार जी को सम्मान, प्यार, बंधुत्व, के रिश्ते से भी बाँध लिया था। कुमार जी ने देवास को, उस जनमानस को और उसके सांस्कृतिक संगीत परिवेश को भरपूर समृद्ध किया। मेरे जीवन में जो भी उपलब्धियाँ हैं उसमें सबसे बड़ी उपलब्धि कुमार गंधर्व जी से परिचय, अपनापन, मैत्री का रिश्ता तो था ही साथ ही उनका मेरे प्रति अनुज वत या पुत्रवत भाव का रहना भी था।

इस महान् शास्त्रीय विभूति का निधन 12 जनवरी, 1992 को देवास में हुआ। जीवन की अंतिम पायदान से अनन्त यात्रा की ओर वे चले गए!

वे इस दुनिया से चले गए है हम सभी जानते हैं, लेकिन उनकी उपस्थिति का अहसास सदैव बना रहता है। यह अहसास यह अनुभूति जीवंत बनी हुई है।

कुमार गंधर्व की विरासत को सँभालना इतना आसान नहीं था

[1] कुमार गंधर्व समारोह देवास में 8 अप्रैल (8–9) को भव्यता से प्रतिवर्ष मनाया जाात है।

लेकिन जिस तरह भानुताई ने अपनी जीवटता से कुमार जी को संबल दिया, वह अद्‌भुत था । भानुताई (श्रीमती भानुमती कोमकली) का दिव्य व्यक्तित्व, कुमार जी के भौतिक आध्यात्मिक और संगीत को भव्य वाटिका में सहेज कर गया था।

उस भानुताई के बाद ताई वसुंधरा कोमकली ने पूरे दायित्व से निभाया। संगीत और जीवन दोनों की सहचरी का धर्म निभाया। वसुंधरा जी को भारत सरकार ने 'पद्‌मश्री' देकर सम्मानित किया। यह वसुताई की संगीत साधना का भी सम्मान था।

पं. कुमार गंधर्व–भानुताई के पुत्र मुकुल शिवपुत्र ने अपनी काबिलियत और प्रतिभा से संगीत में ऊँचा स्थान बनाया। वहीं कुमार जी और वसुंधरा जी की पुत्री कलापिनी कोमकली ने शास्त्रीय संगीत में अपनी उपस्थिति से कुमार परंपरा को समृद्ध किया। 'कलापिनी' देश–विदेश सहित आकाशवाणी, दूरदर्शन और सभी सम्मानित संगीत समारोहों में श्रेष्ठ शास्त्रीय गायिका के रूप में स्थापित हैं।

कुमार गंधर्व जी के पोते भुवनेश कोमकली ने अपने दादा, पिता, दादी की परंपरा पूरी जिम्मेदारी से निभाया और आज भुवनेश कोमकली देश के चर्चित शास्त्रीय गायक के रूप में मान्य हैं। देश विदेश में श्रेष्ठ समारोह में प्रस्तुतियाँ देते हैं।

देवास को इन शास्त्रीय संगीत के रत्नों ने अपनी आभा से जगमग बनाया है। यह सांगीतिक जगर–मगर की आभा से देवास को आलोकित कर रहा है। इस आलोक में हम सभी विचरते और डोलते हैं। गर्व को महसूस करते हैं।

संगीत की दुनिया में एक नाम और है जिसे जानना, समझना नितांत जरूरी है। स्व. कृष्णराव मजुमदार आप संगीत सम्राट रजब अली खाँ के शिष्य थे। आपने अनेकानेक महफिलों में प्रस्तुतियाँ दी और प्रशंसा प्राप्त की। श्री कृष्णराव मजुमदार की पुत्री श्रीमती कल्पना झोंकरकर ने शास्त्रीय गायिकी में अपना विशिष्ट स्थान बनाया है। नरेंद्र पंडित ने भी अपने गायन से देवास को समृद्ध किया।

देवास का सामाजिक क्षेत्र बेहद सुरुचि संपन्न है। आज भी वह देवास, मालवा और देश के हर हिस्से, हर महफिल में अपनी सशक्त उपस्थिति दर्ज कर रहा है। इस परंपरा में स्व. शिराज खाँ तथा असरार अहमद भी रहे हैं।

देवास का रंगमंच

रंगमंच के भी श्रेष्ठ कलाकारों ने देवास के नाम को रोशन किया है। पंडित परिवार संस्कृति, कला का सक्रिय सहयोगी तथा संरक्षक परिवार है। स्व. नरेंद्र पंडित, अखिल भारतीय गायन में सर्वश्रेष्ठ प्रथम पुरस्कार प्राप्त व्यक्ति थे। नाटक, गायन में वे सक्रिय और रचनात्मक भूमिका निभाते रहे। इस परिवार के साथ रजबअली खाँ और पंडित कुमार गंधर्व का पारिवारिक संबंध रहा। संगीत की महफिलें लगातार आयोजित होती थी। नाटकों का भी सिलसिला जारी रहता था।

इसी पंडित परिवार में नरेंद्र पंडित, आकाशवाणी में अपनी सेवाएँ देते हुए केंद्र निदेशक रहे। इस दौरान नरेंद्रजी ने गायन, कहानी, नाटकों से युवा पीढ़ी को जोड़ा। इससे कई उदीयमान कलाकार उभरे।

स्व. नरेंद्र पंडित के पुत्र चेतन पंडित ने 'नेशनल स्कूल ऑफ़ ड्रामा', दिल्ली से शिक्षा प्राप्त की। उसके बाद वे कई नाटकों तथा नाट्य निर्देशन में संलग्न रहे। चेतन बेहद प्रतिभाशाली कलाकार हैं। लोक गायन, विशेषकर मालवी में सिद्धहस्त हैं। इन दिनों वे मुंबई में कई टी.वी. सीरियलों तथा महत्त्वपूर्ण बड़ी फिल्मों में काम करते हुए सभी की प्रशंसा अर्जित की है। चेतन पंडित के साथ देवास की इस नाट्य मंच परंपरा में चेतन पंडित की पत्नी श्रीमती कनुप्रिया पंडित भी हैं। कनुप्रिया मुंबई में अपनी प्रतिभा और परिश्रम से इस परंपरा तथा कला परिवेश को सुसमृद्ध कर रही हैं। नाटकों के संदर्भ में कई अग्रज तथा युवा कलाकारों के नाम भी रेखांकित किए जाने योग्य है। स्व. श्याम सुंदर निगम, स्व. शरदचंद्र राव जाधव, नरेंद्र पंडित, श्री सहस्रबुद्धे तथा श्री माचवे, श्री दिलीप चौधरी, श्री नवरतन ठाकुर का उल्लेखनीय कार्य है। मालवा में लोकमंच की सशक्त परंपरा है और इस पृष्ठभूमि के कारण नाटक के प्रति सहज अभिरुचि पैदा होती है। अब इस परंपरा को नवीन ऊर्जा की आवश्यकता है। इसे मदद देनी होगी तथा अभियान में बदलना होगा। देवास में लोकमंच, थियेटर के कई कलाकार हैं। इन्हें खास तरह से प्रोत्साहन और सहयोग देकर काफी बड़ी उपलब्धियाँ हासिल की जा सकती हैं। श्री नवरतन सिंह प्रकाश झा जैसे फिल्म निर्देशकों की फिल्मों में काम कर चुके हैं। अभी ये कई नये प्रोजेक्ट में संलग्न हैं।

चित्रकला और देवास

चित्रावण में देवास का हर गाँव, खेड़ा, मुहल्ला भरापूरा है। नाम ही गिनाने लगे तो कई पृष्ठ भर जाएँ। एक लंबे समय से एक बड़ा इतिहास और

कला की बड़ी सशक्त परंपरा देवास में रही है। फिर भी पीढ़ियों का नेतृत्व करनेवाले या प्रतिनिधि चित्रकारों के नामों का उल्लेख अति आवश्यक है।

दरबार में सम्मानित चित्रकार श्री नानाजी भुजंग, श्री बी.डी. पवार, श्री सखाराम मुसव्वर थे। जिन्होंने बाद में चित्रकला को ऊँचाइयाँ दी, उनमें श्री मार्तण्डराव कापड़े गुरुजी, श्री नसीर अहमद खिलजी, श्री विष्णु चिंचालकर रहे हैं। इसी दौर में अन्य चित्रकार हुए जिन्होंने बेहतरीन काम किया था उनमें श्री आत्माराम कारपेंटर, श्री वासुदेव दुबे, श्री माधव गिरि, श्री शंकर पुरकर, श्री माधव शांताराम रेगे, श्री वासुदेव क्षीरसागर, श्री रतनलाल शर्मा, श्री एन. एन. परमार, श्री पाटनकर, श्री गुणकुले, श्री बाजीराव घाड़गे, श्री नारायण भोंसले एवं श्री वसंतराव दाभाड़े प्रमुख थे।

उक्त सूची से पता चलता है कि देवास की कला परंपरा तथा परिवेश कितना कलात्मक रहा है। इसकी परंपरा में अपना योगदान करने करने वाले कलाकार रहे – श्री अफजल पठान, श्री रमेश राठौर, श्री मधुकर शिंदे, श्री हुसैन शेख, श्री सुरेंद्र महाडिक, श्री विजय सुराणा, श्री हरीश गुप्ता, श्री बाबू खाँ, श्री इसहाक शेख, श्री दत्तात्रय मुले, संध्या जैसे चित्रकार रहे।

प्राचीन और आधुनिकता का सशक्त चित्रांकन का नया दौर देवास में शुरू हुआ। इसमें प्रमुख नाम श्री प्रभु जोशी का है। प्रभु जोशी ने ऑयल पेंट, वॉटर कलर में प्रभावी काम किया है। अनेकानेक राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय सम्मान जीतने वाले प्रभु जोशी के चित्र भारत तथा बाहर के देशों के प्रतिष्ठित कला संग्रहों में संगृहीत किए गए हैं। निःसंदेह प्रभु जोशी ने देवास का प्रदेश का तथा देश का नाम कला के क्षेत्र में सम्मान के साथ स्थापित किया। यहाँ एक बात और कहना आवश्यक है कि प्रभु जोशी मूलतः साहित्यकार हैं। उन्होंने हिंदी में श्रेष्ठ कहानियाँ तथा उपन्यास भी लिखे हैं। पेंटिंग उन्होंने स्वयं ही शुरू किया। उन्होंने पेंटिंग की कहीं से कोई शिक्षा नहीं ली। स्वयं की प्रतिभा से वे देश के श्रेष्ठ चित्रकार के रूप में स्वीकृत हैं। दर्शकों तथा कला समीक्षकों ने उनके काम को श्रेष्ठ तथा कला में बड़ा योगदान माना है।

इसी क्रम में रमेश आनंद ने भी अपनी उपस्थिति दृढ़ता से दर्ज की। रमेश आनंद प्रदेश के एक ऐसे स्थापित चित्रकार हैं जिन्होंने देवास के नाम को रोशन किया है। रमेश आनंद सतत रचनारत पेंटर है। अनेक कला दीर्घाओं में आपकी पेंटिंग लगी हैं। एकल तथा समूह दोनों में ही प्रदर्शित हुए हैं। उन्हें अनेक सम्मान मिले। वे एक सफल कवि के रूप में भी जाने जाते हैं।

रमेश आनंद के साथ–साथ अनेक चित्रकार हैं जो देवास की

कला–परंपरा को अखिल भारतीय परिदृश्य तक ले गए हैं। इनमें नवनीत क्षोत्रिय, सफदर सामी, डी.एस. मयूर, बी.आर. बोदड़े, सुशीला बोदड़े, मनीष रत्न पारखे, भरत गुर्जर और रमेश सोनी हैं।

देवास का कला संसार इतना भरा–पूरा है कि इसे कला का क्षेत्र भी कह सकते हैं। एक बात ध्यान देने योग्य है कि ये सभी कलाकार नाम, ख्याति, प्रचार से दूर अपनी कला साधना में रमे रहने वाले लोग हैं। बड़ा ही संतुष्टि भरा भाव देखने को मिलता है। दूसरों की प्रशंसा करते हुए कलाकारों का यहाँ भरा–पूरा समाज है। यही देवास की विशेषता है।

युवा–आधुनिक चित्रकारों में अभिलाष भट्टाचार्य, हरीश पैठनकर, राजेश जोशी, सारंग क्षीर सागर, सोनाली पीठवे, अनिल यादव, अभिषेक उइके, आशीष पाटिल, रईस खान, राजेश परमार, मनीष खराड़े, संजीव कवचाले, के. खांडेकर, राजकुमार चंदन, शिवानी सोनी, गौरव जैन, पुरुषोत्तम खांडेकर, नियास खांडेकर इत्यादि शानदार ढंग से कलाकर्म में रत रहे हैं।

मनोज पवार, राजकुमार चंदन, महेंद्र सोलंकी के काम विशिष्ट हैं – चित्रकारी में इन लोगों ने बड़ा योगदान किया वहीं रंगोली ने देवास की हजारों जनता को जोड़ा है। राष्ट्रीय स्तर पर 'रंगोली कला' अभियान भी बना दिया है। जितेन्द्र सोलंकी, प्रकाश पवार, अजीजुर्रहमान शेख महत्त्वपूर्ण रेखांकन, चित्रांकन कर रहे हैं। सबसे युवा चित्रकार कुमारी शिवानी सोनी और रूपल केसरवानी कला में बड़ी संभावनाशील कलाकार हैं। वे काफी अच्छा काम कर रही है।

यहाँ एक बात को खास तौर से रेखांकित करने की जरूरत है कि वरिष्ठ पीढ़ी के स्व. माधव शांताराम रेगे जिन्हें 'अण्णा रेगे' के नाम से संबोधित किया जाता था, इंदौर के देवलालीकर कला संस्थान में प्राध्यापक थे। यहीं प्रख्यात चित्रकार स्व. एम.एफ. हुसैन, अण्णा रेगे से कला की शिक्षा ले रहे थे। इस तरह एम.एफ. हुसैन का तआल्लुक देवास से बनता है।

देवास के कुशल संगीत वादक

देवास में शास्त्रीय संगीत की परंपरा में शास्त्रीय वाद्यों के कुशल वादकों, संगतकारों की अच्छी खासी परंपरा रही है। जब पद्मविभूषण पंडित कुमार गंधर्व हों तो देवास संगतकारों से शून्य कैसे रह सकता था?

प्रख्यात सितारवादक स्व. केशवराव गोविंदराव वैद्य सितार के कुशल सितारवादक होने के साथ–साथ पखावज के भी कलाकार थे। आपने

अनेक संगीत महफिलों में अपनी कला से संगीत रसिकों को मंत्रमुग्ध किया। इन्हीं के पुत्र बालकृष्ण वैद्य भी पखावज वादक रहे तथा उन्होंने काफी नाम कमाया। केशवराज जी की सितार परंपरा उनका पोता जारी रखे हुए है। स्व. आबिद खाँ ने भी सितार में देवास का नाम रोशन किया।

शास्त्रीय जलतरंग वादक यासीन खाँ देवास के संगीत रत्न रहे हैं आप जयपुर संगीत घराने से संबंध रखते थे। आपने कई शास्त्रीय उपशास्त्रीय समारोहों में जलतरंग वादन किया। खूब ख्याति प्राप्त की। उनकी परंपरा उनके पुत्र कुर्बान खाँ निभा रहे हैं। श्री कुर्बान खाँ आकाशवाणी के कलाकार रहे। आकाशवाणी में अपनी सेवाएँ दीं।

एक विशिष्ट वाद्य 'नसतरंग' यह गले पर रख कर बजाया जाता है। स्व. उस्ताद बशीर खाँ इसमें सिद्धहस्त कलाकार थे। अनेक शास्त्रीय संगीत की महफिलों तथा आकाशवाणी संगीत सम्मेलनों में आप की सक्रिय भागीदारी रही। इनके बेटे उस्ताद आबिद खाँ नसतरंग वादन की परंपरा को जीवित रखे हुए हैं।

तबलावादक स्व. बाबूलाल वर्मा, अल्लादिया खाँ तथा जहांगीर खाँ साहेब के शिष्य थे। तबले पर उनकी कुशल उंगलियाँ शास्त्रीय वादन की ताल पर समाँ बाँध देती थीं। वे स्वतंत्रता सेनानी भी थे। तबले पर अनेक प्रयोग उन्होंने किए। आपने ढोलक पर तबला मिश्रित करके ब्रह्मवाद्य तैयार किया था और देशभर में इसका प्रदर्शन किया। कई महफिलों में प्रशंसित भी हुए। बतौर बानगी ये उदाहरण देवास के समृद्ध सांस्कृतिक परिवेश को रेखांकित करते हैं।

वहीं लोक कलाकारों की संख्या इतनी है जिनके नाम गिनाना तक संभव नहीं है। ढोल वादकों के दल हैं जो मालवा के विभिन्न शैली में ढोल बजाते हैं। प्रसिद्ध मटकीनाच पर 'मटकी' वादन, बन्ना गाते समय, देवी पूजा, होली, तीज–त्यौहारों, विवाह गीतों, गरबा, कार्तिक पूजा, आँवला नवमी, गंगा पूजन, भुजरिया, कृष्ण जन्माष्टमी, जुलूस, पहलवानों के जुलूस आदि पर विभिन्न तरह से ढोल बजाए जाते हैं। ढोल बजने से ही पता चल जाता है कि आज कौन–सा त्यौहार या पर्व है या अवसर है।

विभिन्न अवसरों पर भजन मंडलियों में एक तारा, तंबूरा, मजीरे, खड़ताल, ढोलक, वादकों की सांगीतिक संगत होती है। भजन और भजन मंडलियाँ देवास के पारिवारिक, सामाजिक जीवन का आध्यात्मिक, धार्मिक और सांस्कृतिक हिस्सा है। संगीत, गायन, वादन, इसका आधार है। यह

समाज में संगीत, आध्यात्मिक, सामाजिकता की भूमि तैयार करता रहता है।

स्वयं पंडित कुमार गंधर्व ने देवास तथा मालवा की लोक परंपरा से शास्त्रीयता के भव्य रत्न चुने हैं।

प्रातः काल छुट्टियों पर अनाज पीसते समय दो या दो से अधिक महिलाएँ प्रभाती गाती जाती हैं और अनाज पिसता रहता है। कुमार जी ने 'प्रभाती' से शास्त्रीयता को आविष्कृत किया और भी अनेक लोक पक्ष कबीर के भजनों, मीरा के भजनों, रामचरितमानस से कई शास्त्रीयता को कुमार जी ने पहचाना था और उसे प्रचारित किया। देवास के लोक पक्ष में कबीर, नानक, मीरा, रामदेव जी, कृष्ण, नानी बाई, नृसिंह मेहता, दादू, नामदेव, तुकाराम, के पद गाए जाते हैं। लोक में पूरा देश है। पूरी भारतीय संस्कृति की श्रेष्ठ परंपरा यहीं जीवित है।

माँडणे, विरासत के दस्तावेज

माँडणे हमारी संस्कृति के श्रेष्ठ कलात्मकता, इतिहास बोध और सामाजिकता के दस्तावेज हैं। इन दस्तावेजों से हमारी विरासत को सुदृढ आधार तथा कला के विकास में निरंतर परिष्कार के मार्ग प्रशस्त होते रहे हैं। देवास की समस्त तहसीलों देवास, सोनकच्छ, टोंक, हाटपीपलिया, बागली, कन्नौद–खातेगाँव के सभी गाँवों में दीवारों पर, जमीन पर, फर्श पर माँडणे बनाने की जीवंत परंपरा अभी भी बची हुई है। माँडणे को अति शुभ माना जाता है। माँडणे विभिन्न अवसरों पर विभिन्न तरीकों से बनाए जाते हैं। दीवारों पर पशु–पक्षी, हाथी, मोर के चित्रांकन के साथ माँडणों का भी प्रचलन है।

'गेरू और सफेदा' ये दो रंग मिट्टी की दीवारों तथा कच्चे फर्श पर बेहद आकर्षक लगते हैं। गाँव की कलात्मक सज्जा में जबरदस्त योगदान करते हैं। देवी माता या कुल देवी के पूजन में 'गाय माता' माँडणे के रूप में बनाई जाती है जो वैवाहिक जीवन की शुरुआत के समय सर्वप्रथम पूजी जाती है।

देवास जिले में आदिवासियों की बड़ी आबादी रहती है। इनमें भील, भिलाले, गोंड, कोरकू आदि प्रमुख है।

माँडणे बनवासी बस्तियों में अनिवार्यतः बनाए जाते हैं, इन माँडणों के प्राचीन इतिहास, देवी–देवताओं और लोक देवों से संबंध होते हैं। साथ ही प्रकृति चित्रण, वैवाहिक उत्सवों आदि के संदर्भित माँडणे भी बनाए जाते हैं। भील जनजाति में अनेक टापरों (मकानों) के मुख्यद्वार पर या दीवार पर

चित्र अंकित किया जाता है। इसमें नाड़े तथा मक्की के दानों से एक चौखट बनाई जाती है। इसमें स्त्री और पुरुष के अंकन भी बनाए जाते हैं। 'यह अंकन तब किया जाता है जब घर में किसी को माता (चेचक) निकली हो, इस संबंध में यह भी विचार प्रचलित है कि यह टोटके से ज्यादा एक सभ्यतापूर्ण संकेत भी है कि आने वाला व्यक्ति माता के स्थान पर प्रवेश करते हुए वह माता के सम्मान की अनदेखी न कर जाए।' [1]

भीलों की सामाजिक संरचना बहुत सहज सरल है। उनका चिकित्सा शास्त्र, बोली–भाषा बहुत ही संपन्न है। इस भाषा – बोली में जो मुहावरे हैं, वे गहरे, अर्थवान और अनुभव साध्य है। किसी भी भाषा की समृद्धि और अभिव्यक्ति उसके लोक जीवन में बोले और समझे जाने से नापी जा सकती है।

एक उदाहरण देखे –

भूखला तो भूखला सुकला तो सई (सही)

यानी भूखा हूँ तो क्या सुखी तो हूँ – इस कहावत से भीली समाज में अपार संतोष और धैर्य का भाव दिखता है। कहीं न कहीं सामाजिक जीवन मूल्यों की तरफ भी इंगित करता है।

बखेरों करे वाणियानी नों ने मरे राजपुताणी नो

अर्थ : झगड़ा करता है बनिये का लड़का और मरता है राजपूत का'। [2]

जुग जोर है तो मलक बैरी

यानी जहरीली जुबान से सारा संसार दुश्मन बन जाता है।

धन जोवन माया तीन दड़ो नी पामणी

अर्थ – संपत्ति, यौवन, और ऐश्वर्य तीन दिनों के मेहमान हैं।

इस तरह विशाल अनुभव संपदा और मुहावरों से सजी भाषा 'भीली' है। भील अपने स्वाभिमान के संदर्भ में कहता है।

भील भैंस ना बांका हेंगड़ा

भील और भैंस के सींग टेढ़े होते हैं इनसे नहीं उलझना चाहिए।

पापनों घड़ो फूट था वगर ने रे

अर्थः पाप का घड़ा फूटे बिना नहीं रहता

[1] ''मध्य प्रदेश संदेश'' पत्रिका (म.प्र. शासन भोपाल) लेख 'भीलों के टोने–टोटके और अंध–विश्वास'' पृष्ठ 19 – सतीश गौड़ 25 मई 1985

[2] ''म.प्र. संदेश', 1985, पृष्ठ 33, 34, डॉ. ब्रह्मजीत गौतम

आदि–आदि हजारों कहावतें जन–जीवन में अभिव्यक्ति को प्रखर बनाने के साथ नैतिक, सामाजिक जीवन के मूल्यों और आचरण को भी रेखांकित करती है।

देवास सहित वे तमाम जिले जिनमें जनजातियाँ निवास करती हैं – भारतीय समाज में सामाजिक, सांस्कृतिक, भाषाई लोक साहित्य एवं लोक कला में अप्रतिम रचनात्मक योगदान करती हैं।

मुहावरों से भरी भीली भाषा ने हिंदी को काफी समृद्ध किया है। गोंडी, कोरकू, भिलाला के बोलियों के सौंदर्य को हिंदी से पृथक करके नहीं देखा जा सकता है। लेकिन परेशानी यह है कि अभी तक जितना अकादमिक और साहित्यिक कार्य इन जनजातियों के लोक साहित्य पर किया जाना था वह नहीं हो पाया है। मालवा में दो विश्वविद्यालय हैं – विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन एवं देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर। इन दो विश्वविद्यालयों के क्षेत्र में झाबुआ, धार, खरगोन, देवास, शाजापुर, मंदसौर, रतलाम, नीमच, उज्जैन, इंदौर, बड़वानी इत्यादि ज़िले हैं। इन जिलों में विभिन्न जनजातियाँ हैं। इसलिए विश्वविद्यालयों को इन पर समाजशास्त्रीय, साहित्यिक और सांस्कृतिक भाषाई कार्य करवाना चाहिए।

देवास में मेले–ठेले और जातराओं की विशेष रौनक है। हालाँकि इस पुस्तक के पूर्व पृष्ठों में मेलों की जानकारी दी गई है लेकिन एक पूरी सूची ज़रूर देना चाहूँगा।

क्रं.	नाम	स्थान	समय
1.	सिंगाजी का मेला	खातेगाँव	फरवरी
2.	सिंगाजी का मेला	भाकर	अगहन, पौष
3.	चामुंडा माता मेला	देवास	आषाढ़, (पूर्णिमा)
4.	आत्माराम बाबा मेला	नेमावर	पौष / माघ
5.	चंद्रशेखर महादेव मेला	पुंजापुरा	फरवरी
6.	महाशिव रात्रि मेला	भौंरासा	फागुन
7.	महाशिव रात्रि मेला	बिलावली	फागुन
8.	रामनवमी मेला	हाटपीपलिया	चैत्र
9.	रामनवमी मेला	गंधर्वपुरी	चैत्र
10.	चामुंडा नवरात्र मेला	देवास	नवरात्र (अक्तूबर)
11.	भुवनेश्वरी मेला	गंधर्वपुरी	दोनों नवरात्र

12.	ललिता पुष्पा देवी मेला	पीपलरांवाँ	फरवरी
13.	बिजासनी माता मेला	सन्नौड़	पौष

इन बड़े मेलों के अतिरिक्त कुछ छोटे तथा सीमित मेले भी आयोजित होते हैं। रियासत के समय में 'मीनाबाज़ार' शुरू हुआ था इसे 'दशहरा, कृषि एवं कला मेला' भी कहा जाता है। विगत एक शताब्दी से यह जारी है। इसमें व्यापार, कला प्रदर्शनियाँ, खेलकूद, संगीत, कवि सम्मेलन और मुशायरों का आयोजन होता है। यह 'मीनाबाज़ार' देवास में प्रतिवर्ष अक्तूबर मास (नवदुर्गा उत्सव) में लगता है। यह वाकई सांस्कृतिक मेला है। जिसकी प्रतीक्षा देवासवासियों तथा आसपास के क्षेत्रों को रहती है। देवास जिले के सांस्कृतिक परिवेश के निर्माण तथा निरंतर परिष्कार में इन लोक मेलों का बहुमूल्य योगदान है। लेकिन मीनाबाजार का स्थान अब बदल दिया गया है। पहले यह भोपाल चौराहे पर शिवाजी पार्क जो भोपाल रोड तथा आगरा–बांबे रोड के बीच तिकोने की शक्ल में थे, उसमें होते थे। एक मेले तथा सांस्कृतिक मेले के संदर्भ में यह मेला बहुत ही उपयुक्त स्थान पर था। अस्सी से ज्यादा वर्षों से यह यहीं आयोजित होता था। अब इंदौर रोड जो आगरा–मुंबई रोड पर स्टेडियम के समीप विकास नगर के सामने लगाया जाता है।

यादें भी बड़ी अजीब होती हैं। यादें इंसान को जिंदा रखती हैं। उसे तरोताजा बनाए रखती है। इतिहास में अपनी जड़ों की तलाश में भी मदद करती है। आज भी जब 'मीनाबाजार' का जिक्र छिड़ता है तो यादों का सैलाब उमड़ पड़ता है और अनेकानेक संस्मरणों, घटनाओं के पन्ने फड़फड़ाने लगते हैं। कबड्डी की प्रतियोगिताएँ, फुटबाल, वॉलीबॉल, चित्रकला, नाटक, गायन, भजन की प्रस्तुतियाँ, कवि सम्मेलन और मुशायरे का गरिमामयी आयोजन व्यापारियों की सुविधा आदि इस मीनाबाजार की खासियत रही है।

इस मीनाबाजार के उद्घाटनकर्ताओं में देश के लब्ध प्रतिष्ठित व्यक्ति रहे हैं। कर्नल सी.के. नायडू और विजय हजारे जैसे क्रिकेटर और बोहरा धर्म के गुरु भी आए हैं। कुमार गंधर्व आए हैं तो जयप्रकाश नारायण जैसे स्वतंत्रता सेनानी भी आए। डॉ. कैलाशनाथ काटजू भी आए। उद्घाटन की रस्म से अनेक गणमान्य लोग जुड़े हैं। जिन्हें देवास की जनता ने अपार सम्मान देकर स्वागत से सराबोर किया।

देवास का मीनाबाज़ार तो बस ऐसा रहा कि पूरे वर्ष भर देवासवासी इसका इंतजार करते हैं। अब वो बात नहीं रही लेकिन हाथी जिए तो लाख का और मरे तो सवा लाख का वाली बात तो है ही। देवास का मीनाबाजार

जिस पर तो लाख क्या निरंतर उसकी रंगत बढ़ती गई और वह लाखों से करोड़ों का हो गया। मीनाबाजार महज 'मीनाबाजार' ही नहीं था। वह चित्रकारों, खिलाड़ियों, गायकों, लोक गायन, नाटक, कवि सम्मेलन और मुशायरे का भी मीनाबाजार रहा है। जितने भी 'कवि, शायर यहाँ आए सभी ने दिल से इस मेले की तारीफ की। उन्हें ऐसे गंभीर श्रोता, उत्साही और शालीन लोग कहीं और नहीं दीखे। हजारों की भीड़ तन्मयता से सुमन, बच्चन, नीरज बेकल उत्साही सोम ठाकुर, नीरज, देवराज दिनेश, बालकवि बैरागी, मायागोविंद, शम्स मिनाई, आदि को सुनता और दाद देता रहा। फिराक, वसीम बरेलवी, राहत इंदौरी सहित नामचीन उर्दू शायरों को सुनता और वाह–वाह करता रहा है। मालवी मंच की समृद्धि तो देखने लायक रही है।

मालवी काव्य एवं कवि

मालवी का लालित्य तो सुनने से वास्ता रखता है। मालवी में गहन मानवीय संवेदना और गूढ़ अर्थवत्ता है, उसमें हास्य की गुदगुदी भी है तो वहीं सटीक व्यंग्य की गहराई भी। जिसने मालवी का कवि सम्मेलन सुना है वो ही उसे समझ और बता सकता है। मालवी के बालकवि बैरागी, भावसार बा, नर हरि पटेल गिरवरसिंह भँवर, हरीश निगम, सुलतान मामा, मदन मोहन व्यास जैसे अनेक माननीय कवियों ने मालवी मंच को सुसमृद्ध किया तथा व्यापक साहित्यिक अभिरुचि को बनाए रखने में जबरदस्त भूमिका निभाई।

आज भी विशाल कवि सम्मेलनों, शानदार मुशायरों की गूँज देवास की यादों के आँगन में मौजूद है। ये गूँज और दृश्य यादों में जीवित है। ये ही देवासवासियों को अंदर ही अंदर खुशी से भरता रहता है। कहीं अपने भाव–संसार को जीवित रखने में मदद करता है। मैं अपने आपसे पूछता हूँ। क्या पंडित कुमार गंधर्व से अपनी बातचीत, प्रत्यक्ष गायन का वो दृश्य, वो आनंद और अपरिचित अनुभूतियाँ क्या भूल सकता हूँ?

क्या देवास के मंच से बच्चन जी की कविताएँ, नीरज जी की काव्यपंक्तियाँ कारवाँ गुजर गया, गुबार देखते रहे और सुमन जी की 'क्षिप्रा सा तरल सरल बहता हूँ, कालिदास की शेष कथा कहता हूँ', जैसे काव्य पंक्तियाँ क्या कभी भूली जा सकती हैं?

वह अनुगूँज मुझे अपने वजूद के लिए, उसकी पहचान के लिए जरूरी लगता है। वह हमारा अपना हिस्सा बन गया है। और मुझे लगता है कि हम सभी कालिदास की शेष कथा कह रहे हैं – शेष जो बचा है उसे लिख रहे हैं।

देवास का आधुनिक लेखन

वैसे तो साहित्य की चर्चा पूर्व पृष्ठों पर कर आया हूँ। फिर भी कुछ ऐसा है जिसके बारे में रेखांकित करना जरूरी समझता हूँ। आधुनिक चेतना तथा आधुनिक साहित्य में नवगीतकार नईम दमोह से चल कर देवास आ गए थे। उनके गीत तत्कालीन पत्र–पत्रिकाओं में छपते थे। इसी बीच कहानीकार विलास गुप्ते भी देवास आए, उनकी कुछ कहानियाँ छपी थीं। ये दोनों हिंदी के प्राध्यापक थे।

एक अजीब योग संयोग रहा कि हम तीन दोस्त सहपाठी थे, मित्र भी हैं और साथ ही लिखना भी शुरू किया। 1965 में पाकिस्तान से हमारा युद्ध हो चुका था। 1962 के बाद देश की जिंदगी में खुशी और गर्व के क्षण थे। लेकिन लाल बहादुर शास्त्री की रूस में हुई मौत ने हम सभी को गमगीन बना दिया था। हम तीनों 1965 से गुजर कर 1966 में आ गए। कॉलेज में दाखिल हुए। हमारा लेखन अखबार से पत्रिकाओं तक जा पहुँचा था। हम तीन यानी प्रभु जोशी, प्रकाश कांत तथा मेरी यानी जीवनसिंह की रचनाएँ छपने लगीं–*धर्मयुग, सारिका, साप्ताहिक हिंदुस्तान, नवभारत टाइम्स, नवनीत, नई दुनिया,* इसके अलावा अन्य लघु पत्रिकाओं में भी। एक कस्बे से तीन–तीन कहानीकार उभरे, प्रभु जोशी कहानी के साथ चित्रकार भी उम्दा रहे। दोनों में ही नाम कमाया। नए साथी उभरे जिन्होंने साहित्य में दस्तक दी वह बेहद संतोषजनक रहा कि देवास की साहित्य परंपरा अविराम चलने वाली है। साहित्य की कहानी, उपन्यास, शब्दचित्र, लेख आदि में देवास की समृद्धि में पृष्ठ–दर–पृष्ठ जुड़ते गए।

ऐसा नहीं कि लेखन में साहित्यकारों के अलावा कोई नहीं था। देवास का राजनीतिक परिदृश्य में स्वतंत्रता सेनानी स्व. माँगीलाल जोशी, स्व. शंकर कानूनगो, स्व. साथी कन्हैयासिंह समृद्ध वक्ता, हिंदी सेवी और शिक्षा अनुरागी थे। ये वे लोग थे जो लेखन – यानी आलेख, टिप्पणी लिखते थे। बहुपाठी नेता त्रयी थी। इससे देवास में गंभीर रचनात्मक वातावरण निर्मित होने में मदद मिली। देवास जिले की राजनीति में पक्ष–विपक्ष की प्रतिबद्धता जनता के साथ रही। जैसा कि ऊपर तीन नेताओं के नाम उल्लेख किए गए हैं – हाटपीपलिया–बागली में कैलाश जोशी, सतीश इनाणी, कन्नौद में चतुर्भुज गोरानी, किंकर जी, जंगबहादुरसिंह, शैतानसिह राठौड़, सोनकच्छ में ठा. विजयसिंह, उमाशंकर दुबे, श्री वल्लभ शास्त्री, बाबूराव जोशी जैसे लोग रहे। सोनकच्छ के बाबूराव जोशी, श्री वल्लभ शास्त्री ने शिक्षा तथा शालीनता का बेहतरीन परिवेश निर्मित किया। देवास में स्व. कालिकाप्रसाद तिवारी, स्व. काछी सा., श्री श्यामसुंदर निगम सा., श्री रतनलाल शर्मा, श्री यतीश कानूनगो, श्री लक्ष्मण दुबे, पंडित मैडम, स्व. भानुमती कोमकली इत्यादि शिक्षकवृंद ने देवास के निर्माण में रचनात्मक भूमिका निभाईं इन सभी को याद करते हुए गहरा संतोष और गर्व का भाव सघन होने लगता है।

1960 से 1970 तक देवास में कला, शिल्प, कविता, कहानी के संदर्भ में उभर आया वहीं गायन में स्व. भानुमती कोमकली तथा स्व. कुमार गंधर्व ने जबरदस्त ख्याति अर्जित की थी। वहीं 1970–71 के बाद साहित्य

में राष्ट्रीय स्तर पर कई साहित्यकार सामने आए। साथ ही चित्रकला में भी कुछ कलाकारों ने राष्ट्रीय स्तर पर दस्तक देना शुरु किया। यानी संस्कृति एवं कला के सभी सोपान अपनी तरह से सक्रिय थे। वे देवास को संस्कृति संपन्न देवास बना रहे थे।

रियासती शासन के समय भी शिक्षा और कला में काफी काम हुआ था। राधाबाई कन्या विद्यालय, महाराणी चिमणाबाई कन्या विद्यालय, श्री नारायण विद्या मंदिर, आलोट पायगा विद्यालय नगर के शिक्षा केंद्र तथा चेतना केंद्र थे। इसी तरह कन्नौद–खातेगाँव तहसील में जो इंदौर के होलकर रियासत का हिस्सा था जो शासकीय विद्यालय और बेहतर स्तर के कारण जाने जाते थे। वह परंपरा आज भी जारी है। बागली, सोनकच्छ, टोंक, गंधर्वपुरी, ग्वालियर के सिंधियाओं के क्षेत्र थे। यहाँ भी सरकारी विद्यालयों की शृंखला थी। पुंजापुरा, निमनपुर, उदयनगर का क्षेत्र धार की पवार रियासत के अधीन था। यहाँ पुंजापुरा, किशनगढ़, पीपरी, उदयनगर में बाकायदा विद्यालय थे। पूर्व छात्रों का कहना है कि पढ़ाई व्यवस्थित होती थी। स्तर का ध्यान रखा जाता था।

यहाँ एक बात बेहद महत्त्वपूर्ण है कि इन्हीं विद्यालयों से पढ़े छात्र राष्ट्रीय स्वाधीनता आंदोलन में बड़ी संख्या में शामिल हुए। बाद में सामाजिक कार्यों में भी वे संलग्न हुए। शासकीय सेवा में ईमानदारी की कर्तव्यनिष्ठा की मिसाल बने।

राष्ट्रीय चेतना के विकास में देवास क्षेत्र की नगरपालिकाओं तथा वाचनालयों की बड़ी भूमिका रही है। 1857 से 1900 के बीच स्वतंत्रता के विचारों ने देवास को गहराई से प्रभावित किया। क्षेत्र की रियासतों जैसे – पवार, सिंधिया, होलकर एवं धार के पवार। 1857 से 1900 के बीच जनता की शक्ति से परिचित हो चुकी थी। अतः तिलकयुग से 'वंदेमातरम' की जनजागृतियों से 'नर्मदा–क्षिप्रा' का यह क्षेत्र गूँज उठा था। अतः रियासतें जनकल्याणकारी कार्य करने पर प्रतिबद्ध हो गईं इसकी झलक नगरपालिकाओं, विद्यालयों, वाचनालयों के प्रारंभ होने से मिलती है।

देवास जूनियर रियासत में	1887 में नगरपालिका प्रारंभ
कन्नौद में	1906 में नगरपालिका
खातेगाँव में	1914 में नगरपालिका
बागली में	1936 में नगरपालिका
हाटपीपलिया में	1936 में नगरपालिका

सोनकच्छ में	1916 में नगरपालिका
भौंरासा में	1916 में नगरपालिका
देवास बड़ी पाती में	1947 में नगरपालिका

विद्यालयों का जहाँ तक प्रश्न है 1871 में जूनियर देवास रियासत के राजा नारायणराव पवार ने नियमित विद्यालय प्रारंभ किया। सीनियर देवास में 1877 में शुरू हुआ। देवास के नियमनपुर परगने में 1850 में विद्यालय शुरू हुआ। तब यह धार रियासत का हिस्सा था। उदय नगर में 1908 में पहला विद्यालय खुला। खातेगाँव, कन्नौद, काँटाफोड़ में 1904–05 में विद्यालय प्रारंभ हो गए थे। हालाँकि धर्मशालाओं, मंदिर प्रांगणों में पुजारी या अन्य लोगों द्वारा विद्या अध्ययन कराया जाता था। इसी पृष्ठभूमि से नवीन विद्यालयों को प्रारंभ करने में आसानी हुई थी।

नेमावर में 1930 में राज्य के 25 विद्यालय, 7 निजी क्षेत्र के विद्यालय थे राज्य के विद्यालयों में 1631 छात्र थे, निजी स्कूलों में 125 छात्र थे।

कन्नौद में राज्य द्वारा कन्नौद, अजनास, गोलपुरा, धूरिया में विद्यालय प्रारंभ हुए, चार निजी विद्यालय भी शुरू हुए।

काँटोफोड़ में 15 विद्यालय राज्य द्वारा तथा 1 निजी विद्यालय था जिनमें 600 छात्र अध्ययन कर रहे थे।

खातेगाँव में राज्य के 10, अन्य क्षेत्र में 9 तथा निजी क्षेत्र में 2 विद्यालय थे। राज्य के स्कूलों में 654 छात्र तथा निजी विद्यालयों में 50 छात्र थे।

सोनकच्छ तथा पीपलराँवा में 1885 में विद्यालय शुरू हो गए थे। अंग्रेजी भाषा पढ़ाने का काम 1918 में शुरू हुआ।

जहाँ तक वाचनालय का सवाल है। देवास में राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन का प्रभाव था। लोग प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से स्वतंत्रता संग्राम में संलग्न थे। स्कूलों का खुलना एक बड़ी बात थी। दूसरा बड़ा काम 'पुस्तकालयों' की शुरुआत ने सामूहिकता, चर्चा, विचार–विमर्श का बड़ा अवसर दे दिया था। सूचनाओं का आदान–प्रदान, ज्ञान, नई जानकारियाँ इन वाचनालयों से मिल जाती थी। साथ ही बौद्धिकता को खुराक भी मिलती। नेतृत्व के तत्त्व पुष्ट होते।

स्वयं देवास के स्वतंत्रता सेनानियों ने यह प्रमाणित किया है कि देवास के वाचनालय स्वतंत्रता समर में ज्ञान, जानकारियों के प्रमुख स्रोत था और विमर्श के केंद्र बन गए थे। देवास की छोटी पांती (जूनियर रियासत) में 1915 में आगरा–मुंबई रोड के किनारे सुंदर महलनुमा भवन 'लक्ष्मीनारायण

भवन' में लाइब्रेरी की शुरुआत हुई कन्नौद में 1914 में नगरपालिका भवन में रीडिंग रूम खुला। खातेगाँव में 1926 में, देवास में 1938 में लाइब्रेरी की शुरुआत हुई ये व्यापक जनजागृति के प्रतीक भी थे। आर्य समाज तो स्वतंत्रता तथा साहित्य–भाषा के लिए समर्पित भाव से काम कर ही रहा था। यह संगठन धार्मिक के साथ ज्यादातर सामाजिक और राष्ट्रीय था। आर्य समाज ने 1925 में वाचनालय प्रारंभ किया। यहाँ लोगों की आवाजाही तथा पठन–पाठन की गतिविधियाँ लगातार जारी है।

देवास के अखबार

लोक चेतना के विकास में पुस्तकों और अखबारों की भूमिका सर्वज्ञात है। देवास चूँकि मालवा क्षेत्र का महत्त्वपूर्ण जिला है इस कारण वहाँ मालवा की बौद्धिक परंपरा स्पष्ट नजर आती है। मालवा का एक सांस्कृतिक इतिहास रहा है, उसमें विद्वानों ने देवास के सांस्कृतिक योगदानों को रेखांकित किया है। नेमावर, गंधर्वपुरी, संदलपुर, बिजवाड़, बांगर, पलासी, देवास, सोनकच्छ, इकलेरा, बिलावली आदि सत्ता, ज्ञान और संस्कृति के केंद्र रहे हैं। ग्रंथ लेखन तथा अनुवाद का उल्लेख इतिहास के दस्तावेज़ों में दर्ज है।

1857 के महासमर के 18 वर्ष बाद देवास से *वृत लहरी* मराठी साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन 2 अगस्त 1875 को हुआ। यह अंग्रेजी भाषा में भी छपता था। 1911 में पवार सरकार गजेटियर का प्रकाशन हुआ यही गजेटियर 1915 में *मालवा सरकार* के नाम से प्रकाशित हुआ। *मालवा सरकार* 1920 तक नियमित छपता रहा। 1923 में देवास से ही *मार्तण्ड* नामक अखबार का प्रकाशन प्रारंभ हुआ। यह 1925 तक प्रकाशित होता रहा। *मार्तण्ड* अखबार हिंदी में भी छपता था। 22 दिसंबर 1931 में मराठी साप्ताहिक *श्री शिवाजी* अखबार का प्रकाशन हुआ। इसके बाद *मराठा राजपूत* अखबार का प्रकाशन 1939–40 में हुआ। *स्वातन्त्र्य* नामक मासिक पत्रिका का प्रकाशन अगस्त 1947 से हुआ जो 1948 तक जारी रहा। 1923 में गंधर्वपुरी कस्बे में हस्तलिखित *मनमोहन* नाम से अखबार नियमित निकाला जाता था। सोनकच्छ के डॉ. बाबूराव जोशी ने स्वतंत्रता सेनानी श्री हरिभाऊ उपाध्याय के सहयोग से गांधीवादी साहित्य तथा स्वतंत्रता प्रकाशनों का व्यापक प्रचार–प्रसार पत्रों, बुलेटिनों तथा हस्तलिखित पर्चों के माध्यम से किया गया।

देवास की राष्ट्रीय चेतना में तत्कालीन राष्ट्र के विभिन्न हिस्सों से प्रकाशित पत्रों ने भी बड़ी भूमिका निभाई थी। दिल्ली, अहमदाबाद, कलकत्ता, मुंबई से प्रकाशित अखबार देवास के विभिन्न अँचलों में आते थे। इसमें गांधीजी

का *हरिजन* तथा नेहरू जी का *नेशनल हेराल्ड*, जयप्रकाश नारायण का *जनता* अखबार महत्त्वपूर्ण थे। कलकत्ता से प्रकाशित *विशाल भारत* जिसका संपादन श्री बनारसीदास चतुर्वेदी करते थे। यह अखबार देवास पहुँचता था। 'विशाल भारत' ने स्वतंत्रता संग्राम में बड़ी भूमिका निभाई–इसके संपादकों में महाकवि 'निराला', अज्ञेय भी रहे है।

उक्त अखबारों ने देवास में राष्ट्रीय तथा साहित्यिक चेतना के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई स्वतंत्रता के पश्चात् देवास में स्थानीय तौर पर स्वतंत्रता, समाजिक सौहार्द के मुद्दों पर केंद्रित अखबारों ने समाज को गहरी वैचारिक समझ दी।

इसमें स्वतंत्रता सेनानी स्व. साथी कन्हैयासिंह द्वारा प्रकाशित *'संग्राम साथी'* स्व. सदाशिव टेलर द्वारा *'देवास दूत'* नाम से प्रमुख था। बाद में *'देवास भ्रमण'* अखबार निकला जिसने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई।

बीच–बीच में विद्यालयों से पत्रिकाएँ प्रकाशित होती रहीं जिसमें देवास की समस्त रचनात्मक गतिविधियों के ब्यौरे है। नारायण विद्या मंदिर, चिमणाबाई हाइसेकेण्डरी स्कूल, नगर पालिका निगम देवास की पत्रिका *अर्पित* तथा *सन्मुख* प्रकाशित हुई इसमें देवास से संबंधित विपुल पठनीय और स्तरीय सामग्री प्रकाशित हुईं तत्कालीन समय में ये अच्छी पत्रिकाएँ सिद्ध हुईं। [1]

स्वतंत्रता के पूर्व तथा पश्चात् के दोनों समय को देवास ने अपने दामन में पूरी रचनात्मकता के साथ सहेज कर रखा है।

मंच के संदर्भ में देवास अतिसमृद्ध रहा है। लोक नाट्य, गायन, वादन तथा कविता–पाठ की समृद्ध परंपरा यहाँ की पूँजी है। वहीं आधुनिक मंच ने स्वतंत्रता पूर्व तथा पश्चात् लोक को गहराई से प्रभावित किया है। स्वतंत्रता के पूर्व मालवी तथा हिंदी में मंच से राष्ट्रीय भाव जागृत करने वाले श्री मदनमोहन व्यास तथा स्व. गिरवरसिंह भँवर ने काफी लोकप्रियता अर्जित की। स्वतंत्रता के बाद समाज निर्माण और स्वतंत्रता की रक्षा का भाव पुख्ता करने में भी इन दोनों कवियों ने गाँव–गाँव अलख जगाया था। भँवरजी तथा व्यास जी के बाद की पीढ़ी ने *मंच* को जागृत बनाए रखा। स्व. पं.ल. रेवाड़ीकर, प्रभाकर शर्मा, मनोहर उपाध्याय प्रमुख रूप से सामने आए। तीसरी पीढ़ी में शशिकांत यादव, हरि जोशी, पुष्पेंद्रसिंह, राजकुमार आदि आते हैं, जो निरंतर सक्रिय हैं।

---

[1] नगर निगम, देवास द्वारा प्रकाशित *अर्पित* स्मारिका, 1990, संपादक जीवनसिंह ठाकुर। नगर निगम देवास द्वारा प्रकाशित *सन्मुख* स्मारिका (2010), कुल पृष्ठ 106, संपादक– रजनी रमण शर्मा

स्वतंत्रता पूर्व, स्वतंत्रता सेनानियों ने लेख और प्रेरणास्पद कहानियाँ लिखकर हिंदी साहित्य को समृद्ध किया। इनमें आर.सी.दुबे, शंकरराव कानूनगो, कन्हैयासिंह, लक्ष्मण मेहता, तालिब सा., इत्यादि थे। स्वतंत्रता के पश्चात् मराठी, हिंदी में कई साहित्यकार अपनी क्षमता, दृष्टि तथा विद्वता के साथ सामने आए। डॉ. बाबूराव जोशी ने साहित्य–समाज तथा शिक्षा के संदर्भ में रचना की, स्व. रमाकांत चौधरी सफल लेखक के रूप में स्थापित हुए।

मराठी–हिंदी में समान रूप से लेखन करने वाले गोविंदराव झोंकरकर ने प्रतिष्ठापूर्ण लेखन किया। मराठी के साथ उनकी मालवी कविताएँ भी महत्त्वपूर्ण थीं। श्रीमती प्रफुल्लता जाधव मराठी की कहानीकार, उपन्यासकार हैं। जिन्होंने अपनी लेखनी से देवास तथा प्रदेश को गौरवान्वित किया।

दमोह जिले से देवास आ बसे हिंदी कवि नईम ने मालवा में अपने लेखन से नवगीतकारों में अपना स्थान बनाया। हिंदी की आधुनिक साहित्य लेखन में देवास से तीन कहानीकार, उपन्यासकारों – प्रभु जोशी, जीवनसिंह तथा प्रकाशकान्त ने अखिल भारतीय स्तर पर देवास का नाम आगे बढ़ाया। इनकी रचनाएँ कमलेश्वर द्वारा संपादित *सारिका,* धर्मवीर भारती द्वारा संपादित *धर्मयुग* और मनोहर श्याम जोशी द्वारा संपादित *साप्ताहिक हिंदुस्तान* में छपने लगी थी। *दिनमान, नवभारत टाइम्स, नई दुनिया* आदि में लेख प्रकाशित हो ही रहे थे। प्रख्यात संपादक, पत्रकार लेखक स्व. राजेन्द्र माथुर कहते थे– देवास कहानी–लेख–ललित निबंध का गढ़ है।

उक्त तीनों लेखकों के ठीक बाद की पीढ़ी भी प्रतिभाशाली है। उसने देवास की साहित्य परंपरा में रचनात्मक योगदान किया इनमें ब्रजेश कानूनगो, मोहन वर्मा, ओमवर्मा प्रमुख रूप से लेखन–क्षेत्र में उभरे। इसके बाद या समकालीन पीढ़ी में बहादुर पटेल ने, कविता में संदीप नाईक, मनीष वैद्य ने कहानी, सुनील चतुर्वेदी ने व्यंग्य और उपन्यास में उपस्थिति दर्ज की। नई पीढ़ी में अमेयकांत ने कविता में आहट महसूस कराई है। दीक्षा दुबे कहानी और कविता लिख रही हैं।

साहित्य में देवास का अपना भरा–पूरा संसार है। सबसे लंबी गजल लिखने वाले राजकुमार चंदन रंगोली के ख्यात कलाकार हैं। साथ ही वे काष्ठशिल्प के आचार्य हैं, चित्रकला में भी उनका बेजोड़ काम है।

यह सब कहते–लिखते सोचते हुए अनेकानेक कवियों की पंक्तियाँ

याद आती हैं। दुष्यंत कुमार की पंक्तियाँ–सैकड़ों देवासवासियों को कंठस्थ है, मैं भी उसी कण्ठ से दोहराना चाहता हूँ–

सिर्फ हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं
मेरी कोशिश है कि ये सूरत बदलनी चाहिए।

देश को इतिहास, संस्कृति, साहित्य की स्थिति पर विचार करना चाहिए क्योंकि हमें अपनी जड़ों की तलाश करके उससे शक्ति पानी होगी। और स्वयं की शक्ति पर ही खड़ा होना सीखना पड़ेगा।

पिछले हजार बरस से इस देश ने और उसके बेहद विपरीत, कठिन, खूनी मंजर देखें तथा भुगते हैं। इसीलिए कवि का कहता है–

हो गई है पीर पर्वत सी पिघलनी चाहिए
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।

देवास में संस्था के रूप में आर्य समाज के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता। देवास स्थित आर्य समाज ने स्वतंत्रता संग्राम में समाज सुधार, शिक्षा, महिला शिक्षा, सद्भाव के लिए रचनात्मक भूमिका निभाई आर्य समाज ने स्वतंत्रता की भावना को मजबूत बनाया। देवास में बाबू रामगोपाल आर्य का नेतृत्व था। वे यहाँ से पूरे मालवा में स्वतंत्रता के लिए तथा धार्मिक आडंबरों के खिलाफ एक सशक्त भारत का प्रचार कर रहे थे। 1936–40 में कदम साहब, कोठारी जी, बिड़वई जी आर्य समाज का समर्थन तथा सहयोग कर रहे थे। 1940 काफी महत्त्वपूर्ण था। इस समय बलदेव प्रसाद आर्य, शंकरलाल पंजाबी, मुरारीलाल श्रीवास्तव, वृंदावन प्रसाद श्रीवास्तव काफी सक्रिय थे। ये सभी स्वतंत्रता की गतिविधियों में सहयोग कर रहे थे। कन्नौद के ठा. सरदारसिंह राठौड़ ने प्रबल नेतृत्व प्रदान किया। वे प्रभावी प्रचारक एवं विद्वान व्यक्ति थे।

आर्य समाज की सक्रियता ने देवास की सामाजिक चेतना में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया। इनका वाचनालय तथा इनकी आयोजित गोष्ठियाँ बेहद महत्त्वपूर्ण थी। देवास में हरियाणा (तब पंजाब का हिस्सा था) पंजाब, दिल्ली, उत्तर प्रदेश के प्रख्यात आर्य संतों ने देवास के कई क्षेत्रों का दौरा किया। बड़े–बड़े जलसे हुए। इससे देवास के गांधीवादी, समाजवादी, किसान, सहकारिता आंदोलनों को बल मिला।

उस समय सुभाष चौक व्यापक गतिविधियों का केंद्र था। सभाएँ

होती थी। इसमें चौथमलजी, बुद्धदेव विद्यालंकार, मौलाना अब्दुल गफ्फार खाँ के भाषण होते। आयोजन तथा व्यवस्था प्रचार में वृंदावन प्रसाद श्रीवास्तव, ओ.पी. श्रीवास्तव, बलदेव प्रसाद आर्य, बाबू हर किशोर वर्मा, जौहरी सा. एवं डॉ. पंजाबी जुटे रहते। साहित्य के साथ अन्य संस्थाओं के योगदान का स्मरण करते हुए 'स्वतंत्रता संग्राम' के बारे में भी जान लेना जरूरी है क्योंकि इस महान चेतना ने देवास में चिंतन, मनन, कर्तव्य के प्रति समग्र समाज का सांस्कृतिक संस्कार भी किया है। मेरे मन में सन् 1857 से सन् 1947 के महासमर के प्रति आकर्षण, लगाव, प्रेरणा जिज्ञासा, गर्व का विशिष्ट भाव रहा है। प्रत्यक्षतः सेनानियों से मिला हूँ। उनके संस्मरण भी दर्ज किए थे। उनके दस्तावेज देखे हैं। खोज भी की है। देवास के इस समय से पाठक परिचित हों क्योंकि देवास, राष्ट्रीय आंदोलन का हिस्सा है।

स्वतंत्रता संग्राम

1857 के समर में इंदौर के साथ देवास ने भी सक्रिय भागीदारी की थी। 1859 तक संग्राम कुछ धीमा चला लेकिन चेतना का स्तर तीव्र ही था। 1869 में गांधी जी का जन्म हो गया था। 1880 में प्रेमचंद का जन्म 1857 से 1900 के बीच भारत को आगामी समय में नेतृत्व देने वाला वर्ग क्रांति की आग से उत्पन्न हो गया था जिसमें विवेकानंद, नेहरू, पटेल, मालवीय आदि प्रमुख थे। 1887 में गुजरात के गोवर्धनराम त्रिपाठी का *सरस्वतीचंद्र* उपन्यास प्रकाशित हुआ। दूसरा खंड 1892 और तीसरा 1897 में प्रकाशित हुआ। विवेकानंद की वाणी गूँजने लगी थी। 1900–1905 के बीच गांधीजी का *हिंद स्वराज्य* तथा रवीन्द्रनाथ टैगोर का *गोरा* उपन्यास सामने आया। राष्ट्र तथा स्त्री–विमर्श के ये दो प्रकाशनों ने स्वतंत्रता सेनानियों को गहराई से प्रभावित किया था।

1905 के बंगाल विभाजन (बंगभंग) की देवास में जबरदस्त प्रतिक्रिया हुई देवास के लोगों ने भी बैठकें करके अपना विरोध जताया। क्योंकि बंगाल का सांप्रदायिक विभाजन पूरे देश ने स्वीकार नहीं किया था। जहाँ बंगभंग के खिलाफ कलकत्ता में हिंदू–मुसलमानों ने एकजुट होकर जुलूस निकाले थे वहीं देवास की सड़कों पर जनता ने अपना विरोध जताया।

तिलकयुग से गांधी के दौर से स्वतंत्रता संग्राम का संघर्ष तीव्र हो गया था। 1905 के बंगाल के विभाजन के बाद 1906 में ढाका में मुस्लिम लीग की स्थापना ने स्वतंत्रता संग्राम में संप्रदायवाद और विभाजन का जहर घोल दिया था। लेकिन छोटे शहरों, कस्बों, गाँवों में स्वतंत्रता सेनानियों में पूरी एकजुटता भी थी। रियासती क्षेत्रों में दोहरी लड़ाई जनता लड़ रही थी एक तो ब्रिटिश सत्ता से और दूसरे राजा–महाराजाओं से। देवास में राष्ट्रीय गतिविधियों का पूरा अक्स नजर आता है। वहीं स्थानीय और क्षेत्रीय तरीकों से स्वतंत्रता संग्राम की रणनीति बनती थी।

1910 से 1930 तक देवास में स्वतंत्रता के लिए व्यापक जन चेतना का विकास हुआ। स्वतंत्रता का आंदोलन बेहद शालीन तथा शांतिपूर्ण रहा लेकिन रियासत ने ब्रिटिश दबाव में बहुत जुल्म भी ढाए। लेकिन रियासत में खादी प्रचार तथा खादी पहनने का उत्साह बना रहा। प्रभात फेरियों में स्त्री

पुरुष की संख्या बढ़ गईं देवास क्षेत्र जो चार रियासतों में बँटा था। [1] पूरी तरह से गांधीवादी आंदोलन से प्रेरित था। सक्रिय रूप से स्वतंत्रता संग्राम से संलग्न हो गया। असहयोग आंदोलन, नमक सत्याग्रह में उत्साह से लोगों ने भाग लिया। देवास में स्व. माँगीलाल जोशी, स्व. शंकर कानूनगो, स्व. कन्हैयासिंह आंदोलन का नेतृत्व कर रहे थे। इनके साथ ठा. अमरसिंह रघुवंशी, गोपीनाथ पटवर्धन, रामनारायण अग्रवाल, कन्हैयालाल महेश्वरी, नृसिंह पोरवाल, हीरालाल जैन, रामचंद्र कनौजिया, बशीरुद्दीन, अब्दुलकरीम गजधर, कांतिलाल जोशी आदि सक्रिय थे।

देवास में प्रजामंडल में जो स्वतंत्रता के लिए बना था। कई लोग सक्रिय रूप से जुड़े। गाँवों से ठा. भँवरसिंह चावड़ा, ठा. भेरूसिंह चौहान, ठा. मोढ़सिंह चावड़ा, देवास शहर से रामचंद्र दुबे, ग्राम खटांबा से बाबूराव शर्मा, नरहरी उपाध्याय, छोटे राव खड़के, भगवती प्रसाद शास्त्री, वेणी माधव मिश्रा भी जुड़े। दुर्गाशंकर पंड्या ने स्वतंत्रता संग्राम के साथ सहकारिता आंदोलन को भी मजबूत किया।

प्रजामंडल आंदोलन ने देवास में जन जागृति का व्यापक फैलाव किया। देवास के अन्य क्षेत्र, जैसे नेमावर जो 1857 के समर का क्षेत्र था यहाँ 13 नवंबर 1941 को शिवनारायण अग्रवाल तथा ठाकुर केसरसिंह को सत्याग्रह करने और झंडा फहराने के जुर्म में चार–चार माह की सजा तथा 100–100 रुपये का दंड दिया गया। 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन में नेमावर सहित हंडिया, कन्नौद, खातेगाँव, लोहारदा, कांटाफोड़, अजनास, सतवास में तीव्र आंदोलन चला। नेमावर के शिवप्रसाद पटवारी को दो माह का कारावास दिया गया।

कन्नौद में ठाकुर जंगबहादुरसिंह, शैतानसिंह राठौड़ (ननासा) गोकुलदास ने नेतृत्व किया। चतुर्भुज गोरानी [2] ने सक्रियता से आंदोलन को बढ़ाया–बाला साहब रेगे, सुमेरसिंह पवार, सरदारसिंह राठौर सक्रिय रहे।

खातेगाँव में कांग्रेस तथा प्रजामंडल आंदोलन में पंडित गोपी किशन वैद्य, उनकी पत्नी श्रीमती लक्ष्मीबाई छगनलाल सेठी, उनकी पत्नी तिलकावती सेठी ने भाग लिया। खातेगाँव के ही वैद्य विश्वनाथ शर्मा ने बहुत सक्रिय भूमिका निभाई थी। रामदयाल रामरतन पांडे (सिवनी निवासी) को नेतृत्व करने के कारण 6 माह के कारावास की सजा भी दी गई।

---

[1] देवासः पवार रियासत, कन्नौद–खातेगांवः होलकर रियासत, बागली–सोनकच्छ–गंधर्वपुरी–हाटपीपलियाः ग्वालियर (सिंधिया) रियायत, उदयनगर–पुंजापुरा–निमनपुर – धार रियासत।

[2] चतुर्भुज गोरानी–कन्नौद–खातेगांव (जिला देवास) से विधायक भी रहे।

भौंरासा गाँव जहाँ इतिहास में प्रसिद्ध है वहीं प्रख्यात स्वतंत्रता सेनानी हरिभाऊ उपाध्याय [1] का जन्म स्थान एवं पैतृक गाँव है। यहीं लक्ष्मीकांत शर्मा बाल सेनानी के रूप में स्वतंत्रता संग्राम में शामिल हुए थे। भौंरासा के माहेश्वरी भूतड़ा परिवार ने स्वतंत्रता में विशेष योगदान किया। एक बार फिर खातेगाँव की तरफ मुड़ना होगा। वहाँ से कालूजी बिश्नोई, अयाचित वकील सा. बाला साहेब रेगे (अजनास), दामूजी रेगे, मदनलाल धाकड़, जगदीश अग्रवाल, प्रभाकर सर मंडल, कुण्डेगाँव के सीताराम सारण की उल्लेखनीय भूमिका थी। दुर्गाप्रसाद दुबे की सक्रियता से आंदोलन में गति आयी।

उस दिन खातेगाँव के नागरिक खुश थे। जब 13 मार्च 1973 को म.प्र. के तत्कालीन मुख्यमंत्री प्रकाशचंद्र सेठी आए। उन्होंने वैद्य परिवार का अभिनंदन करके सभी सेनानियों को नमन किया।

कन्नौद क्षेत्र का एक उज्ज्वल पृष्ठ चतुर्भुज गोरानी का है। 1940 में वे प्रजामंडल में शामिल हुए। उन्हें दो बार जेल जाना पड़ा। 1946 में होल्कर राज्य प्रजामंडल का अधिवेशन कन्नौद में हुआ। इसमें गोरानी स्वागताध्यक्ष थे। अधिवेशन में इंदौर के अलावा देवास से माँगीलाल जोशी, कन्हैयासिंह, शंकर कानूनगो भी शामिल हुए।

1962 में स्व. चतुर्भुज गोरानी कन्नौद–खातेगाँव क्षेत्र से विधायक चुने गए। इस सेनानी ने निरंतर सक्रिय रह कर जन सेवा की। 19 जुलाई 1981 को उनका निधन हुआ।

नेताजी सुभाष का दल

देवास में जितने गांधी जी लोकप्रिय थे, उतने ही नेताजी सुभाषचंद्र बोस भी जनता के दिलों में छाए हुए थे। देवास के साथी कन्हैयासिंह ने 1938–39 में 'नेताजी सुभाष दल' का गठन किया। इस दल में गांधीवादी तथा समाजवादी दोनों ही शामिल हुए। इस दल ने उज्जैन को केंद्र बनाकर पूरे मालवा में स्वतंत्रता का अलख जगाया। इसी दल ने 1942 के 'भारत छोड़ो' आंदोलन में जबरदस्त भूमिका निभाई थी। कन्नौद, खातेगाँव, सोनकच्छ में भी 'सुभाष दल' गठित हुए थे।

---

[1] भौंरासा के हरिभाऊ उपाध्याय, *गांधी साहित्य* के संपादक रहे। अजमेर के पास हटुंडी में आश्रम स्थापित किया था। स्वतंत्रता के बाद अजमेर राज्य के मुख्यमंत्री तथा बाद में संपूर्ण राजस्थान निर्माण के बाद राजस्थान के उप मुख्यमंत्री रहे।

आजाद हिंद फौज और देवास

नेताजी सुभाषचंद्र बोस का व्यक्तित्व ही ऐसा था कि हर कोई उनकी तरफ खिंचा चला आता था, दूसरी बात यह थी कि देश की जनता का उन पर अप्रतिम विश्वास और अपनापन था। देवास से एक 'मेडिकल डिटेचमेंट' द्वितीय विश्व युद्ध में महाराज की तरफ से अंग्रेजों को सहायतार्थ भेजा गया था। लेकिन ब्रिटिशसेना में रह कर नेताजी से लड़ना वह भी जब वे भारत की स्वतंत्रता की जंग लड़ रहे थे। सेनानियों के खिलाफ महाराज की यह हरकत देवास के वीरों को गँवारा नहीं हुआ, वे वीर नेताजी के आह्वान पर और अपना कर्तव्य समझ कर 'आजाद हिंद फौज' के सेनानी बन गए और जंगे आजादी की लड़ाई लड़ते हुए देवास का नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित कर दिया। आई.एन.ए. सेनानियों के नाम इस प्रकार हैं–

(1) श्री लक्ष्मणराव, पिता संभाजीराव कदम – वे 1944 में देवास सीनियर की सेना में थे, द्वितीय विश्वयुद्ध में बरमा मोर्चे पर गए। वहाँ आप सुभाष बाबू की आई.एन.ए. में शामिल हो गए – लड़ाई लड़ते हुए अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तार किए गए – उन्हें कड़ी जेल यातनाएँ दी गईं।

(2) श्री शंकरलाल तातले, पिता श्री फकीरा – जन्म – 1924। द्वितीय विश्वयुद्ध में अंग्रेजों से बगावत कर आई.एन.ए. में शामिल हुए। अंग्रेजों द्वारा गिरफ्तारी के बाद 9 माह की सज़ा व अमानवीय यातनाएं दी गईं।

(3) श्री सदाशिव, पिता हरदेनाना साहब – देवास से द्वितीय विश्वयुद्ध में भेजे गए, अंग्रेजों के खिलाफ बगावत कर आई.एन.ए. में भर्ती हुए। ब्रिटिश सेना से लड़ते हुए कैद कर लिए गए। उन्हें भी कठोर यातनाएँ दी गईं।

(4) श्री कल्लूसिंह, पिता खूबाजी गवली – जन्म – 21 सितम्बर, 1913। देवास की सेना में थे। आई.एन.ए. में शामिल होकर अंग्रेजों से युद्ध किया। 1946 में बर्मा की सीमा पर कैद कर लिए गए। इन्हें सजा तथा यातनाएँ दी गईं।

(5) श्री कन्हैयासिंह, पिता भूरेसिंह – जन्म – 4 अप्रैल, 1919। देवास सीनियर रियासत की सेना में भर्ती, दूसरे महायुद्ध में रंगून के मोर्चे पर तैनात थे। सुभाष बाबू की सेना में शामिल हुए, देश की आजादी के लिए युद्ध किया। अंग्रेजों द्वारा युद्ध के दौरान गिरफ़्तार किए

गए। उन को सजा तथा यातनाएँ दी गईं।

(6) श्री सरदार गुरुमुखसिंह, पिता स्वजानसिंह – आप सिख रेजीमेंट में थे। आपने स्वतंत्र भारत का विचार किया और अंग्रेजों के खिलाफ आई.एन.ए. में शामिल हुए। लड़ते हुए गिरफ्तार किए गए और कड़ी सजा झेली।

(7) श्री किशनसिंह, पिता अर्जुनसिंह ठाकुर – जन्म – 5 जुलाई, 1925, देवास। देवास सीनियर की सेना में भर्ती हुए, दूसरे महायुद्ध में अंग्रेजों की ओर से भेजे गए। आप सुभाषचंद्र बोस के आह्वान पर 'आजाद हिंद सेना' में भर्ती हुए। अंग्रेजों से युद्ध करते हुए गिरफ्तार किए गए। एक वर्ष का कठोर कारावास हुआ।

(8) श्री गोकुलसिंह, पिता भुरेसिंह– जन्म – 1915 में जयपुर में हुआ। देवास रियासत की सेना में भर्ती हुए, द्वितीय विश्वयुद्ध में सिंगापुर मोर्चे पर भेजे गए जहाँ युद्ध के दौरान गिरफ्तार हुए और उन्हें सजा दी गई।

(9) श्री सरदारसिंह, पिता हीरासिंह – जन्म – 1917। भारतीय सेना (ब्रिटिश) में भर्ती, फिर बगावत करके सुभाष बाबू की सेना में शामिल हुए बाद में गिरफ्तारी व सजा हुई

(10) श्री दत्ताजीराव शिंदे, पिता श्री भाऊराव शिंदे – जन्म – 1921। रियासत की सेना में भर्ती द्वितीय विश्वयुद्ध में अंग्रेजों की ओर से भेजे गए लेकिन देश की आजादी की खातिर आई.एन.ए. में शामिल होकर युद्ध किया। ब्रिटिश सेना द्वारा गिरफ्तार कर लिए गए और उन्हें फ़ौजी दंड भी दिया गया।

(11) श्री बाजीराव, पिता श्री परशुराम जाधव– जन्म – 1914। देवास सीनियर रियासत की सेना में थे। द्वितीय विश्वयुद्ध में आप ब्रिटिश सेना की तरफ से भेजे गए। लेकिन भारत की स्वतंत्रता संकल्प लेकर श्री जाधव ने नेताजी की आजाद हिंद सेना में भर्ती हुए। अंग्रेजों से जंग लड़ते हुए मोर्चे पर गिरफ्तार कर लिए गए। सात माह का कठोर कारावास की सजा दी गई।

(12) श्री बाला साहेब इंगले, पिता श्री राजाराम इंगले– जन्म – 1906। राज्य सेना में भर्ती हुए, आप भारत की स्वतंत्रता के लिए आजाद हिंद सेना में शामिल होकर ब्रिटिश सत्ता से संघर्ष किया। बाद में आप गिरफ्तार किए गए और आठ माह के कारावास की सजा

ब्रिटिश सत्ता ने इन्हें दी।

(13) श्री भीमराव कोरे, पिता परसराम कोरे – जन्म – 1918। देवास सीनियर फौज में भर्ती हुए, द्वितीय विश्वयुद्ध में भेजे गए। वहाँ आप ब्रिटिश पक्ष त्याग कर स्वतंत्रता संग्राम लड़ रही आजाद हिंद सेना में शामिल हो गए। बाद में उनको गिरफ्तार करके कठोर कारावास की सजा दी गई।

(14) श्री राम जाधव, पिता श्री गोपालराव जाधव– जन्म – 1911। देवास सीनियर की फौज में भर्ती हुए। आप द्वितीय विश्वयुद्ध में ब्रिटिश पक्ष को त्यागकर स्वतंत्रता संघर्ष कर रही आजाद हिंद सेना में भर्ती हुए। जहाँ युद्ध करते हुए बंदी बना लिए गए।

(15) श्री रामसिंह ठाकुर, पिता महावीरसिंह ठाकुर – जन्म – 1892। 1943 में आजाद हिंद सेना में भर्ती हुए, 1944 में आप बंदी बना लिए गए। रंगून, जिगर छाली, लखनाड़ा आदि जेलों में बंद किए गए।

(16) श्री बख्तावरसिंह – द्वितीय विश्व युद्ध में आपने ब्रिटिश पक्ष छोड़ कर स्वतंत्रता संग्राम लड़ रही आजाद हिंद फौज में शामिल होकर स्वतंत्रता की लड़ाई लड़ी।

(17) श्री रामचंद्र, पिता श्यामराव माँजरेकर – आपने आई.एन.ए. में शामिल होकर स्वतंत्रता संग्राम का संघर्ष किया। सिंगापुर में चार माह की कैद हुई आप कन्नौद के निवासी हैं।

नेताजी सुभाषचंद्र बोस के नेतृत्व में 'आजाद हिंद सेना' ने भारत की आजादी के लिए बेमिसाल कुर्बानियाँ दी थी। देवास को गर्व है कि उपरोक्त सेनानियों ने स्वतंत्रता सेनानी बन कर देवास, मालवा, प्रदेश और देश के गौरव को बढ़ाने में अपना योगदान किया था।

चरनोई आंदोलन 1943–44

9 अगस्त 1942 के व्यापक आंदोलन ने देवास के हर हिस्से को जागृत कर दिया था। बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियाँ हुईं लाठी चार्ज हुए। देवास के सेनानी जेलों में डाले गए। कई को रियासत से 'दर बदर' कर दिया गया था।

1942 का वर्ष खत्म होते–होते देवास में किसान आंदोलन की एक अनोखी तस्वीर सामने आई हुआ यूँ कि 1936–37 में कांग्रेस में 'कांग्रेस समाजवादी पार्टी' का फोरम गठित हुआ। इसका नेतृत्व जयप्रकाश नारायण, डॉ. राममनोहर लोहिया और आचार्य नरेंद्रदेव कर रहे थे। देवास में जिसका नेतृत्व स्व. शंकरराव कानूनगो तथा साथी कन्हैयासिंह कर रहे थे। इनके

साथ ठा. अमरसिंह रघुवंशी, स्व. ए.आर. तालिब, स्व. लक्ष्मण मेहता, भाई नारायणसिंह, रमाकांत चौधरी भी थे।

देवास की पहाड़ियों – बालगढ़, नागदा की पहाड़ियाँ भी जिन पर किसानों के बैल, भैंस, गाएँ चरती थी। यह 'चरनोई' ही थी। [1]

'चरनोई आंदोलन' मूलतः किसान आंदोलन था। स्वतंत्रता से प्रेरित था। इसमें तमाम स्वतंत्रता सेनानी भाग ले रहे थे। यह आंदोलन कांग्रेस के झंडे तले ही चला। बात यह थी कि देवास रियासत का तत्कालीन राजा अंग्रेज अधिकारियों के साथ पहाड़ों पर शिकार करते और घोड़े दौड़ाते थे। राजा ने बाहर से सुअर बुलवाकर पहाड़ों पर छोड़ दिए, इन सूअरों को दौड़ा कर गोली मारी जाती। वे घायल होकर चिंघाड़ते। इससे शिकार करने में और जोश भर जाता। सूअर दौड़ कर खेतों में घुस जाते। इससे खड़ी फसलें बर्बाद हो जाती थीं।

किसानों ने नियमानुसार आवेदन देकर शिकार रोकने का निवेदन किया। कई बार अनुनय–विनय भी किया लेकिन सुनवाई नहीं हुई उल्टे रियासत ने पहाड़ों पर पशुओं के चरने पर पाबंदी लगा दी गई और गहरे पहरे बैठा दिए गए। पशु चर नहीं सकते थे। सूअर खेती खराब करते थे। पशुओं को चारा मिलना कठिन हो गया।

अंततः प्रजामंडल, कांग्रेस तथा कांग्रेस समाजवादियों ने 'चरनोई मुक्ति' हेतु आंदोलन करने का फैसला लिया। रूपरेखा और रणनीति बनी, सैकड़ों पशुओं – गायें, बैल, भैंस लेकर प्रतिबंध तोड़ना शुरू किया गया। किसान कांग्रेस का झंडा लेकर पहाड़ों पर जाने लगे। रियासत ने बड़े पैमाने पर गिरफ्तारियाँ की, भयावह बल का प्रयोग किया। देवास की दोनों जेलें भर गईं। दोनों सिनेमा गृह *नावेल्टी* तथा *नगर निवास* में लोगों को बंद किया गया। साथ ही अन्य स्थानों पर भी किसानों को ले जाया गया।

इस अनोखे आंदोलन का सफल नेतृत्व स्व. कन्हैयासिंह, स्व. शंकर कानूनगो, स्व. माँगीलाल जोशी कर रहे थे। इनके साथ अमरसिंह रघुवंशी, रमाकांत चौधरी, तालिब साहेब, गोपीनाथ पटवर्धन, लक्ष्मण मेहता, कृष्णा जोशी, छतरसिंह, छोटे खाँ, रुस्तम शेख आदि थे। गिरफ्तार किसानों, सेनानियों के परिवारों की मदद करने में स्व. रामनारायण अग्रवाल, कन्हैयालाल महेश्वरी, नरसिंहलाल पोरवाल, हीरालाल जैन, रामचंद्र कनौजिया, भँवरसिंह चावड़ा, ठा. भेरूसिंह चौहान, ठा. मोढ़सिंह चावड़ा, राजमल चौरसिया एवं शंकर विजयवर्गीय अग्रणी थे।

---

[1] चरनोई का अर्थः जहाँ पशु चारा इत्यादि चरते है। यह पशुओं के लिए ही चरनोई भूमि रखी जाती है। सदियों से यह क्षेत्र आसपास के कई गाँवों के पशुओं का जीवन दाता रहा है।

इस आंदोलन की गूंज दिल्ली, इंदौर, अहमदाबाद, कलकत्ता तक गई मामा बालेश्वर दयाल, स्व. लाडली मोहन निगम देवास आकर इस आंदोलन का आकलन किया। स्व. जयप्रकाश नारायण के पार्टी अखबार *जनता* ने प्रभावी टिप्पणी लिखी थी।

इस किसान आंदोलन में देवास सहित, भानगढ़, गुराड़िया, राजोदा, बालोदा, केलाद बालगढ़, नागदा, क्षिप्रा, पालनगर, सिरोलिया, बिलावली, बांगर गाँव के किसानों ने एकजुटता से भाग लिया। अंततः रियासत ने माँग स्वीकारी लेकिन इस किसान आंदोलन के नेता स्व. शंकर कानूनगो तथा स्व. कन्हैया सिंह को अज्ञात स्थान पर गिरफ्तार करके रखा गया। तीन महीने तक इनके परिवारों को पता ही नहीं चला कि स्वतंत्रता सेनानी कहाँ हैं। राष्ट्रीय स्तर पर हलचल मची, राष्ट्रीय नेताओं ने हस्तक्षेप किया तो 1944 में प्रतिबंध हटा लिए गए। चरनोई मुक्त हुई तथा 1944 के प्रारंभ में नेताओं को छोड़ दिया गया।

अनाज आंदोलन

रियासत में काश्तकारों को अपना अनाज बाजार में भेजने की अनुमति नहीं थी। उत्पादन का चौथाई शासन को देना पड़ता था। यह अनाज शासन द्वारा महँगे दामों पर जनता को बेचा जाता था। एक 'लट्ठा' नामक कर भी लगाया गया जो किसानों के लिए हानिकारक था। इस शोषक व्यवस्था के खिलाफ ग्रामीण जनता ने प्रजामंडल के नेतृत्व में ज्ञापन दिए। जब माँग ठुकरा दी गई तो रैलियाँ और सभाएँ की गईं।

1939–40 में द्वितीय विश्व युद्ध होने से चीजों के भाव बढ़ गए थे। अनाज की कमी आ गई थी। देवास की जनता तथा कांग्रेस प्रजामंडल तथा समाजवादियों ने युद्ध का विरोध किया। अंग्रेजों की तरफ से भारत को जबरदस्ती युद्ध में शामिल करने का मुखर विरोध जनता ने किया। देवास में 1944–45 में फिर अनाज का संकट आया। जनता का गुस्सा फूट पड़ा। कांग्रेस के झंडों के साथ प्रभातफेरियाँ तथा प्रदर्शन आयोजित किए गए। जवाहर चौक में विशाल आम सभाएँ हुईं। जवाहर चौक में नेताओं तथा कार्यकर्ताओं ने रियासत और ब्रिटिश सत्ता को खत्म करके 'जनता की सरकार' की स्थापना की घोषणा कर दी।

देवास का यह इतिहास देवासवासियों को निरंतर प्रेरित करता रहता है। 'अनाज आंदोलन' का सफल नेतृत्व साथी कन्हैया सिंह तथा शंकर कानूनगो ने किया था। सहकारिता आंदोलन के मोढ़सिंह चावड़ा, भँवरसिंह चावड़ा, हटेसिंह गोयल, हिंदूसिंह परमार, दुर्गाशंकर पंड्या ने जबरदस्त

भूमिका निभाई देवास में चले स्वतंत्रता संग्राम पर कई पहलुओं पर मध्य प्रदेश शासन के हरिजन कल्याण मंत्री स्व. बापूलाल मालवीय ने मेरे द्वारा लिए गए। 2008 में एक साक्षात्कार में इसकी विस्तार से चर्चा की थी। रियासतकालीन एडवोकेट बाबूराम शर्मा ने भी प्रजामंडल, कांग्रेस के आंदोलन पर व्यापक प्रकाश डाला है।

स्वतंत्रता सेनानी रहे स्व. रामचंद्र दुबे, आईएएस जो कलेक्टर, कमिश्नर तथा सचिव रहे हैं, ने 2008 में मुझे व्यापक रूप से बताते हुए बताते हुए देवास के स्वतंत्रता संग्राम में उल्लेखनीय भूमिका पर विस्तार से प्रकाश डाला है।

स्वतंत्रता संग्राम में देवास के पास राजौदा ग्राम के रहने वाले श्री सेवाराम चौहान ने अपनी विनम्र भूमिका निभाई थी। 1943 में देवास रियासत ने सेवाराम चौहान को वियोगी हरि की उद्योगशाला में दिल्ली पढ़ने भेजा। उद्योगशाला गांधीवादी विचारों वाली थी। यहाँ सभी राष्ट्रीय नेताओं से उनकी भेंट हुई। जब भी हरिजन बस्ती में गांधी जी ठहरते थे, सेवाराम चौहान बतौर स्वयंसेवक गांधी जी की कुटिया में सेवारत रहते थे।

श्री सेवाराम चौहान ने 1943 से 1948 तक प्रतिदिन की सिलसिलेवार डायरी लिखी है। इस डायरी से कई अनछुए बिंदुओं पर प्रकाश पड़ता है। इस डायरी पर मैंने दो शोध–पत्र लिखे थे। *देवास जिले का स्वतंत्रता संग्राम* नामक पुस्तक में मैंने इस डायरी पर प्रमुखता से लिखा है। स्वतंत्रता के बाद 1950 में सेवाराम शासकीय सेवा में आ गए। जहाँ ईमानदारी तथा सादगी की मिसाल कायम की।

मेरे जैसे इंसान के लिए जिसके नगर और जिले में स्वतंत्रता संग्राम, पुरातत्व, प्रागैतिहास, इतिहास, साहित्य, लोक कला की सशक्त परंपरा हो वह अपने को धन्य मानेगा, कहीं न कहीं इस परंपरा और परिवेश ने मेरे अन्य साथियों का सांस्कृतिक संस्कार भी किया है। इस परिवेश ने सांस्कृतिक साहित्यिक दृष्टि भी दी है।

स्वतंत्रता सेनानी श्री सेवाराम चौहान की गांधी जी तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओं से प्रत्यक्ष भेंट तथा चर्चाओं की तारीख़ यहाँ दी गई है–

- 17 जुलाई, 1945
  - महात्मा गांधी एवं उनका दल
  - डॉ. राजेन्द्र प्रसाद
  - सरदार वल्लभ भाई पटेल

- बी.जी. खेर – बंबई के प्रधानमंत्री

❖ 08 अप्रैल, 1946
- महात्मा गांधी एवं उनका निजी स्टॉफ
- मणीलाल गांधी
- कुमारी सीता बेन, मणीलाल गांधी
- श्रीमती आभा बेन, कनु गांधी

❖ 10 अप्रैल, 1946
- महात्मा गांधी एवं उनके साथी
- कैप्टन शाह नवाज खान

❖ 13 अप्रैल, 1946
- महात्मा गांधी
- कांग्रेस महासमिति के 14 सदस्य

❖ 15 अप्रैल, 1946
- महात्मा गांधी से टेलीफोन पर चर्चा

❖ 16 अप्रैल, 1945–6
- महात्मा गांधी से उनके सहयोगियों से भेंट

❖ 1 मई, 1946
- महात्मा गांधी एवं उनका दल – 5 मई से 14 मई तक आश्रम में रहा।

❖ 16 जून, 1946
- महात्मा गांधी
- राजकुमारी अमृत कौर

❖ 28 जून, 1946
- पूज्य महात्मा गांधी और उनका दल

❖ 16 सितंबर से 19 सितंबर, 1946 तक
- गांधीजी
- आभा बेन गांधी
- श्री कृष्ण नायर

❖ 22 सितंबर, 1946
- गांधी जी
- डॉ. राजेन्द्र प्रसाद
- जवाहरलाल नेहरू
- खान अब्दुल गफ्फार खाँ

❖ 25 सितंबर, 1946

- महात्मा गांधी
- कांग्रेस महासमित के 16 सदस्यगण [1]

देवास का अपना स्वभाव है कि वह फूल पैदा करता है तो रक्षार्थ हथियार भी उठाता है।

स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान द्वितीय विश्वयुद्ध में देवास के राजा ने ब्रिटिश सहयोग के लिए पूरा कांटिजेंट भेजा। इस कांटिजेंट ने स्वतंत्रता के महानायक नेताजी सुभाषचंद्र बोस के खिलाफ लड़ने से मना करके 'आजाद हिंद फौज' के (आई.एन.ए.) इंडियन नेशनल आर्मी जो उस वक्त रंगून में थी, में शामिल हो गए। वे नेताजी के अभियान में कंधे से कंधा मिला कर ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ जुट गए थे।

देवास ने 1857 से 1947 तक राष्ट्रीय स्वतंत्रता संग्राम में निरंतर अपनी भूमिका निभाई यहाँ की गतिविधियों से राष्ट्रीय नेतृत्व भलीभाँति परिचित था। कोई न कोई नेता देवास आते रहे। 1942 में गोपनीय तौर से स्व. यशवंतराव चव्हाण, साने गुरुजी, चंद्रशेखर (पूर्व प्रधानमंत्री), डॉ. राममनोहर लोहिया, एस.एम. जोशी (पूना) आदि कई धार्मिक तथा सामाजिक नेतृत्व करने वाले निरंतर आते–जाते रहे।

स्वतंत्रता के संघर्ष में उन सेनानियों जिन्हें पेशन दी गई थी, की सूची इस प्रकार है–

क्रं.	नाम	पता	विवरण
1.	श्री बाबूलाल वर्मा	112, लक्ष्मीबाई मार्ग, देवास	श्रीमती जानकी देवी वारिस है।
2.	श्री श्यामलाल पाराशर	डी, 3–26, आवास नगर, देवास	––''––
3.	श्री चंद्रशेखर मॉजरेकर	ग्राम सतवास, तह. कन्नौद जिला देवास	––''––
4.	श्री रमाशंकर मुंशीलाल द्विवेदी	प्र.अ.मा.वि. दत्तोतर तह. देवास	––''––
5.	श्री कृष्णचंद्र भौंरासकर	20, चामुंडा कॉम्पलेक्स, देवास	––''––
6.	श्रीमती शातांबाई पति किशनलाल मालू	लोहारदा, तह. कन्नौद	––''––
7.	श्री रामदास सालीग्राम महंत	14, जैल रोड़, देवास	मृत्यु दिनांक 11.01.1992
8.	श्री फुलसिंह पिता नवलसिंह	70, लेबर कॉलोनी, देवास	––''––
9.	श्री स्वामीनारायण देवतीर्थ	नारायण कुटी, देवास	मृत्यु दिनांक 17.10.1992 कोई वारिस नहीं
10.	श्री बाजीराव जाधव मराठा	मराठा समाज, देवास	मृत्यु दिनांक 11.09.1994
11.	श्री गुरमुखसिंह सजानसिंह	अमरकुटी, देवास	मृत्यु दिनांक 30.01.1999 श्रीमती जोगेन्दर ग्रेवाल वारिस
12.	श्री किशनसिंह अर्जुनसिंह ठाकुर	13, नाथ मोहल्ला, देवास	मृत्यु दिनांक 19.10.1999 श्रीमती तेजुबाई वारिस हैं।

[1] श्री सेवाराम चौहान सन् 1943 से 1946 तक गांधीवादी उद्योगशाला में रहे।

13.	श्री लक्ष्मणराव संभाजीराव कदम	विष्णु कॉलोनी, बीएनपी रोड़ देवास	मृत्यु 18.02.1994 श्रीमती उमाबाई वारिस है।
14.	श्री बालकृष्ण राजराम इंगोले	29, कृष्णपुरा, देवास	मृत्यु दिनांक 29.01.1988
15.	श्री दत्ताजीराव भउराव शिन्दे	56, लेबर कॉलोनी, देवास	मृत्यु दिनांक 04.07.1989 श्रीमती पार्वती बाई वारिस
16.	श्री गोकुलसिंह भूरेसिह ठाकुर	29, भवानीसागर, देवास	मृत्यु दिनांक 21.12.1984 श्रीमती जानकीबाई वारिस
17.	श्री रामभाउ लक्ष्मणराव भोगोड़े	40, गाँव महाराष्ट्र	मृत्यु दिनांक 09.04.1997 श्रीमती ताराबाई वारिस
18.	श्री कन्हैयासिंह भूरेसिंह	44, लक्ष्मीबाई मार्ग, देवास	मृत्यु दिनांक 21.12.1984 श्रीमती केसरबाई वारिस
19.	श्री वृंदलाल हंसानन्द तलरेजा	जवाहर मार्ग, देवास	मृत्यु दिनांक 22.06.2002
20.	श्री तिरथसिंह हीरासिंह	जवाहर चौक, बागली	मृत्यु दिनांक 12.08.1992 श्रीमती हरपाल कौर वारिस
21.	श्री कल्लूपिता खोबा गवली	के.पी. कॉलेज देवास	मृत्यु दिनांक 30.03.1988 श्रीमती इमरती देवी वारिस थी जिनकी भी मृत्यु हो गई
22.	श्री रामराव गोपालराव जाधव	2, मुक्ति मार्ग देवास	मृत्यु दिनांक 09.03.1982
23.	श्री शंकर फकीरा सोलोसे	के.लो.नि.वि. डिवीजनल नं. 3, देवास	मृत्यु दिनांक 23.10.1984 श्रीमती लक्ष्मीबाई वारिस
24.	श्री रामदयाल पिता रामरतन पाण्डे	मु.न.पा अधि. खातेगाँव	मृत्यु दिनांक 22.04.1999
25.	श्री शांतिलाल मोतीलाल गुप्ता	76, सरदार पटेल मार्ग, देवास	मृत्यु दिनांक 09.05.2001
26.	श्री नर्मदाप्रसाद खूबचंद्र शर्मा	16, ए स्टेशन रोड़, देवास	मृत्यु दिनांक 12.03.2004
27.	श्री भीमराव परस्पराम कोरे	ग्रा. जत सांगली महाराश्ट्र	मृत्यु दिनांक 08.02.1984 श्रीमती लीलाबाई वारिस
28.	श्रीमती सुशिला मंगलप्रसाद तिवारी	राधागंज, देवास	मृत्यु दिनांक 19.04.1999
29.	श्री बहादुरसिंह	15, बड़ा बाजार, देवास	मृत्यु हो चुकी है, श्रीमती चंद्रकांताबाई बहादुर वारिस
30.	श्री अनुपसिंह पिता धुलजी	16, लक्ष्मीबाई मार्ग, देवास	मृत्यु दिनांक 07.12.1973 श्रीमती क्षमाबाई वारिस थी जिनकी मृत्यु भी हो चुकी है
31.	श्री रामसिंह	नि. 19, भवानीसागर, देवास	मृत्यु हो चुकी है, श्रीमती पार्वती बाई वारिस
32.	श्रीमती सरस्वती बाई हरदे	नि. खारीबावड़ी, देवास	मृत्यु हो चुकी है
33.	श्री बख्तावरसिंह सिख	निं. गंधर्वपुरी हा.म. 128, लाला लाजपतराय मार्ग	मृत्यु हो चुकी है, श्रीमती शांताबाई वारिस जिनकी मृत्यु हो चुकी है।
34.	श्रीमती षांताबाई पति किशन मालू	लोहारदा	––''––
35.	श्री पं. मनोहरलाल सिद्धनाथ व्यास	95, प्रकाश नगर, इंदौर	मृत्यु हो चुकी है, श्रीमती ताराबाई वारिस थी जिसकी मृत्यु हो चुकी है।
36.	श्री दिगंबरराव धोहणदेव पुराणिक	46–ए, कालोनी बाग, देवास	मृत्यु दिनांक 15.08.1973 श्रीमती पार्वती बाई वारिस
37.	श्री जरनोलसिंह पिता उधमसिंह	सिक्यूरिटी ऑफिस एस. कुमार्स, देवास	मृत्यु दिनांक 03.01.1997 कोई वारिस नहीं
38.	श्री गुलालचंद पिता रूपचंद जैन	7, शालिनी रोड़, देवास	मृत्यु दिनांक 28.11.1992
39.	श्री गोरधनलाल पिता काशीनाथ गुप्ता	ग्राम पोलाखाल तह. बागली	मृत्यु दिनांक 07.05.1996
40.	श्री मल्हारराव नारायणराव जगताप	150, कवि कालिदास मार्ग	मृत्यु दिनांक 26.02.1992

41.	श्री बालचंद्र छेदीलाल ठेकेदार	10, कृष्ण पुरा देवास	मृत्यु दिनांक 13.12.1991 श्रीमती इमरतीबाई मृत्यु हो गई
42.	श्री मोहनलाल नंदराम यादव	43, भवानी सागर, देवास	मृत्यु दिनांक 30.01.2004
43.	श्री रामचन्द्र श्यामराव मॉंजरेकर	कन्नौद जिला देवास	मृत्यु दिनांक 30.01.2000 श्रीमती विमलाबाई वारिस है
44.	श्री कांतीलाल मगनलाल जोशी	राधागंज, देवास	मृत्यु दिनांक 19.11.2003 श्रीमती विमलाबाई वारिस है।

गांधीवादी एवं कांग्रेस के झंडे तले स्वतंत्रता संग्राम को सक्रिय नेतृत्व देने वाले स्वतंत्रता सेनानी

नाम	नाम
स्व. शंकरराव कानूनगो	श्री अब्दुल करीम गजधर
स्व. साथी कन्हैयासिंह	श्री ठा. विजयसिंह
स्व. माँगीलाल जोशी	श्री ठा. शैतानसिंह राठौर
अन्य सक्रिय सेनानी	श्री जंगबहादुर सिंह
श्री अमरसिंह रघुवंशी	श्री भँवरसिंह चावड़ा
श्री हीरालाल जैन	श्री ठाकुर भेरूसिंह
श्री नृसिंहलाल पोरवाल	श्री मनोहर कानूनगो
श्री कन्हैयालाल माहेश्वरी	श्री मोढ़सिंह चावड़ा
श्री रामनारायण अग्रवाल	श्री भगवती प्रसाद शास्त्री
श्री राजमल चौरसिया	श्री वेणी माधव मिश्र
श्री बशीरूद्दिन मौलाना	श्री गणपत पहलवान।

देवास की सांस्कृतिक शिक्षा के विकास'–क्रम में सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र (सी.सी.आर.टी., दिल्ली) [1] दिल्ली का उल्लेख जरूरी मानता हूँ। देवास जिले में जीवनसिंह ठाकुर, सी.सी.आर.टी. में सर्वप्रथम प्रशिक्षण पाने वाले शिक्षक थे। पुंजापुरा (बागली–हाटपीपलिया तहसीलों) में सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र से प्राप्त सामग्री का शिक्षा, प्रौढ़ शिक्षा, साक्षरता अभियान, शिक्षक–प्रशिक्षण केंद्रों में भरपूर उपयोग हुआ। कई बड़े शिविर आयोजित हुए। इनके सुखद परिणाम विद्यालयों में देखने को मिले। देवास जिले के ग्राम बरोठा के जगदीश जायसवाल सी.सी.आर. टी. प्रशिक्षित शिक्षक हैं। इस समय डी.आर.पी. हैं। बरोठा केंद्र से अनेक शिक्षक प्रशिक्षित हैं जो विभिन्न गाँवों में पदस्थ हैं तथा वहाँ विद्यालयों में भारतीय संस्कृति के विभिन्न पहलुओं पर विद्यार्थियों को शिक्षित करते हुए रचनात्मकता को बढ़ावा दे रहे हैं। देवास जिले की कन्नौद–खातेगाँव तहसील में पुष्पेंद्रसिंह राठौड़ ने सी.सी. आर.टी. से प्रशिक्षण लिया। कई शिविरों में सक्रिय भागीदारी की है।

निःसंदेह अच्छे स्रोत शिक्षकों का समूह सामने आया है जो श्रेष्ठ सांस्कृतिक वातावरण तथा अध्ययन वृत्ति को विकसित करने में लगा है। मैंने देवास के बारे में लिखा। लिखकर ऐसा लगा कि बहुत कुछ है जो रह गया। शायद देवास के सांस्कृतिक परिवेश में इतना कुछ छुपा, बिखरा पड़ा है कि बहुत अनकहा रह गया है।

---

[1] 1990 सीसीआरटी में ने श्री ठाकुर, देवास को सम्मानित किया था। मुख्य अतिथि स्व. डॉ. शंकरदयाल शर्मा थे।

देवास जिले का सागौन का वन कन्नौद तहसील का वन एवं पहाड़ी क्षेत्र

8 अप्रैल, 2016 सिंहस्थ में उज्जैन का राम घाट मालवा के जीवन में सुसंस्कृत रंग और अध्यात्म का उजास

देवास का स्टेशन रोड – (एबी–रोड़ पर) के सामने का 'माघव द्वार'

देवास का 'भौंरासा' नगर परमार कालीन शिव मंदिर जो नेमावर शैली का है।
इस मंदिर के शिलालेख पर 1141 विक्रम संवत अंकित है यानी ईस्वी सन 1198।

राजा गंधर्व सेन की गंधर्वपुरी – (तह. सोनकछ) जि. देवास

जैन मूर्ति–गंधर्वपुरी (जि. देवास)। विक्रमादित्य (57 ई.पू.) के पिता–राजा गंधर्वसेन की राजधानी रही। यहाँ सनातन, जैन, बौद्ध मूर्तियों की बहुतायत है।

लोक गायन की श्रेष्ठ परंपरा। देवास में हर गाँव में भजन, लोक गायन मंडलियाँ है।

नेमावर (देवास–) का इतिहास प्रसिद्ध सिद्धेश्वर महादेव मंदिर 1857 के महासगर का भी गवाह भी है। किंवदंतियों के अनुसार पांडवकालीन मंदिर परमारों के इतिहास में वर्णित है।

देवास के भौरासा ग्राम के उत्तर में झरनेश्वर में भोज कालीन सरोवर

देवास के नावेल्टी चौराहे के दाईं ओर – प्राचीन मंदिर तथा आवास : मराठाकालीन कला, वास्तु, शिल्प का श्रेष्ठ–उदाहरण (देवास, म.प्र.)।

मराठाकालीन – मकान की कलात्मक सज्जा देवास (म.प्र.)

हैबतराव मार्ग स्थिति पूर्व राजबाड़ा (पवार शाही) देवास (म.प्र.)

पवारों (राज वंश) की छत्रियाँ – छत्रीबाग देवास

देवास नगर में खेड़ापति मंदिर के बाजू में परमारकालीन शिव मंदिर

स्व. संगीत सम्राट रजब अली खाँ का अभिनंदन करते स्वतंत्रता सेनानी स्व. साथी कन्हैयासिंह
(सन् 1957, देवास)

देवास के धारा जी क्षेत्र में नर्मदा की सहस्र धारा
(बागली तहसील के पीपरी से 15 किलो मीटर दूर)

22 जुलाई 2013 – देवास पद्मश्री वसुंधरा कोमकली – स्मृति शेष (शास्त्रीय गायिका)

22 जुलाई 2013 गुरुपूर्णिमा
पद्मश्री वसुंधरा कोमकली–(स्व. कुमार गंधर्व की गायिका पत्नी) साथ में लेखक

देवास की सांस्कृतिक परंपरा एवं विरासत
पद्म विभूषण पं. कुमार गंधर्व तथा श्रीमती वसुंधरा कोमकली के साथ लेखक

प्रख्यात चित्रकार एम.एफ. हुसेन के गुरु अण्णा रेगे का खातेगाँव (जि. देवास) के अजनास ग्राम स्थित मकान।

स्व. अण्णा रेगे का पारिवारिक चित्र

'रंग कर्म' में देवास पीछे नहीं प्रख्यात रंगकर्मी, अभिनेता, गायक – देवास के श्री चेतन पंडित–देवास में प्रस्तुति देते हुए। (इन दिनों चेतना पंडित, फिल्मों, टी.वी. सीरियलों तथा थियेटर में सक्रिय हैं)

लोक देवी माता शीतला का देवास में प्राचीन स्थान

ऐसे ही लोक गायकों, आख्यानकारों ने लोक संस्कृति को बचाए रखा है।

देवास के रत्न – पद्मश्री प्रताप पवार (कथक नर्तक एवं आचार्य) देवास में कथक कार्यशाला में शिक्षण देते हुए।

प्रख्यात शास्त्रीय गायक – स्व. संगीत सम्राट राजब अली खाँ– (बैठे हुए साफा पहने हुए), साथ में तत्कालीन देवास के महापौर एवं स्वतंत्रता सेनानी स्व. ठाकुर कन्हैया सिंह (1957 देवास)

देवास की सांस्कृतिक परंपरा–कथक नर्तक पद्मश्री प्रताप पवार

पद्मश्री प्रताप पवार के साथ उनके शिष्य नर्तक श्री प्रफुल्ल सिंह गहलोत (देवास)

देवास के ग्राम्य अंचलों मे गोधूली बेला आज भी जीवंत है।

देवास अंचल में प्रकृति ने खूब समृद्धि दी है

देवास में श्री प्रफुल्ल सिंह गहलोत (कथक) प्रस्तुति देते हुए

प्रफुल्ल सिंह गहलोत–प्रस्तुति देते हुए

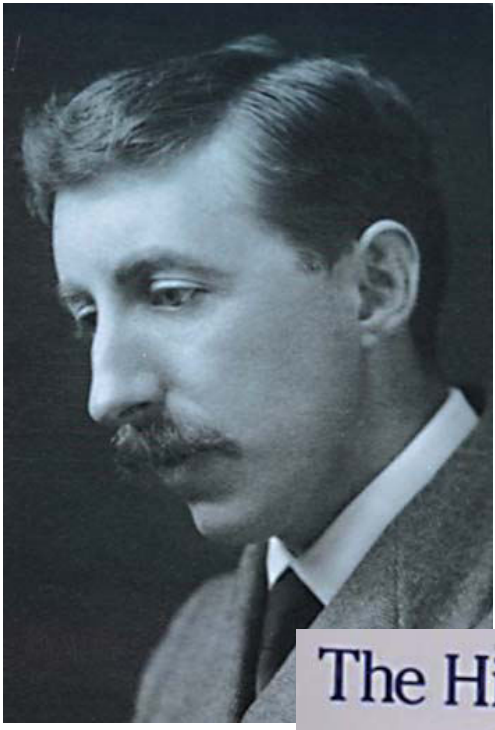

ई. एम. फोर्स्टर (अंग्रेज लेखक, *अ पेसेज ट्र इंडिया* तथा *हिल ऑफ देवी* के लेखक) 1 जनवरी, 1879 को जन्म, 7 जून, 1970 को मृत्यु

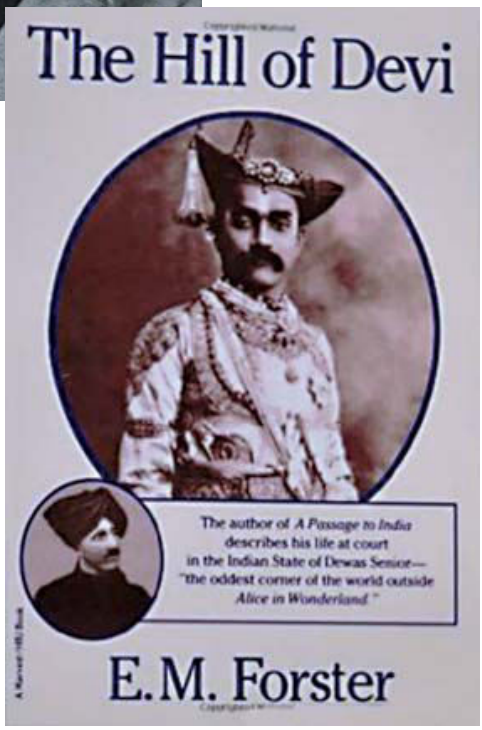

अंग्रेज लेखक स्व. ई. एम. फोर्स्टर भारतीय पोषाक (मराठा) में। स्थान देवास–1924

ई.एम. फोर्स्टर, लंदन यू. के. स्थित अपने आवास में

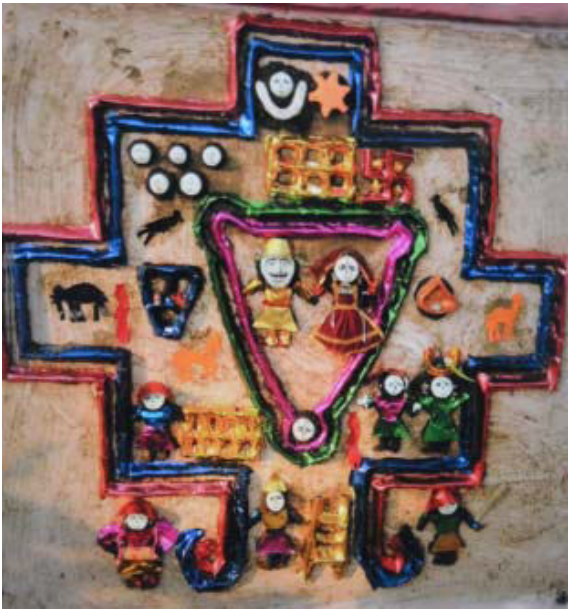

संझा का दीवार पर अंकन

'संझा' के साथ छात्राएँ

'संझा बाई' माँडणी बनाती बेटियाँ। सोलह श्राद्ध पक्ष में यह सोलह दिन तक मनाई जाती है।

संझा (संजा) बाई – देवास के जन जीवन में 'संझा' माता के ये अंकन गोबर से बनते हैं और उन्हें फूलों, पत्तियों से सजाए जाते हैं। सोलह दिन के सोलह अंकन और गीत, अंतिम दिन 'कलाकार' इसमें हर आकृति को सजाई और चमकीली बनाई जाती है। संझा, कुँवारी बेटियों 'माँडती' (बनाती है) गीत और माँडणों में गहरा लोक गीत, संगीत पक्ष है। गहरे जीवन मूल्य और सामाजिकता का अहसास होता है।

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र

(संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार का स्वायत्तशासी संस्थान)

एक परिचय

भारत की बहुरूपी, समृद्ध, जीवंत सांस्कृतिक परम्पराओं एवं औपचारिक शिक्षा पद्धतियों के बीच अन्तर दूर करने हेतु मई, 1979 में सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र (सीसीआरटी) की स्थापना की गई। इसका मुख्य ध्येय तथा उद्देश्य समस्त सांस्कृतिक स्रोतों को साथ रखते हुए शिक्षा पद्धति में औपचारिक व अनौपचारिक शिक्षा के सभी स्तरों को अंतर्भूत करना है। उदाहरण के तौर पर पारंपरिक कलाओं: चाक पर मिट्टी का कार्य, बांधनी कागज़ के खिलौने समेत हस्तकलाओं का प्रशिक्षण, सांचे बनाना, पुतली कला की विभिन्न विधाएँ और नृत्य एवं संगीत के बहुरंगी रूप को न केवल इतिहास तथा सामाजिक विज्ञान वरन् गणित, रसायन एवं भौतिकी विज्ञान जैसे विषयों के संग शैक्षिक माध्यम के रूप में उपयोग में लाना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कई नवीन योजनाएं विकसित की गईं। कार्यक्रम के स्तर पर शिक्षा प्रशासकों एवं शिक्षक प्रशिक्षकों हेतु नियमित कार्यशालाओं; शिक्षकों हेतु अनुस्थापन एवं पुनश्चर्या पाठ्यक्रम तथा विद्यार्थियों हेतु कार्यशालाओं एवं शिविरों का आयोजन किया जाता है। सांस्कृतिक प्रतिभा तथा विद्वत्ता की पहचान के लिए भारत सरकार की योजनाओं हेतु सीसीआरटी एक मुख्य संस्थान के रूप में कार्य कर रहा है।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सीसीआरटी, सांस्कृतिक सामग्री का संग्रहण व प्रलेखन करता एवं श्रव्य-दृश्य किट तैयार करता है, जो विभिन्न विन्यासों में क्षेत्रीय संस्कृति अथवा विशिष्ट कला रूप के अध्ययन को प्रोत्साहित करता है और जिन लोगों ने इन कला रूपों की रचना की है, उनके विषय में जानकारी देता है।

एक संस्था के रूप में सीसीआरटी ने एनसीईआरटी और राज्यों के स्तर पर एससीईआरटी के साथ एक विस्तृत नेटवर्क (कार्यतंत्र) स्थापित किया है। आज इसके तीन क्षेत्रीय केन्द्र उदयपुर, हैदराबाद तथा गुवाहाटी में हैं। सीसीआरटी ने भारत के शिक्षक एवं विद्यार्थी समुदाय में राष्ट्रीय एकता तथा सांस्कृतिक पहचान के आदर्शों को सुदृढ़ करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। समृद्ध तथा विविधतापूर्ण प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक धरोहर की इस धरा पर यह आवश्यक है कि भारत में आज का युवा अपनी तथा दूसरों की समृद्ध संस्कृति के प्रति एक गूढ़ समझ तथा सराहना की भावना को लेकर पल्लवित हो। सीसीआरटी के जन्म का श्रेय श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय तथा डॉ. कपिला वात्स्यायन (जो क्रमश: इसकी प्रथम अध्यक्ष व उपाध्यक्ष थीं) की दूर दृष्टि व प्रयासों तथा आठवें दशक में भारत सरकार के शिक्षा, समाज कल्याण एवं संस्कृति मंत्रालय के सहयोग को जाता है।

सीसीआरटी, भारत सरकार की राष्ट्रीय सांस्कृतिक प्रतिभा खोज छात्रवृत्ति योजना कार्यान्वित करता है, जिसका लक्ष्य विविध कलात्मक क्षेत्रों में विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान करना तथा सुविधायें उपलब्ध कराना है। 10 से 14 वर्ष के आयु समूह वाले शिक्षारत बच्चे या पारंपरिक कलारूपों

से जुड़े परिवारों के बच्चे इस राष्ट्रीय सांस्कृतिक छात्रवृत्ति योजना में भाग लेने के पात्र हैं।

विभिन्न सांस्कृतिक क्षेत्रों में युवा कलाकारों को छात्रवृत्ति प्रदान करने की योजना संस्कृति मंत्रालय द्वारा सीसीआरटी को स्थानांतरित की गई है, जिसके तहत भारतीय शास्त्रीय संगीत, सुगम संगीत, नाट्य, दृश्य कला, लोक कला आदि क्षेत्रों में 18 से 25 वर्ष की आयु वर्ग के अधिकतम 400 युवा कलाकारों को छात्रवृत्तियाँ (निधि की उपलब्धता के अनुसार) प्रदान की जाती हैं।

सीसीआरटी संस्कृति मंत्रालय की कुछ अन्य नीतियों का भी कार्यान्वयन करता है, जैसे सांस्कृतिक पक्षों पर 400 शोध अध्येताओं को अध्येतावृत्ति प्रदान करना। इनमें 200 कनिष्ठ तथा 200 वरिष्ठ शोध अध्येताओं का चयन किया जाता है। शोध में मुख्य बल संस्कृति के विभिन्न पहलुओं में 'गहन अध्ययन/अनुसंधान' पर दिया जाता है, जिसमें सांस्कृतिक अध्ययनों के नये उभरते क्षेत्र भी शामिल हैं।

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र ने 1985 से सीसीआरटी शिक्षक पुरस्कार की स्थापना की है, जो प्रति वर्ष उन शिक्षकों को दिया जाता है, जिन्होंने शिक्षा व संस्कृति के क्षेत्र में उत्कृष्ट कार्य किया हो। पुरस्कार में प्रशस्ति पत्र, प्रतीक चिह्न, अंगवस्त्रम् तथा नकद धनराशि ₹ 25000/–प्रदान की जाती है।

सीसीआरटी ने संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार की एक नई पहल के अन्तर्गत 'राष्ट्रीय संस्कृति एवं धरोहर प्रबन्धन संस्थान' की संकल्पना के अनुसार कला प्रबंधन योजना पर प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित करने आरंभ किए हैं।

भारत सरकार के संस्कृति मंत्रालय ने देश के सांस्कृतिक स्थानिक भूगोल के सर्वेक्षण की महत्त्वाकांक्षी परियोजना – 'भारत का सांस्कृतिक मानचित्रण' – की पहल की है। इस परियोजना का मुख्य केन्द्र विविध क्षेत्रों के कलाकारों के वर्तमान आँकड़ों की तुलना करना व उन्हें उपयोग में लाना है। ये सूची व आँकड़े कहीं से भी लिए जा सकते हैं, चाहे कोई गैर सरकारी सरकारी संस्था हो या संस्कृति के प्रचार–प्रसार में लगी हुई भारत सरकार के अधीन/स्वायत्त संस्थाएँ–जैसे–संगीत नाटक अकादमी, राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र, ललित कला अकादमी, साहित्य अकादमी, क्षेत्रीय सांस्कृतिक केन्द्र, ऐंथ्रोपॉलॉजिकल सर्वे ऑव् इण्डिया या अन्य संस्थाएँ जैसे–इंटेक आदि। इनके अलावा यह अनुभव किया गया कि संस्कृति मंत्रालय को चाहिए कि वह दुर्लभ कलाओं/परंपराओं का सर्वेक्षण भी आरंभ करे ताकि इन पर ध्यान जाए तथा इनको फिर से सहेजा जा सके। इस परियोजना में न केवल आँकड़े व सूची एकत्र होंगे अपितु मंत्रालय उन योजनाओं को भी धन उपलब्ध कराएगा जिन्हें वित्तीय व सामाजिक उन्नति अपेक्षित होगी। सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र सांस्कृतिक कलाकारों के आँकड़े उपलब्ध कराने में सहायता कर रहा है। अप्रैल, 2018 में यह परियोजना इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र (आईजीएनसीए) को स्थानांतरित कर दी गई है।

संस्कृति मंत्रालय द्वारा वाराणसी में 'संस्कृति' परियोजना का नोडल एजेंसी के रूप में सहसंचालन एवं श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय की स्मृति में 'विरासत–कमला देवी' सांस्कृतिक उत्सव का आयोजन सीसीआरटी के महत्त्वपूर्ण कार्य हैं। इसके लक्ष्य एवं उद्देश्यों के बारे में और अधिक जानकारी हेतु इसकी वेबसाइट www.ccrtindia.gov.in देखी जा सकती है।

सीसीआरटी

क्षेत्रीय केन्द्र
सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
सीआईआई (कन्फेडेरेशन ऑव् इण्डियन इंडस्ट्री)
के सामने, गूगल कार्यालय के करीब
मधापुर से कोण्डापुर मुख्य मार्ग
मधापुर, हैदराबाद, आंध्र प्रदेश
पिन कोड: 500084
दूरभाष: 040-23117050, 23111918
ई-मेल : rchyd.ccrt@nic.in

क्षेत्रीय केन्द्र
सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
3बी, अम्बावगढ़, स्वरूप सागर झील के पास
उदयपुर, राजस्थान
पिन कोड: 313001
दूरभाष: 0294-3291577, 2430771, 2430764
ई-मेल : ccrtrcud@rediffmail.com

क्षेत्रीय केन्द्र
सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
58, जुरीपार, पंजाबारी रोड
गुवाहाटी, असम
पिन कोड: 781037
दूरभाष: 0361-2330152
ई-मेल : rc_ccrt@rediffmail.com

'शहरों की अनकही दास्ताँ' शृंखला की अन्य पुस्तकें

पुस्तक	*लेखक*
कालपी	अयोध्या प्रसाद गुप्त 'कुमुद'
चंबा	सुदर्शन वशिष्ठ
हमारा सहारनपुर	राजीव उपाध्याय 'यायावर'
चंपावत का सांस्कृतिक वैभव	इंद्र लाल वर्मा
सीकर	ओम प्रकाश चल्का
सूर्यदेहा का सूरत और सूरत के हीरे	विजय सेवक
पिथौरागढ़	मोहन चंद्र जोशी
आरानामा	विमल कुमार

जीवनसिंह ठाकुर

- देवास के स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के परिवार में जन्म।
- भारत की सभी पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित, श्रेष्ठ कहानीकार के रूप में स्थापित।
- आकाशवाणी, दूरदर्शन से रचनाएँ प्रसारित।
- शिक्षा में प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय सम्मान प्राप्त।
- कहानी संग्रह, उपन्यास, वैचारिक पुस्तकें तथा शिक्षा संस्कृति पर शोध-पत्र प्रकाशित।
- प्रेमचंद सृजन पीठ, उज्जैन
  (संस्कृति विभाग, मध्य प्रदेश शासन) के निदेशक

सांस्कृतिक स्रोत एवं प्रशिक्षण केन्द्र
(संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार का स्वायत्तशासी संस्थान)
15ए, सेक्टर-7, द्वारका, नई दिल्ली-110075, भारत
दूरभाष: 91-11-25309300, फैक्स: 91-11-25088637
ई-मेल : dir.ccrt@nic.in, वेबसाइट : www.ccrtindia.gov.in